आर.एन.आई. नं. 3653/57
मुद्रण तिथि 5 से 8 जून, 2017
डाक प्रेषण तिथि 10 जून, 2017

वर्ष : 75 अंक : 06
आषाढ़, 2074 मूल्य : 10 रु.

डाक पंजीयन संख्या JaipurCity/413/2015-17
WPP LICENCE NO. JAIPURCITY/WPP-004/2015-17

ISSN 2249-2011

हिन्दी मासिक

जिनवाणी

'अध्यात्म और ध्यान' अंक

75 हीरक वर्ष

एसो पंच णमोक्कारो, सव्व पावप्पणासणो
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
जयपुर

अपने को जानना ही अध्यात्म-विद्या का लक्ष्य है।
छिपे हुए आत्मगुणों एवं आत्म-शक्तियों का जागरण ही ध्यान का लक्ष्य है।

संसार की समस्त सम्पदा और भोग
के साधन भी मनुष्य की इच्छा
पूरी नहीं कर सकते हैं।

- आचार्य हस्ती

आवश्यकता जीवन को चलाने
के लिए जरूरी है, पर इच्छा जीवन
को बिगाड़ने वाली है,
इच्छाओं पर नियंत्रण आवश्यक है।

- आचार्य हीरा

जिनका जीवन बोलता है,
उनको बोलने की उतनी जरूरत भी नहीं है।

- उपाध्याय मान

With Best Compliments :

Rajeev Nita Daga Foundation Houston

जिनवाणी हिन्दी-मासिक

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा कल्याणी।
द्रोह-मोह-छल-मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी'।।

संरक्षक
अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर (राज.), फोन-2636763

संस्थापक
श्री जैन रत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक
विनयचन्द डागा, मंत्री-सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार,
जयपुर-302003(राज.)
फोन-0141-2575997, फैक्स-0141-4068798

प्रधान सम्पादक
प्रो. (डॉ.) धर्मचन्द जैन
सामायिक-स्वाध्याय भवन, प्लॉट नं. 2,
नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)
फोन : 0291-2626279
E-mail : editorjinvani@gmail.com
E-mail : jinvani@yahoo.co.in

सह-सम्पादक
नौरतन मेहता, जोधपुर
डॉ. श्वेता जैन, जोधपुर

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं. 3653/57
डाक पंजीयन सं.-JaipurCity/413/2015-17
WPP Licence No. JaipurCity-004/2015-17
ISSN 2249-2011

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

बहुं खु मुणिणो भद्दं,
अणगारस्स भिक्खुणो।
सव्वओ विप्पमुक्कस्स,
एगंतमणुपस्सओ।।

-उत्तराध्ययन सूत्र, 9.16

है बहुत भद्र उस मुनिवर के,
भिक्षाजीवी अनगारी के।
सकल संग से विप्रमुक्त,
एकान्तरूप सुखधारी के।।

जून, 2017
वीर निर्वाण संवत्, 2543
आषाढ़, 2074

वर्ष 75 अंक 6

सदस्यता शुल्क

त्रिवार्षिक : 250 रु.
20 वर्षीय, देश में : 1000 रु.
20 वर्षीय, विदेश में : 12500 रु.

स्तम्भ सदस्यता : 21000/-
संरक्षक सदस्यता : 11000/-
साहित्य आजीवन सदस्यता- 4000/-

एक प्रति का मूल्य : 10 रु.

शुल्क/साभार नकद राशि 'जिनवाणी' बैंक खाता संख्या SBI 51026632986 IFSC No. SBIN 0031843 में जमा कराकर जमापर्ची (काउन्टर-प्रति) अथवा ड्राफ्ट भेजने का पता 'जिनवाणी', दुकान नं. 182-183 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.)
फोन नं.0141-2575997, फैक्स : 0141-4068798, E-mail:sgpmandal@yahoo.in

मुद्रक : दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर, फोन- 0141-2562929

नोट- यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो।

विषयानुक्रम

'अध्यात्म और ध्यान' अंक

सम्पादकीय-	जिनवाणी की हीरक यात्रा (6)	-डॉ. धर्मचन्द जैन	5
अमृत-चिन्तन-	आगम-वाणी	-विवेचन : डॉ. धर्मचन्द जैन	9
विचार-वारिधि-	ध्यान-योग साधना	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	10
प्रवचन-	ध्यान एवं उसका वैशिष्ट्य	-आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.	11
	मिथ्यात्व के त्याग से ही होती आत्म-शुद्धि	-आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा.	17
	अध्यात्म की यात्रा	-आचार्य महाप्रज्ञ	22
	ध्यान : आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया	-आचार्य डॉ. शिवमुनिजी महाराज	29
	भजन और आध्यात्मिक विकास	-तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.	31
English-Section-	**What Meditation is?**	*-Sh. J.D. Krishnamurti*	28
	Meditation And Its Benefits	*-Shri Shri Ravishankar*	56
अध्यात्म-दर्पण -	चित्त शुद्धि का उपाय	-स्वामी श्री शरणानन्दजी महाराज	37
	सुख-दुःख का कारण कहाँ?	-स्वामी रामसुखदासजी महाराज	39
	आयतचक्खू, आत्मसंयम और तृष्णा	-श्री सत्यनारायण गोयन्का	41
	ध्यान-विषयक जिज्ञासाएँ और समाधान	-श्री कन्हैयालाल लोढ़ा	44
	आत्मस्वरूप का बोध	-डॉ. धर्मचन्द जैन	53
	ध्यान और उसके लाभ	-श्री चौथमल जैन	57
राष्ट्र-सेवा-	बाहर का मैला : जानें भीतर भी फैला	-श्री पी. शिखरमल सुराणा	43
युवा-स्तम्भ-	सजगता से मन की स्वस्थता	-श्री सुन्दरलाल बी. मल्लारा	50
नारी-स्तम्भ-	आध्यात्मिक ऊर्जा के लिए तप की आराधना	-डॉ. नरेन्द्र भानावत	51
शोधालेख-	श्रीमद् राजचन्द्र की दृष्टि में ज्ञान	-श्रीमती प्रीति शाह (डोसी)	60
कविता/गीत-	कलुषित कामनाओं की आग	-डॉ. रमेश 'मयंक'	36
	आत्मानुभूति	-श्री राजमल पवैया	40
	मरण रा दूहा	-डॉ. नरेन्द्र भानावत	52
	चलो मन! एकाकी बढ़ चलो उस पथ पर	-श्रीमती अभिलाषा हीरावत	79
विचार-	सब तुम्हारा है, तुम सबके हो	-जैन किरणभाई जयंतिलाल कामदार	30
	ईर्ष्या को छोड़ें	-डॉ. एन.के. खींचा	49
	जीवनोपयोगी बोल, हैं बड़े अनमोल	-मधुरव्याख्यानी श्री गौतममुनिजी म.	59
	ध्यान की उपयोगिता	-श्री पूनमचन्द मुणोत	62
प्रतियोगिता-	जिनवाणी के अंकों पर प्रतियोगिता	-संकलित	63
बाल-जिनवाणी -	आदर्श श्रावक	-श्री सरदारचन्द भण्डारी	83
	कुसंग का फल	-श्री सुधाकर गोस्वामी	83
	क्रोध चाण्डाल होता है	-श्री यशपाल जैन	83
	सीखो आध्यात्मिक गिनती	-श्री रामनारायण माथुर	84
	अच्छी निद्रा के लिए कीजिए- 1,2,3,4,5	-डॉ. दिलीप धींग	84
	वीर प्रभु से करें प्रार्थना, जीवन का उत्थान हो	-श्री मोहन कोठारी 'विनर'	85
	The Seven Wonders	-संकलित	85
	मम्मी-पापा के साथ कैसे रहना?	-संकलित	86
	Alphabet से सीखें	-श्री हितांश कमलेश मेहता	86
	The Pressure of Anxiety, Jealousy...	*-Miss Anjita Bhandari*	86
	वर्ग पहेली	-संकलित	87
	बाल्यकाल : एक स्वर्णिम अवसर	-श्रीमती कमला सुराणा	88
साहित्य-समीक्षा-	नूतन साहित्य	-डॉ. श्वेता जैन	64
समाचार विविधा-	समाचार-संकलन	-संकलित	65
	साभार-प्राप्ति-स्वीकार	-संकलित	80

सम्पादकीय

जिनवाणी की हीरक यात्रा (6)

❖ डॉ. धर्मचन्द जैन

जिनवाणी, जनवरी 1969 के अंक में श्री नथमल जी हीरावत ने पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी म.सा. के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है- ''आज भौतिकता की आँधी में व्यक्ति तृण की भाँति बहा जा रहा है। उसकी कथनी और करनी में बड़ी खाई पैदा हो गई है। उसे गति तो मिल गई है पर सही दिशा की ओर बढ़ने की विवेक शक्ति उसमें पनप नहीं पायी है। ज्ञान के बोझ से वह दबा जा रहा है। उसके आचरण का धरातल खिसकता नज़र आता है। आज के युग में ऐसे व्यक्ति की महती आवश्यकता है जो ज्ञान और आचार में, कथनी और करनी में, विचार और व्यवहार में एकता लाकर दिग्भ्रमित जनता का सही मार्गदर्शन कर सके। आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. का व्यक्तित्व इन्हीं बिन्दुओं से निर्मित है।''

जैन और बौद्ध श्रावकाचार पर फरवरी 1969 में प्रकाशित आलेख में उपाध्याय श्री प्यारचन्दजी महाराज ने बौद्ध धर्म में प्रतिपादित **पौषध** के सप्रमाण आठ अंग बताये हैं- 1. जीव हिंसा न करना, 2. अदत्तादान (चोरी) न करना, 3. झूठ न बोलना, 4. मद्य न पीना, 5. अब्रह्म का त्याग करना, 6. रात्रि भोजन-विकाल भोजन न करना, 7. फूल माला और सुगन्धित वस्तु का उपयोग न करना और 8. कोमल शय्या पर शयन न करना। जैन परम्परा में प्रतिपादित पौषध व्रत के साथ इन अंगों का मेल खाता है।

हिम्मत सिंह सरूपरया जिनवाणी के वैज्ञानिक लेखक रहे। उनके धर्म और विज्ञान विषय से सम्बद्ध अनेक आलेख प्रकाशित हुए। 'आत्मा और पुद्‌गल' पर उनकी निरन्तर लेखमाला प्रकाशित हो रही थी। यह लेख माला शोधार्थियों के लिए उपयोगी है।

पीपाड़ में 2 जनवरी 1969 को पूज्य आचार्य हस्ती ने अपने जन्मदिन पर फरमाया-''जैनों की सभी सम्प्रदायें दिगम्बर, मन्दिर मार्गी, स्थानकवासी व तेरहपंथी भगवान महावीर द्वारा प्ररूपित सिद्धान्तों को मानने वाली हैं। उन सबके आचार-विचार में समता अधिक है, भिन्नता कम है। अतः उनमें कुछ मतभेद होते हुए भी किसी प्रकार का मन मुटाव या लड़ाई झगड़ा होना वांछनीय नहीं है। '' पूज्य आचार्यप्रवर ने सभी जैन सम्प्रदायों में प्रेम एवं एकता को बढ़ाने के लिए कई सुझाव दिए। इन सुझावों के आधार पर तीन प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित किए गए- 1. **धर्म स्थानों का झगड़ा नहीं किया जाए।** सबके धर्माराधन के लिए उनका निर्माण हुआ है। अतः उन पर किसी जाति या सम्प्रदाय का अधिकार मानना भूल है। 2. व्यक्तिगत आक्षेप के पेम्फ्लेट आदि निकालना निंदनीय है। त्यागी वर्ग में संयम विरुद्ध प्रवृत्ति दिखे तो रुबरू निवेदन करेंगे, उनके अधिकारी को सूचित करेंगे पर **छापाबाजी से समाज का वातावरण दूषित नहीं करेंगे**। 3. सम्प्रदाय परिवर्तन के लिए उत्तेजना नहीं देंगे। यह प्रस्ताव भारत जैन महामण्डल के प्रचार मंत्री श्री रिखबराज जी कर्नावट, जोधपुर ने प्रस्तुत किए। स्वाध्याय सेवा, शराबबंदी, समाज सुधार आदि के सम्बन्ध में श्री रिखबराज कर्नावट का संघ एवं समाज को योगदान रहा। वे अच्छे लेखक, वक्ता एवं कार्यकर्ता थे।

'भारतीय संस्कृति में संगीत कला' विषय पर श्री देवेन्द्रमुनिजी का तथा 'हेमचन्द्र का प्राकृत काव्य : कुमारपाल चरित्र' विषय पर पं. रतनलाल संघवी का आलेख मार्च माह में विशेष पठनीय है। डॉ. भागचन्द जैन का अप्रेल माह में बौद्ध साहित्य में जैन तत्त्व तथा श्री अर्हद्दास दिगे का जैन योग साधना विषयक आलेख शोध परक है। जैन वाङ्मय और संस्कृति के अध्ययन के लिए सागर (मध्यप्रदेश) में अनुसंधानकर्ता स्नातकों को शोध

कार्य में प्रवृत्त करने एवं उनके मार्गदर्शन की दृष्टि से एक 21 दिन का शिविर डॉ. गोकुलचन्द्र जैन के नेतृत्व में आयोजित हुआ। तमिल साहित्यकार संत तिरुवल्लुवर के आराध्य अर्हत् प्रभु के सम्बन्ध में श्री इन्दरराज बैद का आलेख पठनीय है। डॉ. परमेष्ठीदास जैन ने 'आचारांग सूत्र का समालोचनात्मक अध्ययन' जून अंक में प्रस्तुत किया। श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा ने आध्यात्मिक चिकित्सा, लेख माला के सप्तम आलेख में लिखा- ''भय, काम, क्रोध, लोभ, घृणा आदि समस्त मनोभावों से शरीर की आन्तरिक प्रक्रिया प्रभावित होती है और उसके कुछ लक्षण बाहर भी प्रकट होते हैं।'' (जिनवाणी, जुलाई 1969)

जैन परम्परा में नाट्यशास्त्र सम्बन्धी ग्रंथ 'नाट्य दर्पण' पर श्री अगरचन्द नाहटा का महत्त्वपूर्ण परिचयात्मक आलेख प्रकाशित हुआ। पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. द्वारा तैयार किए गए **'पट्टावली प्रबन्ध संग्रह'** पर डॉ. दशरथ शर्मा, प्रो. कल्याणमल लोढ़ा, डॉ फतेहसिंह, डॉ. अम्बा शंकर नागर, डॉ. छविनाथ त्रिपाठी आदि विद्वज्जनों की अच्छी प्रतिक्रिया प्राप्त हुई। इस कृति में लोकागच्छ परम्परा एवं स्थानकवासी परम्परा की पट्टावलियाँ संकलित हैं। नवम्बर 1969 के अंक से जिनवाणी कार्यालय के टेलीफोन नम्बर भी प्रकाशित होने लगे। इस अंक में पूज्य आचार्यश्री हस्तीमलजी महाराज का श्रमण जीवन की उत्कृष्टता हेतु एक महत्त्वपूर्ण आलेख 'साधना के तीन विष' प्रकाशित हुआ, जिसमें साधु के लिए विभूषा, स्त्री-संसर्ग एवं प्रणीत रस भोजन को विष के रूप में प्रतिपादित किया गया है। नागौर में धार्मिक शिक्षण शिविर आयोजित हुआ। न्यायमूर्ति श्री इन्दरनाथ जी मोदी ने समाज में बढ़ती हुई कुरीतियों पर एक आलेख लिखा जिसमें आडम्बर, प्रदर्शन, अपव्यय आदि पर समाज का ध्यान आकर्षित किया गया। आज हमें दशवैकालिक, उत्तराध्ययन आगमों के पद्यानुवाद उपलब्ध हैं। श्री अगरचन्द नाहटा ने अपने आलेख में जैन आगमों के पद्यमय सारांश पर महत्त्वपूर्ण आलेख प्रकाशित किया, जिसमें राजस्थानी एवं गुजराती ढालों और सज्झायों में हुए अनुवाद का जिक्र है।

जनवरी-मार्च 1970 की जिनवाणी 'श्रावक धर्म' विशेषांक के रूप में प्रकाशित हुई, जिसमें श्रावक धर्म का सर्वांगीण विवेचन उपलब्ध है। जुलाई 1970 में श्री चुन्नीलालजी ललवाणी द्वारा भारत के राष्ट्रपति वी.वी. गिरि को यह अंक भेंट किया गया। इस अंक में श्री ज्ञानेन्द्र बाफना ने बीसवीं शती के 37 आदर्श श्रावकों की संक्षिप्त झाँकी प्रस्तुत की है। आचार्य हस्ती की प्रेरक गुरुणी साध्वी धनकंवरजी म.सा. का जीवन परिचय अप्रेल 1970 के अंक में तथा प्रभावकारी महासती छोगाजी का परिचय मई 1970 के अंक में प्रकाशित है। 'आगम साहित्य एक अनुचिंतन' शीर्षक से श्री देवेन्द्रमुनिजी की लेख माला प्रकाशित हुई। साध्वी श्री मैनासुन्दरीजी महाराज के आलेख भी समय-समय पर प्रकाशित होते रहे।

पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म.सा. की **दीक्षा अर्द्धशती** एवं उनके पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. की **दीक्षाशती** के उपलक्ष्य में जनवरी-मार्च 1971 में 'साधना' विषयक विशेषांक प्रकाशित हुआ। साधना में देव, गुरु, सत्संग, शास्त्र, शरीर तथा एकान्त स्थान आदि बहिरंग साधन हैं तथा प्रशान्त मन, ज्ञानावरण का क्षयोपशम, संवेग, निर्वेद, वीर्य आदि आन्तरिक साधन हैं। लगभग 270 पृष्ठों में प्रकाशित इस विशेषांक का प्रथम खण्ड साधना के विवेचन से सम्बद्ध है। द्वितीय खण्ड में आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म.सा. के जीवन-संस्मरण और श्रद्धांजलि-अभिव्यक्ति का समावेश है तो तृतीय खण्ड पूज्य आचार्य श्री हस्ती के जीवन संस्मरण और वन्दनांजलि से पूरित है। **साधना-समारोह** के रूप में 28 से 31 जनवरी 1971 के चार दिन अजमेर में ऐतिहासिक रहे। समारोह को साधनापरक बनाने, व्रत-नियम, त्याग प्रत्याख्यान के संकल्पों से युक्त बनाने का सार्थक प्रयत्न किया गया। साधना समारोह समिति के अध्यक्ष श्री रिखबराजजी कर्नावट, स्वागताध्यक्ष श्री सम्पतमल जी लोढ़ा, मंत्री श्री ज्ञानेन्द्र जी बाफना के संयोजन में यह

साधना समारोह अत्यन्त सफल रहा, जिसमें 196 दम्पती आजीवन शीलव्रती, 229 दम्पती वार्षिक शीलव्रती, 686 मांस त्यागी, 681 मद्य त्यागी, 781 धूम्रपान त्यागी, 106 बारहव्रती, 221 स्वाध्यायी श्रावक तथा 49 स्वधर्मी सहायक बने। स्वाध्याय संघ को प्रतिवर्ष 251 रुपये का सहयोग प्रदान करने वाले 51 श्रावकों ने सहर्ष स्वीकृति प्रदान की। पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. ने दीक्षाशती के अवसर पर अपने गुरुदेव के सम्बन्ध में फरमाया-'आचार्य श्री ज्ञान और क्रिया दोनों के धनी थे। उनके मन में ज्ञान के प्रति आदर था, पर वे ज्ञान को क्रियाशून्य नहीं देखना चाहते थे। उन्होंने संत जीवन का आदर्श प्रस्तुत किया। वे महान् त्यागी-तपस्वी, शान्त, सरल और मधुर स्वभाव से सम्पन्न थे। सम्प्रदाय के भेदभाव की भावना से ऊपर उठे हुए थे। विरोधियों से भी प्रेम करने वाले वे पूजनीय संत थे।''

जुलाई 1971 के अंक में 'जैन शास्त्र में दण्ड विधान' विषय पर आलेख प्रकाशित हुआ। गुलाबपुरा में आयोजित षष्ठ धार्मिक शिक्षण शिविर का विस्तृत विवरण प्रकाशित हुआ। पूज्य आचार्य श्री हस्ती के सान्निध्य में आलनपुर (सवाईमाधोपुर) में 21 मई से 05 जून तक प्राकृत भाषा शिक्षण शिविर आयोजित हुआ, जिसमें 21 शिविरार्थियों ने प्राकृत भाषा का अभ्यास किया। पण्डित मुनिश्री समर्थमलजी महाराज के प्रवचन के अंश 'जीवन निर्माण की बातें' के रूप में प्रकाशित हुए। पूज्य आचार्य श्री हस्ती के मार्गदर्शन में तैयार **'जैन आचार्य चरितावली'** पुस्तक प्रकाश में आई, जिसमें जैन परम्परा का क्रमबद्ध संक्षिप्त इतिहास समाया हुआ है। जर्मन विद्वान् **डॉक्टर हरमन जैकोबी** पर परिचयात्मक आलेख में श्री आसुलाल संचेती ने बताया कि जैकोबी का जन्म सन् 1850 में जर्मनी में हुआ। सन् 1872 में उन्होंने भारतीय ज्योतिष पर शोध प्रबन्ध प्रस्तुत किया। इसके अनन्तर कल्पसूत्र, आचारांग, उत्तराध्ययन और सूत्रकृतांग का अंग्रेजी अनुवाद भी किया, जो सन् 1880 से 1895 के बीच **मैक्समूलर** के सम्पादन में प्रकाशित हुआ। वे प्राकृत अपभ्रंश और जैन साहित्य के प्रकाण्ड वेत्ता थे। उन्होंने सन् 1873-74 तथा 1914 में भारत की यात्रा की। **स्वाध्याय संघ** जोधपुर की ओर से 38 स्थानों पर स्वाध्यायियों ने पर्युषण पर्वाराधना कराई। उस समय स्वाध्याय संघ के संयोजक श्री प्रसन्नचन्द बाफना थे। 31 अक्टूबर को सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की बैठक में **गुणी अभिनन्दन दिवस** मनाने की योजना प्रस्तुत की गई, जिसमें साधक, समाज सुधारक एवं विद्वान को सम्मानित करने का निर्णय किया गया एवं तीन नाम प्रस्तावित हुए- श्री हिम्मतसिंहजी सरूपरया-उदयपुर, श्री चाँदमलजी कर्णावट, श्री कन्हैयालालजी लोढ़ा-केकड़ी। गुणी अभिनन्दन समारोह अक्षय तृतीया को मनाने का निर्णय लिया गया। जिनवाणी के प्रबन्ध सम्पादक का दायित्व श्री प्रेमराज जी बोगावत को सौंप दिया गया, किन्तु कार्यालय श्री हीरावत भवन, बारह गणगौर का रास्ता जयपुर में ही रहा।

भगवान महावीर के **2500 वें निर्वाण महोत्सव** के उपलक्ष्य में अखिल भारतीय वीर निर्वाण साधना समारोह समिति का गठन किया गया, जिसमें न्यायमूर्ति श्री सोहननाथजी मोदी को अध्यक्ष, श्री रिखबराज जी कर्णावट को उपाध्यक्ष, श्री ज्ञानेन्द्रजी बाफना को मंत्री, श्री मुन्नीमलजी सिंघवी को कोषाध्यक्ष मनोनीत किया गया। वीर निर्वाण साधना समारोह समिति ने 2500 मांसाहार त्यागी, 2500 मद्यपान त्यागी, 2500 धुम्रपान त्यागी, 2500 पन्द्रह मिनट के स्वाध्यायकर्ता, 2500 साप्ताहिक सामायिककर्ता के साथ शीलव्रती, खोटा माप तोल त्यागी, स्वाध्यायी, बारह व्रतधारी आदि तैयार करने की भी योजनाएँ बनाईं।

जनवरी से मार्च 1972 का जिनवाणी अंक 'ध्यान-योग : रूप और दर्शन' विशेषांक के रूप में प्रकाशित हुआ। डॉक्टर भानावत के सम्पादन में प्रकाशित विशेषांक पर विद्वानों एवं पाठकों की अच्छी प्रतिक्रियाएँ प्राप्त हुईं। **'जैन धर्म का मौलिक इतिहास'** का प्रथम भाग तीर्थंकर खण्ड प्रकाशित हुआ, जिस पर विद्वज्जनों ने अपनी प्रतिक्रियाएँ व्यक्त कीं। डॉक्टर नेमीचन्द जैन ने अपने अभिमत में कहा-''यों जैन धर्म के इतिहास को

लेकर छुटपुट प्रयत्न हुए हैं, किन्तु इस ग्रन्थ का अपना स्वतंत्र महत्त्व है। इसकी सामग्री प्रामाणिक, विश्वसनीय, व्यवस्थित और वस्तून्मुख है।'' रत्नसंघीय सेवाभावी संत **श्री मगनमुनिजी का** 11 फरवरी 1972 को स्वर्गगमन हो गया। 17 फरवरी को न्यायमूर्ति **श्री इन्दरनाथजी मोदी** कालधर्म को प्राप्त हो गये। राजस्थान उच्च न्यायालय के न्यायाधीश होने के साथ ओसवाल सिंह सभा, स्थानकवासी जैन श्रावक संघ आदि अनेक संस्थाओं के अध्यक्ष रहे। विचक्षण प्रतिभा सम्पन्न, न्यायप्रिय, मानवसेवी, निष्ठावान् मोदी साहब के समय सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल का गठन हुआ तथा वे अपने जीवनकाल तक अध्यक्ष बने रहे। रत्नसंघ एवं आचार्य हस्ती के प्रति उनकी प्रगाढ़ श्रद्धा भक्ति थी। इतिहास समिति के भी वे अध्यक्ष रहे। ध्यान विषयक आलेख विशेषांक के अतिरिक्त अंकों में भी प्रकाशित होते रहे। महासती श्री गुलाबकंवर जी, महासती श्री लालकंवरजी आदि के भी परिचय प्रकाशित हुए। श्री सोहननाथजी मोदी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अध्यक्ष, श्री उमरावमल जी ढढ्ढा उपाध्यक्ष बने। श्री नथमलजी हीरावत मंत्री थे। बहुश्रुत पं. रत्न मुनिश्री **समरथमल जी म.सा.** 17 दिसम्बर 1972 को समाधिमरण को प्राप्त हुए। जिनवाणी में समाचार के साथ विभिन्न स्थानों से प्राप्त शोक प्रस्ताव भी प्रकाशित हुए। पूज्य आचार्यश्री हस्तीमलजी म.सा. द्वारा व्यक्त श्रद्धांजलि की प्रथम पंक्ति इस प्रकार है-'पूज्यः समर्थो मुनिसंघश्रेष्ठः, स्वर्गं गतोऽस्मान् प्रविहाय धीरः।' आगम टीकाकार एवं न्याय-व्याकरण तथा साहित्य के रचनाकार पूज्य **श्री घासीलालजी महाराज** के 3 जनवरी 1973 को हुए स्वर्गगमन पर उन्हें श्रद्धांजलि दी गई- 'श्री घासिलालेत्यभिधो मुनीशो, विभिन्नभाषाकुशलो विधिज्ञः। शमी दमी योगक्रिया-नुरक्तो, जिनागमानां खलु पारदृश्वा।।'

श्री उमेशमुनिजी 'अणु' द्वारा लिखित श्री धर्मदासजी महाराज की जीवनगाथा फरवरी से अप्रेल 1973 के अंकों में प्रकाशित हुई। आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार के व्यवस्थापक जैन इतिहास समिति के मंत्री एवं संघ हितैषी श्री सोहनमलजी कोठारी का 26 मई 1973 को स्वर्गगमन हो गया। पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के इस वर्ष जयपुर चातुर्मास में लगभग **328 अठाई तप** एवं 27 मासक्षपण सम्पन्न हुए। जैन धर्म का मौलिक इतिहास के दूसरे भाग का कार्य लगभग सम्पन्न हुआ। महासती श्री यशकंवरजी म.सा. आदि महासती मण्डल का चातुर्मास भी जयपुर में होने से श्राविकाओं को धर्माराधन में सुविधा रही। 16 नवम्बर 1973 को जयपुर में 'श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान' की स्थापना हुई। सहकारिता मंत्री श्री रामनारायण चौधरी ने उद्घाटन भाषण दिया। मुख्य अतिथि श्री निरंजननाथ आचार्य थे। पूज्य आचार्य हस्ती ने फरमाया कि संस्थान द्वारा शिक्षा, दीक्षा और संस्कार के समन्वित प्रयासों से आदर्श मानव व्यक्तित्व का निर्माण किया जाना है। बोध और शोध दोनों दृष्टियाँ आवश्यक हैं। उस समय श्री चन्द्रराजजी सिंघवी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के मंत्री थे। पूज्य आचार्य हस्ती ने संस्थान की स्थापना से पूर्व एक दिन अपने प्रवचन में फरमाया-''धर्म की उन्नति एवं प्रचार-प्रसार का उपाय है कि धर्म को धर्मशाला में नहीं रख कर जीवन की प्रयोगशाला में लाया जाए।'' अब यह संस्थान 'आचार्य श्री हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान' के नाम से जाना जाता है।

8 से 10 नवम्बर तक सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल का वार्षिक अधिवेशन आयोजित हुआ। जिसमें जनवरी 1974 से 8 पृष्ठ बढ़ाकर आवरण के अतिरिक्त जिनवाणी के 48 पृष्ठ करने का निर्णय किया गया। स्वाध्याय संघ की प्रवृत्तियों को सुचारू रूप से चलाने के लिए एक नई समिति गठित की गई, जिसमें श्री नथमल जी हीरावत को प्रमुख परामर्शदाता एवं श्री सम्पतराज जी डोसी को संयोजक मनोनीत किया गया। राजस्थान में 'पशु-पक्षी बलि निषेध' विधेयक को पारित कराने के लिए 04 नवम्बर 1973 को मुख्यमंत्री श्री हरिदेव जोशी से श्री चुन्नीलाल जी ललवाणी के नेतृत्व में शिष्ट मण्डल ने भेंट की। सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के आय-व्यय का हिसाब भी प्रकाशित होने लगा। **(क्रमशः)**

अमृत-चिन्तन

आगम-वाणी

(दुःख आत्मकृत है, परकृत नहीं)

वित्तं पसवो य णातयो, तं बाले सरणं त्ति मण्णती।
एते मम तेसु वो अहं, नो ताणं सरणं च विज्जइ।।

–सूत्रकृतांगसूत्र, 1.2.3.16

अर्थ– धन-सम्पत्ति, पशु-सम्पदा और ज्ञातिजन को अज्ञानी जीव शरण मानता है। वह समझता है "ये मेरे हैं तथा मैं उनका हूँ।" किन्तु वास्तव में वे कोई त्राणकारी और शरणदाता नहीं होते।

विवेचन– मनुष्य का जिन सजीव एवं निर्जीव पदार्थों से सम्बन्ध रहता है उनसे उसे कुछ आशाएँ जाग जाती हैं। वह उन वस्तुओं से सुख, समृद्धि एवं अनुकूलता की अभिलाषा रखता है। वह इनका अपनी सुरक्षा के लिए अधिकाधिक संग्रह या परिग्रह करने लगता है।

आचारांगसूत्र में इस सत्य तथ्य को बार-बार उद्घाटित किया गया है कि न मैं परिवारजनों का त्राणकर्ता एवं शरणदाता हो सकता हूँ, और न परिवारजन मेरे त्राणकर्ता एवं शरणदाता हो सकते हैं। वहाँ कहा गया है– **"जेहिं वा सद्धिं संवसति ते वा णं णियगा तं पुव्विं पोसेंति, सो वा ते णियगे पच्छा पोसेज्जा, णालं ते तव ताणाए वा सरणाए वा, तुमं पि तेसिं णालं ताणाए वा सरणाए वा।"** (आचारांग, 1.2.1.66) जिनके साथ यह मनुष्य रहता है वे निज जन (परिवारजन) पहले (बाल्यकाल में) पालन-पोषण करते हैं, फिर बड़ा होने पर वह भी अपने परिवारजनों का पालन-पोषण करता है, किन्तु फिर भी वे त्राण करने एवं शरण देने में समर्थ नहीं हैं। तुम भी उनका त्राण करने एवं शरण देने में समर्थ नहीं हो। बाल्यकाल में या किशोरवय में परिवारजन पालन-पोषण करते हैं, किन्तु बच्चों के युवा हो जाने पर वे उनका परिहार करने लगते हैं, बच्चे भी युवा होने पर माता-पिता आदि परिवारजनों का परिहार करने (टालने) लगते हैं। (आचारांग 1.2.1.67) यही नहीं बच्चों के अपने अनुकूल न निकलने पर घर वाले उन्हें भला-बुरा कहने लगते हैं तथा बच्चे भी बड़े होकर माता-पिता आदि को अपने अनुकूल व्यवहार न करने पर उन्हें भला-बुरा कहने लगते हैं। (आचारांग 1.2.1.64 एवं 1.2.1.81) इसलिए यह सच है कि न घर वाले हमारा त्राण कर सकते हैं, न शरण दे सकते हैं तथा न ही हम घर वालों का त्राण कर सकते हैं, न उन्हें शरण दे सकते हैं। उत्तराध्ययन सूत्र के चित्त-सम्भूतीय नामक 13 वें अध्ययन में कहा गया है–

न तस्स दुक्खं विभयंति नाइओ,
न मित्तवग्गा, न सुया, न बंधवा।
एक्को सयं पच्चणुहोइ दुक्खं,
कत्तारमेव अणुजाइ कम्मं।।

चित्तमुनि ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती को सम्बोधित करते हुए कहते हैं कि जब किसी पर दुःख आ पड़ता है तो ज्ञातिजन, मित्रवर्ग, पुत्र और बन्धुजन उसके दुःख को बँटा नहीं सकते हैं। अकेला जीव अपने दुःख को भोगता है, क्योंकि किये गये कर्म कर्ता का अनुसरण करते हैं।

आचारांग एवं उत्तराध्ययन सूत्र के उपर्युक्त वचन हमें तीन तथ्यों की ओर सावधान करते हैं– 1. परिवारजनों अथवा सम्पर्क में आने वाले लोगों के प्रति हमारी आसक्ति नहीं होनी चाहिए, न ही उनसे अधिक आशाएँ एवं अपेक्षाएँ होनी चाहिए। 2. अपने कृत कर्मों का फल स्वयं को भोगना होता है। रोग, दुःख आदि स्वयं को भोगने होते हैं। दूसरा सांत्वना दे सकता है, किन्तु स्वयं का दुःख स्वयं को भोगना होता है। 3. अपने को यह अहंकार नहीं होना चाहिए कि मैं सबका शरणदाता, त्राणकर्त्ता अथवा नाथ हो सकता हूँ। हाँ, एक सीमा तक 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्' सूत्र (तत्त्वार्थसूत्र, 5.21) के अनुसार मैं अन्य जीवों का सहयोगी हो सकता हूँ, किन्तु कृत कर्मों का फलभोग तो व्यक्ति को स्वयं करना होता है।

(शेषांश पृष्ठ 21 पर)

विचार-वारिधि

ध्यान-योग साधना

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा.

- एकान्तवाद को मानने वाला मिथ्यात्वी भी ध्यान की साधना करता हुआ दिखाई देता है और दीर्घकाल तक बाहरी संतोष प्राप्त कर वह अपना समाधिस्थ रूप भी संसार के समक्ष प्रस्तुत करता है। धर्म-ध्यान के सम्बन्ध में जैन-दर्शन की मान्यता यह है कि जब तक किसी प्राणी के अन्तर के अज्ञान की, तीव्र मिथ्यात्व की उपशान्ति नहीं होती एवं सम्यक् ज्ञान की ज्योति नहीं जग पाती, तब तक उस प्राणी को धर्म-ध्यान का अधिकारी नहीं कहा जा सकता।
- भिन्न-भिन्न कोटि के व्यक्तियों के धर्म-ध्यान और साधना के स्तर में बड़ा गहरा अन्तर रहता है। कषाय के तीव्र भाव क्रमशः जितने कम होते जायेंगे और ज्यों-ज्यों धर्म-ध्यान बढ़ता जाएगा, उतना ही वह उच्च से उच्चतर बनता जायेगा और अन्ततोगत्वा वही धर्म-ध्यान शुद्धतम बनकर शुक्ल-ध्यान के रूप में परिणत हो जायेगा। वस्तुतः इसी प्रकार का ध्यान आत्मा का अन्तर्लक्ष्यी ध्यान होता है।
- आर्त्तध्यान आपके मोह कर्म के उदय भाव से होने वाला ध्यान है। जब तक हम आर्त्तध्यान के आश्रित होंगे तब तक रौद्र कषायों के भाव आते रहेंगे, क्योंकि कषायों के प्राबल्य में किसी भी समय रौद्र-ध्यान उत्पन्न हो सकता है। मन में राग-द्वेष क्रोधादि भावों का प्राबल्य होने पर धन, धरा, धामादि के प्रश्न को लेकर बात-बात पर मित्रों, सगे-सम्बन्धियों एवं अन्यान्य लोगों के साथ लड़ाई-झगड़ा करना, दूसरों के लिए बुरा सोचना, दूसरे लोगों के धन, जन एवं प्राणों को हानि पहुँचाने का विचार करना रौद्र ध्यान है। आर्त्तध्यान रागाश्रित है और रौद्र-ध्यान द्वेष-प्रधान है।
- ध्यान का विशद विवेचन आगम और आगमेतर ग्रंथों में है। आज श्रमण समाज में ध्यान का अभ्यास प्रायः नहीं के समान है। इसके लिए विशेष रूप से शिक्षा देनी आवश्यक है। जैन व जैनेतर परम्पराओं से प्रस्तुत विषय पर अनुसंधान कर मौलिक तथ्य प्रकट करना चाहिए और सुनियोजित मार्ग-निर्माण करना चाहिए।
- हमारे तीर्थंकरों की मूर्तियाँ वीतराग मुद्रा में होती हैं। श्वेताम्बर दिगम्बर परम्परा में मुद्रा का जरा अन्तर है। दिगम्बर परम्परा वाले अर्ध निमीलित मुद्रा में ध्यानासन की प्रतिकृति प्रस्तुत करते हैं, तो श्वेताम्बर पूरे खुले नयन की मुद्रा में। जैन तीर्थंकरों का छद्मकाल अधिकांश ध्यान-साधना में ही बीतता है। उसमें प्राणायाम जैसी क्लेश क्रिया नहीं होती। उनकी साधना में मन, वाणी और काय योग की स्थिरता अखण्ड रहती है। जैन दीक्षा में इसी प्रकार के योग की शिक्षा और दीक्षा दी जाती है। जैन दीक्षा का सावद्ययोग प्रत्याख्यान इसी बात का द्योतक है।
- आज भी चालू योग की साधना से इसमें यही अन्तर है कि जैन योग में वृत्तियों के मोड़ बदलने का लक्ष्य मुख्य है। अभ्यास के बल पर जैन साधक अशुभ योग पर विजय पा लेता है। वह शुभ से अशुभ को जीतता है। हमारी समझ में यही जैन योग की दीक्षा है। इस प्रकार की साधना के निरन्तर अभ्यास से अनुभव आने के पश्चात् सविकल्प और निर्विकल्प समाधि रूप सुख की अनुभूति होती है। इसी को सिद्ध योग की दीक्षा कह सकते हैं। इसमें यम-नियम और आसन आदि स्वतः आ जाते हैं। -*'नमो पुरिसवरगंधहत्थीणं' ग्रन्थ से साभार*

ध्यान एवं उसका वैशिष्ट्य

आचार्यप्रवर श्री हस्तीमल जी महाराज

ध्यान की आवश्यकता

संसार के साधारण प्राणी का मन निरन्तर इतस्तत: इतना गतिशील रहता है। वस्तुत: उसकी गति शब्द, वायु और विद्युत से भी अतीव द्रुततर है। मन की इस असीम चंचलता से प्राणी अपना सही स्वरूप भी नहीं जान पाता, पर-पदार्थो को रमणीय समझ कर उनकी प्राप्ति के लिये लालायित रहता है। मन के पौद्गलिक होने के कारण उसका अपने सजातीय विषय-कषाय की ओर यह आकर्षण होना सहज भी है। जिस प्रकार एक अशिक्षित बालक मिट्टी में खेलने का शौकीन होने के कारण मिट्टी में खेलते हुए साथियों को देखते ही उसकी ओर दौड़ लगाता है, ठीक उसी प्रकार मन भी पौद्गलिक होने के कारण शब्दादि विषयों की ओर सहज ही आकृष्ट होता रहता है। वह इन्द्रियों के माध्यम से शब्द, रूप, रस, गंध व नाना प्रकार के सुखद सुरम्य स्पर्शादि को जानता, पहिचानता एवं स्मरण करता हुआ अनुकूल की चाह और प्रतिकूल के विरोध व परिहार में मानव को सदा परेशान करता रहता है। जब तक उसकी चाह पूर्ण नहीं हो जाती तब तक वह राग से आकुल-व्याकुल हो आर्त्त-ध्यान करता और इष्ट प्राप्ति में बाधक को अपना विरोधी समझ उससे द्वेष कर रौद्र रूप धारण करता है।

इस प्रकार राग-द्वेष की आकुलता से मानव-मन सदा अशान्त, क्षुब्ध और दु:खी रहता है। इस चिरकालीन अशान्ति को दूर करने हेतु मन की गति को मोड़ना आवश्यक माना गया है। कारण कि इष्टानिष्ट की ओर मन का स्थिर होना तो अधोमुखी जल प्रपात की तरह सरल है, किन्तु इष्टानिष्ट की चिन्ता रहित मानसिक स्थिरता व स्वस्थता के लिये ध्यान-साधना करना दुष्कर प्रतीत होता है।

ध्यान : स्वरूप और व्याख्या

विषयाभिमुख मन को विषयों से मोड़कर स्वरूपाभिमुख करने की साधना का नाम ही योग अथवा ध्यान है। ध्यान वह साधना है जो मन की गति को अधोमुखी से ऊर्ध्वमुखी एवं बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी बनाने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। जैन शास्त्रों में इसको आन्तरिक तप माना है। ध्यान के बल से विचारों में शुद्धि होती है और उनकी गति बदलती है।

ध्यान की दो दशाएं हैं-प्रथम साधना और दूसरी सिद्ध दशा। साधना दशा के लिये आचार्यो ने आहार-विहार, संग और स्थान की अनुकूलता आवश्यक मानी है। उत्तराध्ययन सूत्र में कहा है कि समाधि के लिए श्रमण प्रमाणयुक्त और निर्दोष आहार ग्रहण करे, गुणवान् मित्र को सहायक बनावे और एकान्त शान्त स्थान पर साधना करे। इसका कारण यह है कि आहार-विहार एवं संग शुद्धि से तन-मन शान्त और स्वस्थ रहता है। जिससे ध्यान की साधना सरलता से होती है। कहा भी है-

युक्ताहारविहारस्य, युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य, योगो भवति दु:खहा।।

अर्थात् उचित आहार-विहार, साध्य के अनुकूल कार्य-सिद्धि में चेष्टाओं, उचित निद्रा तथा जागरण से साधना दु:ख दूर करने वाली होती है। साधनाकाल में ध्यानी के लिये इन साधनों की ओर ध्यान रखना आवश्यक है।

आचार्य हरिभद्र ने भावना, चिन्ता, अनुप्रेक्षा और ध्यान-इस प्रकार ध्यान के चार भाग किये हैं। उन्होंने मित्रा, तारा आदि आठ दृष्टियों का भी विचार किया है। आचार्य शुभचन्द्र और हेमचन्द्र ने पार्थिवी,

आग्नेयी आदि पांच धारणाओं का उल्लेख कर पिण्डस्थ, पदस्थ आदि ध्यान के चार भेद किये हैं। पर आगम साहित्य में इनका वर्णन नहीं मिलता। जैनागम, स्थानांग और भगवती सूत्र में धर्म ध्यान और शुक्ल ध्यान के सोलह-सोलह भेद बतलाये हैं। आवश्यक की हारिभद्रीय वृत्ति में ध्यान का विशुद्ध वर्णन हुआ है। उसमें लक्षण और आलम्बन को भी ध्यान के भेद रूप से बताया गया है।

वैदिक परम्परा में जहाँ आरम्भ से ही 'चित्तवृत्ति-निरोध' को योग या ध्यान माना है वहां जैन शास्त्रों में ध्यान का आरम्भ चित्तवृत्तियों का सब ओर से निरोध कर किसी एक विषय पर केन्द्रित कर उस पर चिन्तन करना माना है।

प्राचीन समय के साधु और श्रावक रात्रि के प्रशान्त वातावरण में धर्म-जागरण किया करते थे। उसमें अनवरत शुभ चिन्तन के माध्यम से मन की रुचि को बदलने का मनोयोग के साथ पूर्ण प्रयास किया जाता और इस प्रक्रिया से मन की रुचि को बदल दिया जाता था। मन की रुचि बदलने से सहज ही दूसरी ओर से मन की गति रुक जाती और इसके फलस्वरूप साधक को अनिर्वचनीय आनन्द और शान्ति की अनुभूति होती। मन की गति में सहज स्थिरता और निर्मलता लाना, यही सहज ध्यान है।

अत: परम तत्त्व के चिन्तन में तल्लीनता मूलक निराकुल स्थिति को प्राप्त कराने वाला ध्यान ही यहां इष्ट है। उसके अधिकारी वे ही जीव होते हैं जो मंदकषायी, जितेन्द्रिय और ज्ञानी हैं। वे ही योग्य 'ध्याता' होते हैं। परम तत्त्व एवं उसकी प्राप्ति का उपाय ही 'ध्येय' और ध्येय के चिन्तन में चित्त की निराकुल स्थिति एवं एकाग्रता की साधना ही 'ध्यान' कहलाती है।

ध्यान की विविध पद्धतियाँ एवं वैराग्य भाव

व्यवहार पक्ष में आजकल जो चार्ट पर काली बिन्दु या ओम् आदि के निशान बना कर ध्यान लगाया जाता है, वह भी ध्यान का एक प्रकार है। अभ्यास के लिए ऐसी अन्य भी विविध पद्धतियाँ हैं। इच्छा शक्ति के विविध चमत्कार भी ध्यान के ही प्रतिफल हैं।

शास्त्रीय परम्परा में जैसे आज्ञा विचय आदि धर्मध्यान के प्रकार से, पदस्थ, पिंडस्थ आदि ध्यान के अन्य प्रकारों से तथा उनके अतिरिक्त कुछ आचार्यों ने कुण्डलिनी जागरण के मार्ग से तो कुछ ने अनहद नाद श्रवण से मन को स्थिर करना बतलाया है। कुछ अनुभवियों ने संसार व्यवहार में उदासीन भाव से रहने के अभ्यास को चित्त की स्थिरता का साधन माना है। व्यवहार में एक अन्य सरल मार्ग अपनाया जाता है जिसमें शरीर और मन को शिथिल कर सुखासन से बैठना या शयनासन से लेटना भी विचार के जंजालों से मुक्त कर समाधि पाने का उपाय है। ये सब अभ्यास काल में साधना के प्रकार मात्र ही हैं, स्थायित्व तो वैराग्य भाव की दृष्टि से चित्त शुद्धि होने पर ही हो सकता है। इसलिये ध्यान के लिए ध्यान-साधना के पश्चात् चिन्तन रूप एकाकी, अनित्य, अशरण आदि चार भावनाओं का चिन्तन आवश्यक माना गया है।

ध्यान की प्राथमिक भूमिका

ध्यान के विषय में विचार करने के लिए ध्याता, ध्येय और ध्यान इन तीन बातों का ज्ञान करना आवश्यक होगा। संसार का प्रत्येक प्राणी अपने प्रिय कार्य अथवा पदार्थ में ध्यानशील होता रहा है। कामी का काम्य पदार्थ में, भोगी का भोग्य पदार्थ में, रोगी का रोग निवारण में, अर्थी का अर्थ साधन में, ज्ञानी का तत्त्व चिन्तन में एवं भक्त का भगवच्चरण में मन डूबा रहना सहज है। अर्थ और काम का चिन्तन कर्मोदयजन्य अर्थात् कर्म (प्रारब्ध) का फल होने के कारण प्रयत्नसाध्य नहीं होता। अर्थ तथा काम के चिन्तन में प्राणी इतना तन्मय हो जाता है कि वह मोहवश हो सुधबुध तक भूल जाता है। फिर भी उसका वह आत्यन्तिक तन्मयतापूर्ण ध्यान किसी भी दशा में उपादेय नहीं माना जाता, क्योंकि वह भवताप बढ़ाने वाला होने के कारण हितकर नहीं अपितु अहितकर होता है।

ध्यान के विषय में जैनागम और जैन साहित्य

में विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है। जैन सूत्रों में, खास कर स्थानांग, भगवती और उववाई में भेद-अभेद सहित ध्यान का वर्णन उपलब्ध होता है। अर्वाचीन ग्रंथों में, हरिभद्र का योग शतक, योगबिन्दु, योग दृष्टि समुच्चय, हेमचन्द्र का योगशास्त्र, शुभचंद्र का ज्ञानार्णव और ध्यान शतक आदि ग्रंथ प्रसिद्ध हैं। इन सबने ध्यान-साधना से पूर्व विषय-कषाय का मंद होना आवश्यक माना है। जो जितेन्द्रिय और उपशान्त कषायी होगा, वही सरलतया ध्यान कर सकेगा। जब तक हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह को त्याग कर साधक काम क्रोध आदि को मंद नहीं कर लेता तब तक वह ध्यान का अधिकारी नहीं होता। अधिकारी के स्वरूप और आसन आदि का विधान करते हुए गीता में श्री कृष्ण ने भी कहा है कि मन एवं इन्द्रियों की वृत्तियों का संयमन कर साधक अनुकूल आसन पर बैठे और मन को एकाग्र कर आत्म शुद्धि के लिए योग का साधन करे। यथा-

तत्रैकाग्रं मन: कृत्वा, यतचित्तेन्द्रियक्रिय:।
उपविश्यासने युंज्यात्, योगमात्मविशुद्धये।।

शब्द शास्त्र के अनुसार 'ध्यै' चिन्तायाम् धातु से 'ध्यातिर्ध्यानम्'- इस व्युत्पत्ति द्वारा ध्यान शब्द की निष्पत्ति हुई है जिसका अर्थ होता है अन्तर्मुहूर्त मात्र तक स्थिरता पूर्वक एक वस्तु के विषय में चिन्तन करना या एकाग्र होना। जैन शास्त्रों में इसी अर्थ में ध्यान-शब्द का प्रयोग हुआ है। चित्तवृत्ति का सम्पूर्ण रूपेण निरोध धर्म-ध्यान में संभव नहीं। यही कारण है कि छद्मस्थ का एक वस्तु पर अन्तर्मुहूर्त काल पर्यन्त स्थिर चित्त रहना ही ध्यान कहा गया है। चित्तवृत्तियों का सम्पूर्ण रूपेण निरोध तो वस्तुत: केवल ज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् ही हो सकता है। जैसा कि कहा है-

अन्तोमुहुत्तमित्तं, चित्तावत्थाणमेगवत्थुम्मि।।
छउमत्थाणं झाणं, जोगनिरोहो जिणाणं तु।।

चतुर्थ गुणस्थान से सप्तम गुणस्थान तक साधक धर्म ध्यान का ही अधिकारी माना गया है। छद्मस्थ द्वारा किया जाने वाला इस प्रकार का धर्म ध्यान सविकल्प होते हुए भी निर्वात स्थान में रखे हुए दीपक की लौ के समान निष्कम्प, निश्चल एवं उसी वस्तु के चिन्तन की परिधि में अडोल होता है।

इस धर्म ध्यान के 4 भेद बताये गये हैं। यथा-

आप्तवचनं प्रवचनमाज्ञा विचयस्तदर्थनिर्णयनम्।
आस्रव- विकथा- गौरव- परीषहाद्यैरपायस्तु।।1।।
अशुभशुभकर्मपाकानुचिन्तनार्थो विपाकविचय: स्यात्।
द्रव्यक्षेत्राकृत्यनुगमनं संस्थानविचयस्तु।।2।।

-स्थानांग टीका, स्थान 4, उद्देशक 1

अर्थात्-(1) आणाविजए-आज्ञा का विचार, (2) अवायविजए-दोष का विचार, (3) विवाग-विजए-कर्म के शुभाशुभ फल का विचार और (4) संठाणविजए-लोक संस्थान का विचार, ये धर्म ध्यान के शास्त्रीय चार प्रकार हैं।

ध्यान का प्रारम्भ

ध्यान का प्रारम्भ भावनाओं से होता है। भावनाएँ चार प्रकार की हैं- (1) एकाक्यनुप्रेक्षा-अर्थात् एकाकी भावना। इस एकाकी भावना में एकत्व की भावना का इस प्रकार चिन्तन किया जाता है :-

एकोऽहं न च मे कश्चित्, नाहमन्यस्य कस्यचित्।
न तं पश्यामि यस्याहं, नासौ भावीति नो मम ।।1।।

अर्थात् मैं एक हूँ। कोई अन्य ऐसा नहीं है जिसे मैं अपना कह सकूँ और न मैं स्वयं भी किसी और का हूँ। मुझे संसार में ऐसा कोई दृष्टिगोचर नहीं होता, जिसका कि मैं कहा जा सकूँ अथवा जिसको मैं अपना कह सकूँ। मैं स्वयं ही अपने सुख-दु:ख का निर्माता हूँ। एकत्वानुप्रेक्षा अर्थात् एकाकी भावना में इस प्रकार आत्मा के एकाकीपन और असहाय रूप का विचार (चिन्तन) किया जाता है।

(2) दूसरी भावना है अनित्यानुप्रेक्षा-अर्थात् शरीर, संपदा आदि की अनित्यता की भावना। इस दूसरी भावना में शरीर और सम्पत्ति आदि की क्षणभंगुरता -एवं अनित्यता पर चिन्तन करना चाहिये कि शरीर के साथ रोग का अपाय है। सम्पदा आपद् का स्थान है, संयोग

वियोग वाला है। जो उत्पन्न होता है वह सब क्षणभंगुर नाशवान् है।

(3) तीसरी भावना है–अशरणानुप्रेक्षा अर्थात् अशरण की भावना। यथा :–

जन्मजरामरणभयैरभिद्रुते व्याधि-वेदना-ग्रस्ते।
जिनवरवचनादन्यत्र, नास्ति शरणं क्वचिल्लोके।।

अर्थात्–जन्म, जरा, मरण के भय से अति बीभत्स, व्याधि और वेदना से संयुक्त एवं संत्रस्त इस असार संसार में जिनवाणी के अतिरिक्त और कोई अन्य इस आत्मा को शरण देने वाला एवं इसकी रक्षा करने वाला नहीं है।

(4) चौथी संसारानुप्रेक्षा अर्थात् संसार भावना में निम्नलिखित रूप से संसार के संबंध में चिन्तन किया जाता है :–

माता भूत्वा दुहिता, भगिनी भार्या च भवति संसारे।
व्रजति सुत: पितृत्वं, भ्रातृतां पुन: शत्रुतां चैव।।

संसारानुप्रेक्षा में इस प्रकार की भावना से चिन्तन किया जाता है कि जीव एक जीव की माता बन कर फिर उसी जीव की पुत्री के रूप में जन्म ग्रहण करता है। फिर कालान्तर में वह उसी जीव की बहन के रूप में और पुन: भार्या के रूप में जन्म ग्रहण करता है। इस संसार में पुत्र कभी जन्मान्तर में पिता के रूप में तदनन्तर भाई के रूप में और कभी किसी जन्मान्तर में शत्रु के रूप में उत्पन्न होता है। इस प्रकार संसार का कोई नाता अथवा सम्बन्ध स्थिर एवं शाश्वत नहीं है। संसार के सभी सम्बन्ध बदलने वाले हैं, अत: किसी के साथ मोह अथवा ममता के बन्धन में बन्ध जाना सिवा मूर्खता के और कुछ नहीं है।

इस प्रकार की इन एकाकी, अनित्य आदि भावनाओं से तन, धन, वैभव आदि को नाशवान और अशरण भावना द्वारा इनको अवश्यंभावी विनाश से बचाने में असमर्थ समझने पर भला बालू की दीवार पर मकान बनाने की तरह उनकी कोई भी ज्ञानी क्यों चाह करेगा?

इस तरह संसार के पदार्थों से मोह कम होने पर मन की दौड़ भी स्वत: ही कम और शनै शनै: समाप्त हो जायेगी। मन की चंचलता कम करने का यह पहला उपाय है।

मन की चंचलता कम करने के पश्चात् आगे की दूसरी प्रक्रिया यह है कि एकत्व भाव, संवर, निर्जरा, धर्म एवं बोधि भाव से मन को परिष्कृत करते हुए यह समझाया जाय कि ओ मन! तेरी श्रद्धा के योग्य इस संसार में केवल एक आत्मदेव के अतिरिक्त और कोई नहीं है। आत्मा और तदनुकूल वृत्ति ही उपादेय एवं हितकर है। मन को यह समझाकर उसे पर-द्रव्य से मोड़ कर आत्मनिष्ठ बनाया जाता है। ज्ञान-बल से सांसारिक (इहलौकिक) पदार्थों को आत्मा से भिन्न पर एवं नश्वर समझ लेने से उनकी ओर का सारा आकर्षण समाप्त हो जाता है। यह ध्यान साधना की पहली कक्षा अथवा भूमिका है।

ध्यान साधना की दूसरी भूमिका में चिन्तन किया जाता है–'किं मे कडं किं च मे किच्च सेसं?'' अर्थात् मैंने क्या-क्या कर लिया है और मुझे क्या-क्या करना अवशिष्ट है आदि।

तीसरी भूमिका में आत्म-स्वरूप का अनुप्रेक्षण कर स्वरूप रमणता प्राप्त हो जाती है और चतुर्थ भूमिका में राग-रोष को क्षय कर निर्विकल्प समाधि प्राप्त की जाती है।

ध्यान से लाभ

ज्ञान की अपरिपक्वावस्था में जिस प्रकार एक बालक रंग-बिरंगें खिलौनों को देखते ही कुतूहलवश हठात् उनकी ओर आकर्षित हो, उन्हें प्राप्त करने के लिये मचल पड़ता है, किन्तु कालान्तर में वही प्रौढ़ावस्था को प्राप्त हो परिपक्व समझ हो जाने पर उन खिलौनों की ओर आंख उठाकर भी नहीं देखता। ठीक उसी प्रकार अज्ञानान्धकार से आच्छन्न मन सदा प्रतिपल विषय-कषायों की ओर आकर्षित होता रहता है, परन्तु जब मन को ध्यान-साधना द्वारा बहिर्मुखी से अन्तर्मुखी बना दिया जाता है तो वही ज्ञान से परिष्कृत मन विषय-

कषायों से विमुख हो अध्यात्म की ओर उमड़ पड़ता है और साधक ध्यान की निरन्तर साधना से अन्ततोगत्वा समस्त ग्रन्थियों का भेदन कर शाश्वत सुखमय अजरामर मोक्ष पद को प्राप्त करता है।

जैन परम्परा की विशेषता

जैन, वैदिक और बौद्ध आदि सभी परम्पराओं में ध्यान का वर्णन मिलता है। वैदिक परम्परा में पवनजय को मनोजय का प्रमुख साधन माना गया है। उन्होंने यम-नियम आदि को ध्यान का साधन मानकर भी आसन, प्राणायाम की तरह इन्हें मुख्यता प्रदान नहीं की है। योगाचार्य पतंजलि ने भी समाधि पाद में मैत्री, करुणा मुदिता और उपेक्षा भाव से चित्त शुद्धि करने पर मन-स्थैर्य का प्रतिपादन किया है। यथा:- "मैत्रीकरुणा-मुदितोपेक्षाणां सुखदुःखपुण्यापुण्यविषयाणां भावना-तश्चित्तप्रसादनम्।" **-योग सूत्र, समाधिपाद, सूत्र 33**

इस प्रकार शुद्धीकरण पूर्वक स्थिरीकरण प्रथम प्रहर में स्वरूप ध्यान सूत्रार्थ के चिन्तन मनन में ही हो सकता है न कि चित्त वृत्तियों के नितान्त निरोध के रूप में।

जैन परम्परा की ध्यान परिपाटी के अनुसार किसी एक विषय पर तल्लीनता से चिन्तन करना ध्यान का प्रथम प्रकार है। इसे सविकल्प ध्यान तथा स्थिरैक भाव रूप ध्यान के दूसरे प्रकार को निर्विकल्प ध्यान कहते हैं। शुक्ल ध्यान में ही ध्यान की यह निर्विकल्प दशा हो सकती है। शरीर की अन्यान्य क्रियाओं के चलते रहने पर भी यह ध्यान निर्बाध गति से चलता रहता है, ऐसा जैन शास्त्रों का मन्तव्य है। सविकल्प ध्यानरूप धर्म ध्यान के आणा विजए, अवाय विजए, विवाग विजए और संठाण विजए-इन चार भेदों का उल्लेख करते हुए बताया जा चुका है कि उनमें क्रमशः आज्ञा, रागादि दोषों, कर्म के शुभाशुभ फल और विश्वाधार भूत लोक के स्वरूप पर विचार किया जाता है तथा निर्विकल्प शुक्ल ध्यान में आत्म-स्वरूप पर ही विचार किया जाता है।

ध्यान के प्रभेद

प्रकारान्तर से ध्यान के अन्य प्रभेद भी किये गये हैं। जैसे- 1. पदस्थ, 2. पिण्डस्थ, 3. स्वरूपस्थ और 4. रूपातीत।

1. पिण्डस्थ ध्यान में-पार्थिवी आदि पंचविध धारणा में मेरुगिरि के उच्चतम शिखर पर स्थित स्फटिक-रत्न के सिंहासन पर विराजमान चन्द्रसम समुज्ज्वल अरिहन्त के समान शुद्ध स्वरूप में आत्मा का ध्यान किया जाता है।
2. दूसरे पदस्थ ध्यान में 'अर्हं' आदि मन्त्र पदों का नाभि या हृदय में अष्टदल-कमल आदि पर चिन्तन किया जाता है।
3. तीसरे रूपस्थ ध्यान में अनन्त चतुष्टय युक्त देवाधिदेव अरिहन्त का चौंतीस अतिशयों के साथ चिन्तन किया जाता है।

   निराकार ध्यान को कठिन और असाध्य समझकर जो साधक किसी आकृति विशेष का आलम्बन लेना चाहते हैं, उनके लिये भी अपने इष्ट गुरुदेव की त्याग-विरागपूर्ण मुद्रा का ध्यान सरल और सुसाध्य हो सकता है। इस प्रकार के ध्यान में वीतराग भाव की साधना करने वाले आचार्य, उपाध्याय अथवा साधु सद्गुरु का ध्यान मुद्रा या प्रवचन मुद्रा में चिन्तन करना भी रूपस्थ ध्यान का ही अङ्ग समझना चाहिये।
4. रूपस्थ ध्यान के स्थिर होने पर अमूर्त, अजन्मा और इन्द्रियातीत परमात्मा के स्वरूप का चिन्तन करना रूपातीत ध्यान कहा जाता है। जैसा कि आचार्य शुभचन्द्र ने कहा है :-

चिदानन्दमयं शुद्धममूर्त्तं परमाक्षरम्।
स्मरेद् यत्रात्मनात्मानं, तद्रूपातीतमिष्यते।।

-ज्ञानार्णव, स.40

इस चौथे-रूपातीत ध्यान में चिदानन्दमय शुद्ध स्वरूप का चिन्तन किया जाता है।

इस प्रकार पिण्डस्थ और रूपस्थ ध्यान को साकार और रूपातीत ध्यान को निराकार ध्यान समझना चाहिये। पदस्थ ध्यान में अर्थ चिन्तन निराकार और अष्टदल-कमल आदि पर पदों का ध्यान करना साकार में अन्तर्हित होता है।

ध्यान से शान्ति

संसार के प्राणिमात्र की एक ही चिरकालीन अभिलाषा है-शान्ति। धन-सम्पत्ति, पुत्र, मित्र और कलत्र आदि बड़ी से बड़ी सम्पदा, विशाल परिवार और मनोनुकूल विविध भोग सामग्री पाकर भी मानव बिना शान्ति के दुःखी एवं चिन्तित ही बना रहता है। बाहर-भीतर वह इसी एक खोज में रहता है कि शान्ति कैसे प्राप्त हो। किन्तु जब तक काम,क्रोध, लोभादि विकारों का अन्तर् में विलय या उन पर विजय नहीं कर लेता तब तक शान्ति का साक्षात्कार सुलभ नहीं। बिना शान्ति के स्थिरता और एकाग्रता नहीं तथा बिना एकाग्रता के पूर्ण ज्ञान एवं समाधि नहीं, क्योंकि ध्यान साधना ही शान्ति, स्थिरता और समाधि का एक मात्र राम बाण उपाय है।

उस शान्ति की प्राप्ति हेतु शास्त्रीय ध्यान पद्धति को आज हमें पुन: सक्रिय रूप देना है। प्रात:काल के शान्त वातावरण में अर्हंत देव को द्वादशवार वन्दन कर मन में यह चिन्तन करना चाहिये-"प्रभो! काम, क्रोध, भय और लोभादि दोषों से आप सर्वथा अलिप्त हैं। मैं अज्ञानवश इन दोषों में से किन-किन दोषों को नहीं छोड़ सका हूँ; मेरे अन्दर कौनसा दोष प्रबल है?"

फिर दोषों से होने वाले अशुभ फलों का विचार कर दोष-निवारण का दृढ़ संकल्प करना, यह जीवन सुधार का चिन्तन रूप ध्यान है।

रूपस्थ ध्यान का सरलता से अभ्यास जमाने हेतु अपने शान्त-दान्त-संयमी प्रिय गुरुदेव का जिस रूप में उन्हें उपदेश एवं प्रवचन करते देखा है, उसी मुद्रा में उनके स्वरूप का चिन्तन करें कि गुरुदेव मुझ पर कृपा कर उपदेश कर रहे हैं आदि। देखा गया है कि अन्तर्मन से गुरु चरणों में आत्म-निवेदन कर दोषों के लिये क्षमायाचना करते हुए परम शान्ति और उल्लास प्राप्त किया जा सकता है।

अपने अनुभव :

एक बार की बात है कि मैं तन से कुछ अस्वस्थ था, निद्रा नहीं आ रही थी। बरामदे में चन्द्र की चांदनी में बाहर बैठा गुरुदेव का ध्यान करते हुए कह रहा था-"भगवन्! इन दिनों शिष्य की सुध-बुध कैसे भूल बैठे हो? मेरी ओर से ऐसी क्या चूक हो गई जो आपका ज्ञान प्रकाश मुझे इन दिनों प्राप्त नहीं हो रहा है? क्षमा करो गुरुदेव! क्षमा करो" कहते-कहते दो बार मेरा हृदय भर आया, नयन छलक पड़े। क्षण भर पश्चात् ही मेरे अन्तर् में एक प्रकाश की लहर उठी और हृदय के एक छोर से दूसरे छोर तक फैल गई। मैं अल्पकाल के लिये आनन्द विभोर हो गया।

दूसरी एक बात नसीराबाद छावनी की है। वहां एक दिन शरीर ज्वरग्रस्त होने से निद्रा पलायन कर रही थी। सहसा सीने के एक सिरे में गहरी पीड़ा उठी। मुनि लोग निद्राधीन थे। मैंने उस वेदना को भुला देने हेतु चिन्तन चालू किया-"पीड़ा शरीर को हो रही है, मैं तो शरीर से अलग हूँ, शुद्ध, बुद्ध अशोक और नीरोग। मेरे को रोग कहाँ? मैं तो हड्डीपसली से परे चेतन रूप आत्मा हूँ। मेरा रोग-शोक-पीड़ा से कोई सम्बन्ध नहीं। मैं तो आनन्दमय हूँ।"

क्षण भर में ही देखता हूँ कि मेरे तन की पीड़ा न मालूम कहाँ विलीन हो गई। मैंने अपने आपको पूर्ण प्रसन्न, स्वस्थ और पीड़ा रहित पाया। देश काल से अन्तरित वस्तु या विषय का भी ध्यान-बल से साक्षात्कार किया जा सकता है।

यह है ध्यान की अनुभूत अद्भुत महिमा।

(जिनवाणी, अप्रेल 1991 से गृहीत)

जिनवाणी पर अभिमत

श्री लाभचन्द जैन

मई का अंक मिला। हीरक वर्ष में पत्रिका का कवर पेज एवं लेख अत्यधिक सराहनीय है। इसके लिये बहुत-बहुत साधुवाद। बाल-जिनवाणी बहुत ही रोचक है। बच्चों के लिये बहुत उपयोगी रहेगी। जीवन की दिशा में प्रकाश-स्तम्भ बनेगी। *-2 र 20, विज्ञान नगर, कोटा-324005 (राज.)*

प्रवचन

मिथ्यात्व के त्याग से ही होती आत्म-विशुद्धि

आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा.

परमश्रद्धेय पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्र जी म.सा. के द्वारा निमाज, जिला-पाली (राज.) में 31 अगस्त, 2016 को दर्शन-दिवस पर फरमाये गये इस प्रवचन का आशुलेखन जिनवाणी के सह-सम्पादक श्री नौरतनमलजी मेहता द्वारा किया गया है।**-सम्पादक**

शाश्वत सुखों में विराजमान सिद्ध भगवन्त, अनन्तज्ञानी अरिहन्त भगवन्त तथा पंचम आरक में भी धर्म तीर्थ को कायम रखने वाले संत भगवन्तों के चरणों में कोटि-कोटि वन्दन।

तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की वाणी में अनेकानेक जिज्ञासाओं के साथ एक प्रश्न है जीव का स्वभाव क्या है? क्या जीव का स्वभाव भटकना है? एक गति से दूसरी गति में जाना जीव का स्वभाव है? एक दुःख से दूसरे दुःख को पाना जीव का स्वभाव है? उत्तर मिलता है यह जीव का स्वभाव नहीं है। अगर यह स्वभाव होता तो सिद्ध भगवन्तों का जीव भी इसी तरह भटकता। सिद्ध भगवन्तों का जीव भटकता नहीं है, इसलिए कहा जा सकता है कि जीव का स्वभाव भटकना नहीं है। फिर, यह भटकाव क्यों?

बात यह है कि कर्म से आबद्ध संसारी जीव को उसका विभाव भटका रहा है। जीव स्वभाव से नहीं भटकता, भटकता है विभाव के कारण से। तीर्थंकर भगवान महावीर ने भटकने के पाँच कारण बताये हैं। आप प्रतिक्रमण में बोला करते हैं- मिथ्यात्व का प्रतिक्रमण, अव्रत का प्रतिक्रमण, प्रमाद का प्रतिक्रमण, कषाय का प्रतिक्रमण और अशुभ योग का प्रतिक्रमण। सीधी भाषा में कहूँ तो कहना होगा- जीव अपनी विपरीत विचारधारा के कारण भटक रहा है। भगवान ने जिन पाँच कारणों का उल्लेख किया, उनमें पहला कारण है- मिथ्यात्व।

अब प्रश्न है- मिथ्यात्व क्या? आपने सम्यग्दर्शन के गुणगान कर लिए, मैं सम्यग्दर्शन की बात नहीं, मिथ्यात्व क्या है पूछता हूँ। आप जवाब नहीं दे रहे हैं। या तो शायद आप डर रहे हैं या बोलना नहीं चाहते। आप जवाब दे सकते हैं, किन्तु संकोच के कारण जवाब नहीं दे रहे हैं।

आप जवाब दें या न दें, मैं ही कह दूँ- भटकने का कारण है 'मिथ्यात्व'। इस तन को नुकसान पहुँचाने वाले कई रोग हैं। ब्लडप्रेशर, हार्ट डीजिज, कैंसर जो इस तन को समाप्त कर सकते हैं। इस तन को समाप्त करने वाले कई ज़हर हैं। टांटिये का ज़हर होता है, बिच्छू का ज़हर होता है, सांप का ज़हर होता है। कुछ ऐसे सांप हैं जिनके काटने के साथ यह जीवन समाप्त हो सकता है। धन को नुकसान पहुँचाने वाले कई कारण हैं। कुछ जेबकतरे हैं, कुछ चोर हैं, लुटेरे हैं, विपरीत राज वाले कुछ लोग भी धन को नुकसान पहुँचा सकते हैं। अग्नि धन को स्वाह कर सकती है, जल भी धन के विनाश का कारण हो सकता है। तन-धन को नुकसान पहुँचाने वाले कई कारण हैं जो स्पष्ट दिखाई देते हैं, किन्तु कुछ कारण हैं जो दिखते भले ही न हों फिर भी होते जरूर हैं। आप जानते हैं संसार में आँख होते हुए भी आदमी को अंधा करने वाला अंधकार है। गुफा में घोर अंधकार है। आँखें होते हुए भी घोर अंधकार में कुछ भी दिखाई नहीं

देता। ये सब नुकसान करने वाले हैं। ये कुछ समय के लिए नुकसान करने वाले हो सकते हैं, किन्तु जन्म-जन्म तक नुकसान करने वाला कोई है तो वह है मिथ्यात्व। दुःख देने वाला मिथ्यात्व है।

भगवान महावीर कह रहे हैं मिथ्यात्व भयंकर विष है। मिथ्यात्व विष है, रोग है, अंधकार है, जन्म-जन्मान्तर को बिगाड़ने वाला है। इसी मिथ्यात्व ने नागश्री को एक-एक नरक में दो बार भटकाया। गजसुकुमाल के सिर पर अंगारे धरवाए। स्वयं भगवान महावीर को सत्ताईस भवों तक नीच गोत्र में जन्मना पड़ा।

ऐसे पचासों दृष्टान्त हैं। स्त्रीवेद, नपुंसक वेद का बंध करवाता है तो वह है मिथ्यात्व। चाहे अनन्तानुबंधी क्रोध हो, मान हो, माया हो, लोभ हो ये सब मिथ्यात्व के कारण से हैं। कोई जीव बिना मिथ्यात्व नरक में नहीं जा सकता, तिर्यंच गति में नहीं जा सकता। नरक तिर्यंच का क्या कहूँ हल्की जाति का देव भी मिथ्यात्व के बंध से होता है।

मिथ्यात्व ने जीव को सित्तर कोटा-कोटि सागरोपम तक भटकाया है, रुलाया है। कोई ऐसी योनि नहीं, कोई ऐसा क्षेत्र नहीं जिसमें मिथ्यात्व के कारण से जीव ने जन्म नहीं पाया। पाप को धाप कर करना मिथ्यात्व ने सिखाया है। भगवान का कथन है- एक दिन बुखार आ जाय तो मानव दवा लिए बिना नहीं रहता। थोड़ी-सी भूख आदमी को सहन नहीं होती। एक बार किसी ने गलत शब्द बोल दिया तो उससे बोलना तो दूर, मुँह तक सामने नहीं करता। छोटे-से अपराध के लिए ऐसा व्यवहार तो फिर मिथ्यात्व के लिए आदमी की क्या सोच होनी चाहिए? कितना जल्दी से जल्दी उससे छुटकारा पाना चाहिए? प्रश्न करूँ क्या आपने मिथ्यात्व को जन्म-जन्म तक दुःख देने वाला समझा है?

सम्यक् दर्शन प्रकाश है। सम्यक् दर्शन मोक्ष प्राप्ति का प्रमाण-पत्र है। सम्यक् दर्शन के विषय में बहुत कुछ कहा गया, आपने बहुत कुछ सुना है, पर मैं मिथ्यात्व के बारे में पूछता हूँ कि मिथ्यात्व क्या? मिथ्यात्व क्यों नहीं छूटता? आप-सब मौन हैं। कोई बात नहीं, उत्तर भी मैं ही दे देता हूँ। तीर्थंकर भगवान महावीर ने पच्चीस प्रकार के मिथ्यात्व कहे हैं। पच्चीस बोल में दस प्रकार के मिथ्यात्व का वर्णन है। मैं आचार्य भगवन्त (पूज्य गुरुदेव श्री हस्तीमलजी महाराज) के शब्दों में कहूँ। भगवन्त ने एक पंक्ति में मिथ्यात्व की परिभाषा दी। भगवन्त के अनुसार-''अपने को पराया मानना और पराये को अपना मानना मिथ्यात्व है।'' भगवन्त की परिभाषा में सारी बात आ गई। इसमें देवगत है, गुरुगत है, धर्मगत भी है। अपना है उसे पराया माना जा रहा है। आपका बच्चा कहीं जा रहा है तो जाते-जाते पिताजी कहते हैं-''बेटा! तू जा तो रहा है, लेकिन पाप से डरना।'' कोई बाप अपने बेटे को क्या यह भोलावन देकर भेजता है कि तू झूठ मत बोलना। हाँ, आप कहते हैं, हमने सुना है कि घर से जाने वाले बच्चे को यह कहने वाले बहुत हैं जो कहते हैं- ''देख! रास्ते में ध्यान रखना। शरीर का पूरा ध्यान रखना। एक-एक बात का ध्यान दिलाने वाले पिता हैं जो यह कहते हैं कि पहुँचते ही समाचार करते रहना।'' पर, कभी किसी ने यह खयाल भी दिया कि-''भगवान ने भूल जे मती। कोई जानवर मरता हो तो उसे बचाना।'' मेरी बात नोट करना- ''सम्यक् दृष्टि व्यक्ति धर्म जाने पर रोता है। धर्म रहना चाहिए, चाहे तन रहे या नहीं, उसकी चिंता नहीं।''

एक मुनिराज को लक्षपाक तेल चाहिए। मुनिराज भिक्षा के लिए निकले। भाग्य से एक घर में तीन घड़े लक्षपाक तेल से भरे हैं। दाता की देने की भावना है, मुनिराज को चाहिए भी, किन्तु ठोकर लगती है और घड़ों से तेल बह जाता है। दाता को तेल बहने का दुःख नहीं होता, किन्तु मुनिराज को

नहीं बहरा पाने का खेद होता है। तेल रहे न रहे, देने की भावना का महत्त्व है।

हर जीव अपने समान चेतना वाला है। उसके दुःख को अपने दुःख की भांति समझें। वस्तुएँ नष्ट होती हैं, वे पर हैं उन्हें अपनी मानना मिथ्यात्व है। शरीर भी आत्मा से भिन्न है, उसे आत्मा मानना मिथ्यात्व है। आत्म-स्वरूप को अपना एवं परस्वरूप को पराया समझें। मैं सीधी-सी बात कहूँ- लोग हैं जो भगवान के नाम से झगड़ते हैं। कोई ब्रह्माजी को भगवान मानता है तो काई शिवजी को। कोई राम को भगवान मानता है तो कोई दूसरे नाम वालों को। अधिकतर लोग अपने-अपने नाम को लेकर झगड़ रहे हैं। ए भगवान म्हारा, ए भगवान थारा। सिक्ख, मुस्लिम, ईसाई, हिन्दू, वैष्णव सबके भगवान अलग-अलग हैं। शास्त्र कह रहा है- भगवान सबके एक हैं। जो निरंजन हैं, निराकार हैं, अनन्त ज्ञानी हैं, अनन्त दर्शनी हैं, वे सब हमारे भगवान हैं, नाम चाहे जो भी क्यों न हो। जिन्हें फिर से जन्म नहीं लेना पड़े, वे सबके भगवान हैं।

गुरु का एक नाम नहीं हो सकता। हाँ, आचरण सबका एक हो सकता है। गुरु कौन? तो जो पाँच समिति-तीन गुप्ति की आराधना करें, वे हमारे गुरु हैं। फिर वह गुरु चाहे श्वेताम्बर हो या दिगम्बर। स्थानकवासी हो या तेरापंथी। जो भी पांच समिति-तीन गुप्ति की आराधना करता है, वह गुरु है। यों देव हो या गुरु नाम से उतना मतलब नहीं। वैसे तेतीस करोड़ देवता हैं। इतने देवों में शीतला माता का नाम है या नहीं? मैंने कभी किसी से पूछा- हिन्दुओं में तेतीस करोड़ देवता हैं, ऐसा कहा जाता है तो क्या उसमें शीतला माता का नाम भी है या नहीं? शीतला माता का नाम नहीं है तो अचपड़ा माता और बोदरी माता का नाम कहाँ से मिलेगा? शीतला माता कहाँ बैठी है तो कहने वाले कहते हैं- ''गधा उसकी सवारी है।''

देव हो या गुरु जिसकी जिस पर श्रद्धा है वह उसे मानता है, परन्तु आत्मा को अपना मानने वाला हरक्षण, हरपल अपने आपको भगवान के पास पाता है। किसी अनुभवी ने ठीक ही कहा-

''ना मैं मन्दिर, ना मैं मस्जिद, ना काशी कैलाश में।
जो मुझको ध्यायेगा मन से मैं हूँ उसके पास में।।
घट का पट तूं खोल रे मनवा, प्रभु है तेरे पास में।
वह नहीं माटी, काठ की मूरत, वह तो है विश्वास में।।''

मैं क्या कहूँ? मैं माटी री मूरत नहीं हूँ। मैं काठ री बणियोड़ी भी कोनी। मैं सोने-चाँदी में नहीं, मैं श्रद्धा में हूँ, विश्वास में हूँ। श्रद्धा है तो ढ़गला भी उसके लिए माता है। आप किसके? आप शरीर के या आत्मा के? अभी आप सामायिक में बैठे हैं इसलिए सही-सही बताना? जिस दिन यह जीव आत्मा को भगवान मानेगा तो फिर आप दूसरों को दुःख देना छोड़ देंगे।

सम्यग्दर्शनी अपनी आत्मा और दूसरे प्राणियों की आत्मा में भेद नहीं समझता। आत्मा सो परमात्मा। झूठ, झूठ है। हिंसा, हिंसा है। मैं आपको घर-बार छोड़ने को नहीं कहता। आप भले घर में रहो, घर में रहते हुए आपको अटूट विश्वास होना चाहिए कि हिंसा 'हिंसा' है। हिंसा में पाप है। झूठ, झूठ है। झूठ बोलना पाप है। अगर आपने हिंसा को हिंसा मान लिया, तो घर में रहते हुए भी आप साधना-मार्ग पर बढ़ सकते हैं। हाथी के हौदे पर मुक्ति हो सकती है तो घर में रहते मुक्ति-मार्ग की ओर गमन क्यों नहीं हो सकता?

मैं कल कह गया- जात-पांत पूछे नहि कोई, हरि का भजे सो हरि का होई। आपने वह दृष्टान्त सुना होगा जिसमें एक चोर को सूली पर चढ़ाने के बाद भयंकर वेदना हो रही थी, उसे प्यास लगी। प्यास भी ऐसी कि वह तड़फने गा। सेठ ने कहा- ''मैं पानी लेकर आता हूँ तब तक तू नमो अरिहन्ताणं, नमो सिद्धाणं बोलते रहना।'' वह भाई

नमो अरिहन्ताणं, नमो सिद्धाणं तो भूल गया पर वह "आणु ताणु कुछ नहीं जाणूं, सेठ वचन प्रमाणु" बोलता गया। सेठ के वचनों पर श्रद्धा थी इसलिए उसकी वहाँ मृत्यु होने पर भावों की शुद्धता के कारण वह देव गति में गया। तिरने वाले के नाम आपने सुने हैं, राम-राम कहने के बजाय मरा-मरा याद रहा। वह मरा-मरा कहते-कहते तिर गया, ऋषि बन गया।

एक छोटा बच्चा है। अभी वह शुद्ध बोलना नहीं जानता। नमो अरिहन्ताणं को नमो अन्रिहंताणं बोलता गया, पर उसके भावों में श्रद्धा थी, इसलिए शुद्ध उच्चारण नहीं बोलते हुए भी उसके कर्म कट रहे हैं। एक आदमी है, जिसके दुपट्टे पर चारों तरफ राम नाम लिखे हुए हैं। राम-नाम का दुपट्टा ओढ़ कर वह यदि चोरियाँ करता है तो वह दुपट्टा तारने वाला नहीं हो सकता। तिरना चाहो तो पाप को छोड़ो। भाटे पर राम नाम लिख कर समुद्र में पत्थर डाले जा रहे हैं, वे पत्थर तिर रहे हैं। कोटा में एक इस्लाम भाई है जो नमस्कार महामंत्र से ज़हर उतारता है। आपको नमस्कार महामंत्र आता है, आप रोज माला जपते हैं लेकिन आपको जैसा विश्वास होना चाहिए वैसा विश्वास नहीं तो वह क्या काम करेगा?

जरूरत है विश्वास जगाने की। एक बार श्रद्धा जग गई तो आप साधना-आराधना करके तिर सकते हैं। एक जीव की दया पालने से सम्यक्त्व प्राप्त हो सकता है। एक सत्य के आचरण से हजारों वर्षों बाद भी हरिश्चन्द्र का नाम याद किया जाता है। आज भी नाम याद है उसके पीछे सत्य का आचरण ही तो कारण है।

आप चाहे जिस धर्म को मानने वाले क्यों न हों, होनी चाहिए अटूट श्रद्धा। आप श्रद्धा जगाइये। मिथ्यात्व का जब तक सेवन रहेगा, श्रद्धा नहीं जगेगी है। श्रद्धा नहीं इसलिए छोटीसी जमीन के लिए कुछ लोग हैं जो भगवान की सौगन्ध खा जाते हैं। गीता पर हाथ रखकर झूठ बोलने वाले हैं। ऐसे भी लोग हैं जो धर्म की सौगन्ध खाते देर नहीं करते, भगवान की सौगन्ध खा जाते हैं, गले की सौगन्ध बात-बात में बोल जाते हैं। मूर्ति पर हाथ रखकर झूठ बोलने वाले हैं। गुरुदेव कहा करते थे-

धरती अखण्ड कवारियां, वर किया कई लाख।
मुसलमान सब गड़ गए, हिन्दू हो गए राख।।

दिल्ली की कुर्सी पर न जाने कितने राजा-महाराजा, बादशाह आए और चले गये, लेकिन वो कुर्सी आज भी वहीं हैं। आज नरेन्द्र मोदी प्रधानमंत्री है तो कल दूसरा उस कुर्सी पर बैठेगा। जब कुर्सी स्थायी नहीं है तो फिर धन देकर, प्रलोभन देकर जीत की क्यों कामना की जा रही है? जो पराया है उस पर विश्वास किया जा रहा है और जो अपना है उस पर ध्यान तक नहीं, तो कहना होगा अभी उसका मिथ्यात्व गया नहीं। मिथ्यात्व दूर कीजिये, सम्यक् श्रद्धा जगाइये। तुलसीदासजी राम-राम करते तिर गए। उन्होंने राम को देखा नहीं सिर्फ नाम के सहारे तिरे, पार हुए। आपने न अरिहन्त भगवान को देखा है न सिद्ध भगवान को, पर अरिहन्त-सिद्ध का नाम श्रद्धा से जपो तो क्या यह तारने वाला नहीं होगा?

जरूरत है श्रद्धा के साथ पाप छोड़ने की। आप दृढ़ संकल्प कर लें कि मुझे पापकर्म से दूर रहना है। मैं घर छोड़ने की बात नहीं करता। हाँ, घर छोड़ सको तो बलिहारी है, नहीं तो एक-एक पाप छोड़ने का प्रयास करें। वह चाहे झूठ नहीं बोलने का संकल्प है या दूसरों के धन को नहीं हड़पने की प्रतिज्ञा है। आप पाप छोड़ने का प्रयास करेंगे तो तिरना सहज हो जाएगा। आप नोट करें- मिथ्यात्व जन्म-जन्म तक दुःख देने वाला, नरक तिर्यंच निगोद में घुमाने वाला, स्त्री नपुंसक वेद का बंध कराने वाला, 70 कोटाकोटि सागरोपम की उत्कृष्टस्थिति

तक संसार में रुलाने वाला, महाकाली रात की तरह भयंकर दुःख देने वाला है। इसकी भयंकरता किन शब्दों में बताई जाय, यही उल्टा चक्र चलाकर अपनों को पराया और परायों को अपना बनाने वाला है, मुख्य को गौण करके घर में लाय (आग) लगने पर रत्न निकालने के बजाय गूदडी की फिकर कराने वाला है। इसी के कारण मानव देव-गुरु-धर्म जैसे तारक तत्त्वों को भूलकर, तन-धन-परिजन रूप धोखा देने वाले पदार्थों के लिए जीवन बर्बाद करने वाला है। अतः बंधुओं परिवार, पड़ोसी, सिपाही, समाज, राज और महाराज से डरने के बजाय पाप को धाप कराने वाले, पाप के बाप मिथ्यात्व से डरो। इसीलिए कहा गया है-

एकतः सकलं पापं, मिथ्यात्वमेकतस्तयोः।
वदन्त्यत्रान्तरं दक्षा, मेरुसर्षपयोरिव।।

अर्थात् सारे पाप एक तरफ और मिथ्यात्व एक तरफ, इन दोनों में विद्वान् मेरु एवं सरसों जितना अंतर कहते हैं।

मिथ्यात्वेन समं पापं, न भूतं न भविष्यति।
विद्यते त्रिलोकेऽपि, विश्वानर्थनिबन्धनम्।।

अर्थात् तीन लोक में भी विश्व में अनर्थ का बंध कराने वाला मिथ्यात्व जैसा कोई भी पाप न हुआ है न होगा।

बड़ा बने रहने की प्रतिष्ठा के इस अहंकार ने 20 बोल की आराधना करने वाले महाबल जैसे महामुनिराज को भी साधु के वेश में बाहर से सरल रखकर भीतर में महा कपटी बनाकर पहले गुणस्थान में ले जाकर स्त्रीवेद का बंध कराया। घर में अपनी प्रतिष्ठा बनी रहे मेरी भूल उजागर न हो, अतः नागश्री को अणगार के पात्र में बहराने को मजबूर किया और इसी मिथ्या अभिमान ने उसे एक-एक नरक में दो-दो बार घुमाकर अनन्त संसार बढ़वा दिया, घुमा दिया। उदाहरण अनेक हैं अतः हर प्रयास से प्रत्येक क्षण पुरुषार्थ करके और धर्म करणी के साथ मिथ्यात्व को तत्काल छोड़ो। ■

(आगमवाणी का शेषांश)

''परस्परोपग्रहो जीवानाम्'' का अर्थ है- जीव एक दूसरे के सहयोगी होते हैं। यहाँ प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब जीव एक दूसरे के उपकारक एवं सहयोगी होते हैं तो उन्हें अन्य जीवों का रक्षक या शरणदाता क्यों न स्वीकार किया जाए? यहाँ पर कहना होगा कि एक सीमा तक कोई निमित्त रूप में सहयोगी हो सकता है, किन्तु स्वयं के सुधार का उपादान कारण व्यक्ति स्वयं होता है। एक सीमा तक बाह्य पदार्थ एवं व्यक्ति सहयोगी होते हैं, किन्तु रोग, दुर्घटना या मृत्यु का जो दुःख होता है उसमें कष्ट व्यक्ति को स्वयं भोगना होता है, कोई उस कष्ट को अपने पर नहीं ले सकता। अनाथीमुनि इसके एक उदाहरण हैं, जिन्होंने अक्षि पीड़ा को भोगते हुए यह अनुभव किया कि कोई इस पीड़ा से उन्हें बचाने में समर्थ नहीं है। यदि व्यक्ति के कर्मफल का भोग कोई अन्य करने लगे, तो सारी व्यवस्था ही गड़बड़ा जाएगी।

वस्तुतः स्वयं के कृत कर्मों का फल स्वयं को भोगना होता है। इसीलिए कहा गया है कि यह धन-धान्य, पशु सम्पदा या परिवारजन हमारी रक्षा नहीं कर सकते। इन्हें रक्षक मानना भ्रांति है। यदि इन्हें रक्षक मानते रहे तो संसार के दुःख से मुक्त नहीं हुआ जा सकता। कहा गया है-''**अत्तकडे दुक्खे नो परकडे।**'' दुःख आत्म कृत है, पर कृत नहीं। तात्पर्य यह है कि जो संसार को शरणभूत मानकर चलता है, वह आत्यन्तिक रूप से दुःख मुक्त नहीं हो सकता। संसार की शरण को छोड़कर जो आत्मशरण में आता है अथवा अरिहंत, सिद्ध, साधु और धर्म की शरण ग्रहण करता है वह ही दुःख मुक्ति का मार्ग प्राप्त करता है एवं उस पर चल कर संसार से मुक्त हो जाता है। संसार में कोई भी ऐसा शरणदाता नहीं हो सकता कि मैं बुरा करता रहूँ और उसका फल प्राप्त करने से दूसरा मुझे बचाता रहे।-**प्रधान सम्पादक**

अध्यात्म की यात्रा

आचार्य महाप्रज्ञ

अध्यात्म की यात्रा भीतर की यात्रा है। अध्यात्म में दो शब्द हैं- अधि+आत्म। 'अधि' का अर्थ है-भीतर। अध्यात्म का अर्थ है-आत्मा के भीतर। आत्मा के बाहर-बाहर हम यात्रा कर रहे हैं। अतीत से करते रहे हैं। बाहर ही बाहर, बाहर ही बाहर। कभी भीतर जाने का अवकाश ही नहीं मिला। हमें सब कुछ वही अच्छा लगता है जो बाहर है। हम मानते हैं कि दुनिया में जो कुछ सार है वह बाहर ही है, भीतर कुछ भी नहीं। बाहर सार है और भीतर वह है जो सार को भोगता है। सार को लेने वाला, ग्रहण करने वाला-भीतर है, परन्तु भीतर में कोई सार नहीं है। यदि भीतर में सार होता तो बाहर से सार लेने की आवश्यकता क्यों होती? भीतर में सार नहीं हैं, असार है, इसीलिए हम बाहर से सार लेकर भीतर भेजते हैं। यही हमारा अनुभव है और इसी अनुभव के कारण हम भीतर में असार मानते हैं, और बाहर में सार मानते हैं। हमने खोज शुरू की कि साक्षात् हो सके। बाहर के कण-कण में सार को खोजा, खोजते रहे हैं। आज भी खोजते हैं। विटामिन्स में सार है, प्रोटीन में सार है, सिनेमाघर और दुकान में सार है। खोज का निष्कर्ष निकाला-सार बाहर है, भीतर नहीं।

हमने जब से भीतर की यात्रा शुरू की, अध्यात्म की यात्रा शुरू की, अपने भीतर चलना प्रारम्भ किया, भीतर देखना शुरू किया तो सारी मान्यता बदल गयी। आज तक का अनुभव परिवर्तित हो गया। 'बाहर में सार है'-यह सर्वथा मिथ्या लगने लगा। 'भीतर में सार है'-यह सर्वथा सत्य प्रतीत हुआ। अनुभव की चिंगारियां उछलीं, स्फुलिंग बिखरने लगे तब इस सत्य का आलोक उपलब्ध हुआ-जो कुछ सार है वह भीतर है, बाहर निस्सार ही निस्सार है। भीतर सार का समुद्र लहरा रहा है और बाहर सार की दो-चार बूंदें बिखरी-सी लगती हैं। कहाँ भीतर में विद्यमान सार का अतुल भंडार और कहाँ बाहर में पड़ा निस्सार का अंबार? दोनों की कोई तुलना नहीं हो सकती। जो सार बनता है, सार की अनुभूति कराता है, जो सार का मूल्य देता है, वह भीतर है। अगर भीतर वाला सो जाए, तो सारा सार असार हो जाए। सार को बनाने वाला, सार का मूल्यांकन करने वाला, सार को स्थान देने वाला जो है, वह परमात्मा, वह देवता भीतर बैठा है, बाहर नहीं है।

'आत्मा के द्वारा आत्मा को देखो'-यह उद्घोष इस बात का सूचक है कि आत्मा में बहुत सार है, उसे देखो। अन्य किसी माध्यम से नहीं, केवल आत्मा के माध्यम से देखो। प्रश्न हो सकता है-इस घोष में दो आत्माएं कहाँ से आ गयी। एक देखने वाली द्रष्ट्रा आत्मा और एक दृश्य बनने वाली आत्मा। दो आत्माएं। कौन देखे? किसे देखें? यह उलझन अस्वाभाविक नहीं है। आदमी का यह स्वभाव है कि वह बांटता जाता है। व्यवसाय के क्षेत्र में बंटवारा है। धर्म और राजनीति के क्षेत्र में बंटवारा है। सभी बंटे हुए हैं और यह सब मनुष्य द्वारा कृत है। उसने आत्मा को भी बांट दिया, दो कर दिया। एक वह, जिसके द्वारा हम देखें और एक वह, जिसको हम देखें। दो आत्माएं बन गईं। यह द्वैध हो गया। यह उलझन जैसी लगती है, पर कोई उलझन नहीं है। यह उलझन तब तक ही प्रतीत होती है, जब तक अध्यात्म की यात्रा प्रारम्भ नहीं होती। इस पथ पर जैसे-जैसे चरण आगे बढ़ेंगे, उलझन सुलझती जाएगी। समाधान होता जाएगा। जब हम अन्तिम बिन्दु पर पहुंचेंगे तब वहाँ समस्या ही नहीं रहेगी। सब स्पष्ट हो जाएगा।

जब हम बाहर ही बाहर देखते हैं तब बाहर के प्रति हमारी आसक्ति इतनी गाढ़ी हो जाती है, इतनी तीव्र

हो जाती है कि हमारी आत्मा 'बहिरात्मा' बन जाती है, अन्तरात्मा नहीं रहती। भीतर से हटकर केवल बाह्य बन जाती है। बाहर का आकार ले लेती है। फिर सारी प्रवृत्ति बाह्य को देखती है। बहिरात्मा का परिणमन होता है, हमारी आत्मा बहिरात्मा बन जाती है।

जब किसी निमित्त से भीतर की यात्रा प्रारम्भ होती है और इस सच्चाई का एक कण, एक लव अनुभूति में आ जाता है कि सार सारा भीतर है, सुख भीतर है, आनन्द भीतर है, आनन्द का सागर भीतर लहरा रहा है, चैतन्य का विशाल समुद्र भीतर उछल रहा है, शक्ति का अजस्र स्रोत भी भीतर है, अपार आनंद, अपार शक्ति, अपार सुख-यह सब भीतर है, तब आत्मा अन्तरात्मा बन जाती है, बाह्य आत्मा का वलय टूट जाता है। बाह्य अनुभूति के स्वर पर आत्मा बहिरात्मा बनती है तो आन्तरिक अनुभूति के स्तर पर आत्मा अन्तरात्मा बनती है। अध्यात्म की यात्रा के स्तर पर आत्मा अन्तरात्मा बन जाती है। तब हमारी परिणति आन्तरिक बन जाती है, अन्तरात्मा का उन्मेष जाग जाता है।

जब हम इससे आगे बढ़ते हैं तब अनुभूति का स्तर बदल जाता है। श्रेय के साथ हमारा सम्बन्ध जुड़ जाता है, शुद्ध चेतना के साथ हम मिल जाते हैं। जिसके साथ सम्बन्ध कटा-कटा सा था, उस विशुद्ध चेतना के साथ पुन: सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। एक छोटा स्रोत अपने मूल स्रोत से मिल जाता है। यह परम आत्मा की स्थिति है। इस स्तर पर आत्मा परमात्मा बन जाती है।

अनुभूतियों के स्वरों के आधार पर आत्मा के तीन रूप बन जाते है-बहिरात्मा, अन्तरात्मा और परमात्मा।

हम इसकी तुलना आज के मनोविज्ञान की भाषा से कर सकते हैं। उसके अनुसार मन के तीन प्रकार हैं- चेतन मन (Conscious mind), अर्द्धचेतन मन (Sub-conscious mind) और अवचेतन मन (Un-conscious mind)।

चेतन मन अर्थात् जागृत मन। यह स्थूल मन है। यह बाहर ही बाहर घूमता है, बाहर को ही देखता है, यह केवल बाहर का बन जाता है। इसे हम बहिरात्मा कह सकते हैं। यह बहिरात्मा की स्थिति का अनुभव है।

अर्द्धचेतन मन भीतर है, बाहर नहीं है। यह भीतर ही काम करता है। यहाँ आत्मा की स्थिति का अनुभव होने लगता है।

जब हम अवचेतन मन में चले जाते हैं, वहाँ आत्मा की मूल स्थिति का अनुभव होने लगता है, मूल स्थिति का दर्शन होता है।

'आत्मा के द्वार आत्मा को देखें;' इसका अर्थ है-उस परम आत्मा की अनुभूति करें, जो उपलब्ध नहीं है। उस स्थिति को उपलब्ध करना और जो वर्तमान की स्थिति है उसे विस्मृत करना, आत्ममय बन जाना ही आत्मा के द्वारा आत्मा को देखना है।

तर्कशास्त्र का कथन है कि दीपक को देखने के लिए दीपक की आवश्यकता नहीं होती, क्योंकि दीपक स्वयं प्रकाशमान है। जो स्वयं प्रकाशी होता है, उसको देखने के लिए दूसरे प्रकाश की जरूरत नहीं होती। सूरज उगा या नहीं-उसे जानने के लिए बिजली जलाने की आवश्यकता नहीं होती और यदि कोई व्यक्ति सूरज को देखने के लिए बिजली जलाए तो वह समझदार नहीं माना जा सकता। सूर्य स्वयं प्रकाशी है।

आत्मा-रूपी सूर्य को देखने के लिए किसी पार्थिव दीपक की जरूरत नहीं है। किन्तु कषायों का अन्धकार, ज्ञानावरण-दर्शनावरण मोह और अन्तराय-इन कर्मो का अंधकार या पर्दा-ये सब बीच में हैं। इन सबको चीरकर परम आत्मा तक पहुंचना कठिन होता है। बहिरात्मा और परमात्मा में बहुत दूरी है। बीच में अनगिनत बाधाएं हैं। सबको तोड़कर आगे चलना श्रमसाध्य कार्य है। ये बाधाएं स्थूल नहीं हैं जो हमें इन आंखों से दिख सकें। ये सूक्ष्म हैं। यदि इन बाधाओं के परमाणुओं को बाहर निकालकर फैलाया जाए तो अनन्त विश्व में भी वे नहीं समा पाएंगे। हमारे भीतर यह अनंत संसार समाया हुआ है। इतना सूक्ष्म है कि हमें उसके

अस्तित्व का कुछ प्रत्यक्ष भान ही नहीं होता, क्योंकि हम सूक्ष्म को देखना जानते ही नहीं। सूक्ष्म को देखने की दृष्टि हमारे पास नहीं हैं, इसीलिए हमें उन सूक्ष्म बाधाओं के अस्तित्व का पूरा भान ही नहीं होता।

अध्यात्म की यात्रा में शुद्ध चेतना का एक दीपक साथ में लें। यह राग-द्वेष के क्षणों से रहित दीपक है। हम राग-द्वेष से रहित क्षणों में जीएं और दीये के साथ-साथ चलते रहें। हम सारी बाधाओं को मिटाने में सक्षम हो जाएंगे, फिर वे बाधाएं चाहे अन्धकार की हों, चट्टानों की हों और मादक मूर्च्छाओं की हों, सबको तोड़कर, चीरकर हम आगे बढ़ते जाएंगे।

धर्म की सबसे बड़ी उपलब्धि है-अध्यात्म की यात्रा। जो धर्म अध्यात्म की यात्रा प्रारम्भ नहीं करता और अपने अनुयायियों से अध्यात्म-यात्रा नहीं कराता, वह धर्म एक प्रकार से छलना है, धोखा है, और यदि उसे अफीम भी कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी।

आज के धार्मिक ने अध्यात्म-यात्रा को भुला दिया, इस महापुण्य यात्रा को विस्मृत कर दिया। धर्म-गुरु कहते हैं-भले आदमी बनो, स्वार्थ को छोड़ परमार्थ में प्रवेश करो, प्रामाणिक बनो, नैतिक बनो, शुद्ध आचरण करो, सबके साथ मैत्री करो, अहिंसा का पालन करो, चोरी मत करो, संतुष्ट रहो। ये बातें अच्छी हैं। किन्तु जब तक परिवर्तन की प्रक्रिया सामने नहीं आती, क्रियान्विति का उपाय सामने नहीं आता, तब तक कहने वाला कहता रहता है, सुनने वाला सुनता रहता है, न कहने वाला थकता है और न सुनने वाला थकता है। यह भी मन बहलाव का साधन बन जाता है। इस प्रकार के उपदेशों से कोई परिवर्तन नहीं होता।

एक चूहा था। एक उल्लू था। दोनों मित्र थे। एक दिन चूहे ने उल्लू से कहा-'मित्र! क्या करूं? बिल्ली बहुत सताती है। उससे सदा भयभीत रहता हूँ। कोई उपाय बताओ।' उल्लू ने कहा-'बहुत अच्छा उपाय बताए देता हूँ। तुम जंगली बिलाव बन जाओ, फिर भय नहीं रहेगा, तुम निर्भय बन जाओगे। बिल्ली तुमसे डरने लगेगी।' चूहा प्रसन्न हो गया। उसने कहा-'उपाय बहुत अच्छा है। पर यह बताओ कि मैं बिलाव कैसे बन सकता हूँ? उल्लू बोला-'मित्र! यह कैसा प्रश्न? क्या सब कुछ मैं करूँ? बिलाव कैसे बना जाता है, तुम बिलाव कैसे बन सकते हो-यह अब तुम्हारा काम है, मेरा काम तो केवल उपाय बताना है। उपाय को काम में लेना तुम्हारा काम है''।

मुझे लगता है कि धर्म के क्षेत्र में भी कुछ ऐसा ही हो रहा है। धर्म के उपदेष्टाओं ने कुछ ऐसा ही किया है। उन्होंने-कहा-'अच्छे बनो। ऐसा करो, ऐसा मत करो। यह करो, यह मत करो।' जब धर्म के उन उपदेष्टाओं को पूछते हैं कि अच्छा कैसे बना जाता है? यह कैसे छोड़ा जाता है? तब वे कहते हैं-'हम तो उपदेशक हैं। हमने कह दिया, अब आपको सोचना है कि उस उपदेश के अनुसार कैसे बनना है।' यह बड़ा अजीब-सा लगता है कि धार्मिक उपदेष्टा यह कहे-'परमार्थी बनो, अहिंसक बनो, सत्यवादी बनो, पर उपाय नहीं बताते। उनकी क्रियान्विति का मार्ग प्रशस्त नहीं करता, कोरी बड़ी-बड़ी बातें प्रस्तुत करता है, तब तक उस धर्म में कुछ भी रूपांतरण होने वाला नहीं है। ऐसे धर्म के प्रति अरुचि या अनास्था होती है तो आश्चर्य ही क्या है? धर्म के प्रति नास्तिकता का मनोभाव, आत्मा और परमात्मा के प्रति नास्तिकता का मनोभाव, अध्यात्म के प्रति नास्तिकता का मनोभाव इन्हीं कारणों से पनपता है। धर्म की निस्सारता का भान होता है। व्यक्ति धर्म से दूर भाग जाता है। धर्म के प्रति उसके मन में घृणा पैदा हो जाती है। आज का युग इस बात का साक्षी है। आज का बुद्धिवादी और विचारक, आज का युवक, धर्म से इसलिए दूर होता जा रहा है कि वह देखता है-धर्म की बातें बहुत बड़ी हैं। वह बड़ी-बड़ी बातें बताता है, करता-धरता कुछ भी नहीं। वह मोहक मदिरा की ऐसी प्याली पिलाता है, जिससे पीने वाला नशे में हो जाता है, बेभान हो जाता है। यह स्थिति धार्मिकों के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। यह उनके लिए भी एक चुनौती है, जो धर्म के धुरंधर हैं, धर्म की धुरा को वहन करने वाले हैं, धर्म-रथ के सारथी हैं, धर्मरथ को आगे बढ़ाने का

दायित्व ओढ़े हुए हैं। या तो वे इस चुनौती को झेलें या फिर बड़ी-बड़ी बातें बनाना छोड़ दें। वे रूपान्तरण की प्रक्रिया प्रस्तुत करें, लोगों को सक्रिय अभ्यास कराएं, उनमें यह विन्यास पैदा करें कि धर्म रूपान्तरण की वैज्ञानिक प्रक्रिया है। उसके पास वह सब कुछ है, जो आदमी को आनंदमय, सुखमय और शांतिमय बना सके। यदि ऐसा हो तो चुनौती का सटीक उत्तर मिल जाएगा।

तीस वर्ष पहले की घटना है। एक दिन आचार्यश्री ने कहा-'हमारे पास इतने लोग आते हैं। सदा भीड़ रहती है। वे दूर-दूर से आते हैं। बड़ी श्रद्धा प्रदर्शित करते हैं, भावना रखते हैं और हमें सब कुछ मानकर चलते हैं। किन्तु हम उन्हें देते क्या हैं? यदि कुछ भी नहीं देते हैं तो क्या हम अपने कर्त्तव्य का पूरा पालन करते हैं? उनकी इतनी भक्ति और श्रद्धा लेते हैं और वापस यदि कुछ भी नहीं देते हैं तो यह उनकी भक्ति और श्रद्धा का शोषण है, अन्याय है।' यह चिन्तन गहरे में गया। इसके परिणामस्वरूप अणुव्रत आन्दोलन ने जन्म लिया। इसके परिणामस्वरूप अध्यात्म की यात्रा ने जन्म लिया। यह सोचा गया, जो भी श्रद्धा प्रदर्शित करते हैं, उनकी श्रद्धा का प्रतिफल उन्हें मिलना चाहिए। उनका जीवन बदलना चाहिए, जीवन की यात्रा बदलनी चाहिए।

मूल प्रश्न है-जीवन कैसे बदले? बदलने का सबसे बड़ा उपाय है-आत्मा को आत्मा के द्वारा देखना। जब तक भीतर में नहीं देखा जाता तब तक बदलाव नहीं होता, रूपान्तरण नहीं होता।

इस प्रसंग में मैं शरीरशास्त्रीय चर्चा करना चाहता हूँ। डॉ. कॉप ने एक पुस्तक लिखी है। उसका नाम है-'ग्लैण्ड्स: दि इनविजिबल गारजियन'। यह पुस्तक लिखने वाला अध्यात्म गुरु नहीं है। वह एक शरीर-शास्त्री है। वह लिखता है-''हमारे भीतर जो ग्रन्थियां हैं, वे क्रोध, कलह, ईर्ष्या, भय, द्वेष आदि के कारण विकृत बनती हैं। जब ये अनिष्ट भावनाएं जागती हैं तब एड्रीनल ग्लैण्ड को अतिरिक्त काम करना पड़ता है। वह थक जाती हैं, और ग्रन्थियां भी अतिश्रम से थककर श्लथ हो जाती हैं।'' अतिरिक्त भार थकान पैदा करता है। बैलगाड़ी पर ज्यादा भार लादोगे तो बैल थक जाएंगे। मोटर पर अधिक भार लादोगे तो इंजन टूट जाएगा, काम नहीं करेगा। यंत्र हो या प्राणी-वह अतिरिक्त भार से थक जाता है।

जब-जब हमारे आवेग और संस्कार जागते हैं तब-तब उन ग्रन्थियों पर अतिरिक्त भार पड़ता है। वे अस्वाभाविक रूप से काम करने लगती हैं। स्राव अधिक होता है। यह अतिरिक्त स्राव अनेक विकृतियां पैदा करता है। ग्रन्थियों की शक्ति क्षीण हो जाती है। परिणामस्वरूप शरीर का सारा संतुलन बिगड़ जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि हम इन आवेगों को रोकें, इन भावनाओं को रोकें, इन पर नियंत्रण करें। आवेगों को समझदारी से समेटें और ग्रन्थियों पर अधिक भार न आने दें। इसका भी उपाय है। वह उपाय है-धर्म।

आज ऐसा धर्म चाहिए जिसके साथ भय जुड़ा हुआ न हो। भगवान् महावीर का वाक्य है-'न भेत्तव्वं' डरो मत। उन्होंने अपने धर्म का प्रारम्भ यहीं से किया। वह धर्म चाहे अहिंसा है, सत्य है, अपरिग्रह है, सबके आगे जो प्रहरी बैठा है, वह है-डरो मत, अभय रहो। उन्होंने कहा-'किसी से मत डरो-बुढ़ापे से मत डरो, बीमारी से मत डरो, मौत से मत डरो, शत्रु से मत डरो।' भय अनेक विकृतियां पैदा करता है। भय से सबसे ज्यादा प्रभावित होती है-एड्रीनल ग्रन्थि।

सब धर्मों का मूल है-अभय। भगवान् महावीर ने कहा-'जो अभय नहीं होता, वह अहिंसक नहीं होता। जो अभय नहीं होता, वह सत्यवादी नहीं होता। जो अभय नहीं होता, वह ब्रह्मचारी या अपरिग्रह नहीं होता। आदमी भय के कारण हिंसा करता है, चोरी करता है, अपरिग्रह का संचय करता है'

शस्त्रों का विकास भय के कारण ही हुआ है। एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र से डरता है। अपने बचाव के लिए वह शस्त्र-निर्माण करता है। जब मनुष्य के मन में भय जागा तब अस्त्रों का आविष्कार हुआ। पत्थरों के शस्त्रास्त्र बने। ज्यों-ज्यों भय बढ़ता गया, शस्त्रों में परिष्कार हुआ और आज हम नवीन, सूक्ष्म और विचित्र शस्त्रों का अंबार लगाए हुए हैं। यह सारा विकास भय के कारण

हुआ है। अणुयुग तक पहुंचाने में भय का हाथ है।

मनुष्य भय के कारण ही हिंसा करता है, दूसरों को मारता है। मनुष्य भय के कारण ही झूठ बोलता है। वह सोचता है-सच कहने से मुझे ये-ये कठिनाइयां सहन करनी पड़ेंगी। बच्चा सोचता है-सच कहने पर पिताजी मारेंगे, पीटेंगे। वह झूठ बोलता है और बच निकलता है। व्यापार में जो कुछ अनियमितताएं चलती हैं, वे सब भय के कारण हैं। परिग्रह और संग्रह के पीछे भी भय की शृंखला जुड़ी हुई है।

भय बुराइयों की जड़ है। भय से मुक्त होना दोषों से मुक्त होना है। इसलिए कहा गया कि आज ऐसे धर्म की जरूरत है जिसके साथ भय जुड़ा हुआ न हो। यह भय भी न हो कि धर्म न करने पर नरक में जाना पड़ेगा। नरक से बचने के लिए यदि कोई धार्मिक बनता है तो वह शुद्ध धार्मिक नहीं बनता।

धर्म के क्षेत्र में जैसे भय ने धार्मिकों में विकृति उत्पन्न की है वैसे ही प्रलोभन ने भी अनेक विकृतियाँ उत्पन्न की हैं। इन दोनों के कारण धर्म की आत्महत्या ही हो गयी। धर्म करो, स्वर्ग मिलेगा, यह मिलेगा, वह मिलेगा। देवांगनाएं फूलमाला लिये खड़ी मिलेंगी। स्वागत होगा। अपार संपत्ति और वैभव, नौकर-चाकर, यान-वाहन प्राप्त होंगे। मन इन प्रलोभनों में लुब्ध हो गया। धर्म की मूल आत्मा विस्मृत हो गयी।

प्रारंभ में ही माताएं अपने बच्चों में भय का संस्कार जमा देती हैं। अरे, ऐसा करोगे तो नरक में जाओगे, नरक मिलेगा। रोज यह सुनते-सुनते बच्चे में भय के संस्कार पनपने लग जाएंगे। वह भीरु बन जाएगा। भय व्यक्ति में हीन भावना पैदा कर देता है। धर्म तो वहाँ से प्रारंभ होता है जहां भय समाप्त हो जाता है। धर्म का एकमात्र उद्देश्य है-निर्जरा 'निज्जरट्ठाए'। उसका एकमात्र लक्ष्य है-पुराने संस्कारों को क्षीण करना। चैतन्य की उपलब्धि धर्म-साधना से ही संभव है। जो चैतन्य को उपलब्ध कराए, पुराने संस्कारों को मिटाए, भय को नष्ट करे, प्रलोभन से ऊपर उठाए, वही धर्म है, वही अध्यात्म है।

प्रश्न यही है कि रूपान्तरण कैसे हो? इसका एकमात्र उपाय है-अर्द्धचेतन मन को सक्रिय करना, जगाना। यह शरीरशास्त्रीय भाषा है। आध्यात्मिक भाषा है-अन्तरात्मा को सक्रिय करना, जागृत करना।

हमारे शरीर में जितनी भी ग्रन्थियां हैं, ग्लैंड्स हैं, वे सब अर्द्धचेतन मन है, सब-कांशियस माइंड है। सारा ग्रंथितंत्र अर्द्धचेतन मन है। यह मस्तिष्क को भी प्रभावित करता है। यह ग्रन्थितंत्र मस्तिष्क से भी अधिक मूल्यवान है। इसे हमें जागृत करना है। यदि इसे सही साधनों के द्वारा जागृत करते हैं तो भय से मुक्ति मिलती है। भय से मुक्त होने का अर्थ है सारी बाधाओं से मुक्त होना। शरीरशास्त्र अभी यह बताने में समर्थ नहीं है कि ग्रंथियों की जागृति के सही साधन क्या हैं? अध्यात्म के पास इसका उत्तर है और यह उत्तर प्रयोगात्मक है।

श्वास-प्रेक्षा, शरीर-प्रेक्षा, आत्म-प्रेक्षा, लेश्याओं का ध्यान-ये सब ग्रन्थियों को सक्रिय करने के साधन हैं। हम चैतन्य केन्द्रों (ग्रन्थियों) पर ध्यान करें, वे सक्रिय होंगे। ज्यों-ज्यों हम उन पर अधिक केन्द्रित होंगे, वे और अधिक सक्रिय होते जाएंगे। उनकी सक्रियता से भय समाप्त होगा, आवेग समाप्त होंगे, एक नया आयाम खुलेगा। नया आनन्द, नई स्फूर्ति, नया उल्लास प्राप्त होगा। एक साधक ने कहा-'मुझे आज ध्यान काल में ऐसा अनुभव हुआ जैसा पहले कभी नहीं हुआ था। ग्रन्थि-विमोचन का यह अनुभव अपूर्व था।' मैंने कहा-'सच है।' इसे 'अपूर्वकरण' कहते हैं। साधना करते-करते दो बार 'अपूर्वकरण' का अनुभव होता है। एक बार जब सम्यग् दृष्टि का पूरा जागरण होता है तब 'अपूर्वकरण' का अनुभव होता है और दूसरी बार जब साधक 'क्षपक श्रेणी' का आरोहण करता है, एक विशिष्ट पथ पर चलना प्रारंभ करता है, ध्यान की विशिष्ट श्रेणी में चढ़ता है, शुक्ल-ध्यान में आरोहण करता है तब 'अपूर्वकरण' का अनुभव होता है। 'अपूर्वकरण' का अर्थ है वह करण जो पहले कभी नहीं हुआ था। 'करण का अर्थ है मनोभाव। ऐसे मनोभाव का जागरण होता है जो पहले कभी नहीं हुआ था।

चैतन्य-केन्द्रों को देखने का प्रयत्न महत्त्वपूर्ण

ही नहीं, अध्यात्म-विकास का एकमात्र साधन है। शरीर-प्रेक्षा को छोटा न मानें। यह न समझें कि शरीर के भीतर क्या देखें? भीतर रक्त है, मांस है, हड्डियां हैं, ग्रन्थियां हैं और स्नायु-मंडल है। इन्हें क्या देखें? क्यों देखें? यदि साधक यही देखेगा तो वह शरीर-प्रेक्षा करता हुआ भी बहिरात्मा ही रह जाएगा। ये शरीर की चीजें हैं। साधक को और गहरे में जाना होगा। उसे इस शरीर के भीतर सूक्ष्म सत्ता का जो प्रकाश है, अरूपी सत्ता का जो आलोक है, चैतन्य की जो जगमगाहट है, उसका अनुभव करना होगा, साक्षात् करना होगा। वह प्रकाश बाहर प्रस्फुटित होने को तैयार है, यदि साधक उसे बाहर लाना चाहे। उसकी तैयारी है, उत्सुकता है किन्तु साधक की उपेक्षा है। वह उसकी उपेक्षा किए जा रहा है। केवल उपेक्षा, उपेक्षा ही उपेक्षा।

एक साधक ने कहा-'जब मैं पहली बार ध्यान करने बैठा, मुझे लगा कि समय निकम्मा बीत रहा है।' एक घंटा यदि कुछ लिखा जाए, काम किया जाए, पढ़ा जाए, भोजन बनाया जाए तो समय की सार्थकता होती है। ध्यान में समय बीतता अवश्य है, पर वह निरर्थक बीतता है। आंखे मूंदकर बैठना कोई काम नहीं कहा जा सकता। काम वही होता है जिसकी निष्पत्ति बताई जा सके। एक घंटा तक रसोई घर में काम किया। उस काम की निष्पत्ति हुई-भोजन की तैयारी। एक घंटा तक पढ़ा। निष्पत्ति हुई-ज्ञान की वृद्धि, तथ्यों की अवगति। एक घंटा ध्यान किया, आंखें बंद रखी, निष्पत्ति कुछ भी नहीं। किसी के पूछने पर ध्यानी क्या बता पाएगा? कुछ नहीं बता पाएगा। जब यह स्थिति है, वास्तविकता है तो ऐसा निरर्थक कार्य क्यों किया जाए? वही कार्य हाथ में लें, जिसकी निष्पत्ति हो, जिसका फल सामने दीखे, दूसरे को बताया जा सके-यह काम किया या इसकी निष्पत्ति यह है, इसकी फलश्रुति यह है।

अनेक शोध-संस्थान हैं, जहाँ हजारों शोधकर्ता विभिन्न विषयों पर शोध कर रहे हैं। संस्थान धनपतियों द्वारा चलाए जा रहे हैं। वे नहीं जानते कि शोध क्या होती है? शोधकर्त्ता हैं विद्वान। वे जानते हैं-शोध का मार्ग कितना टेढ़ा-मेढ़ा है, कितना कंटकाकीर्ण है। दस दिन तक एक शब्द पर रुक गए तो रुक ही गए। उसकी शव परीक्षा करने में उन्हें अनेक दिन बिताने पड़ सकते हैं। शोध-संस्थान के अधिकारी सोचते हैं-यह क्या। एक महीने में इतनी ही पंक्तियां लिखी गयीं? हमारे इतने धन का व्यय हो गया। वे पूछते हैं पंडित से कि आज क्या किया? वह कहता है-कुछ भी नहीं। उस शब्द का सही अर्थ नहीं मिला। गाड़ी अटक गई। आगे नहीं बढ़ सके। अधिकारी सोचते हैं-यह कैसा कार्य? रोज-रोज उसकी निष्पत्ति आनी ही चाहिए। कुछ नहीं हो रहा है। संस्थान को चलाने से क्या लाभ?

आत्मा की शोध करने वाले, खोज करने वाले चलते हैं और चलते जाते हैं। खोजते जाते हैं, कुरेदते जाते हैं, चीर-फाड़ करते जाते हैं। कुछ समय बाद उन्हें लगता है कि यह काम निकम्मा है। जो प्रारंभ नहीं करते, उन्हें भी लगता है कि यह काम निरर्थक है।

शोध धैर्य-सापेक्ष होता है। खोज वही कर सकता है, जो धीर होता है। अधीर व्यक्ति खोज नहीं कर सकता। मुझे अनुभव है और मैं यह निश्चयपूर्वक कह सकता हूँ कि साधना करने वाला प्रत्येक साधक, जो निष्ठापूर्वक साधना करता हैं, वह कुछ-न-कुछ प्राप्त करता ही है। उसे अनुभव होता ही है। जिन्होंने साधना की है, उनमें अध्यात्म की भूख जागती हैं, प्रकाश के स्फुलिंग उछले है और वे प्रकाश से भरे हैं।

अध्यात्म-पथ पर यात्रा करना निरर्थक नहीं है, यह जीवन की सबसे बड़ी सार्थकता है, उपलब्धि है।

श्वास-प्रेक्षा, शरीर-प्रेक्षा, दीर्घश्वास-प्रेक्षा, समवृत्ति श्वास-प्रेक्षा, चैतन्य-केन्द्र-प्रेक्षा, लेश्या-ध्यान, कायोत्सर्ग-ये सारी प्रक्रियाएं हैं रूपान्तरण कीं। उनको काम में लें। एक दिन यह स्पष्ट अनुभव होने लगेगा कि रूपान्तरण घटित हो रहा है। धार्मिक वृत्ति का जागरण हो रहा है, क्रोध और मान छूट रहे हैं, माया-लोभ टूट रहे हैं। उन दोषों से छुटकारा पाने के लिए अलग से प्रयत्न करने की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। वे स्वयं मिटते जाएंगे। उन दोषों को मूलत: नष्ट करने का यही उपाय है।

English-Section

What meditation is?

Sh. J. D. Krishnamurti

Krishnamurti on what meditation is

[J. Krishnamurti had the following dialogue with students at one of his schools in India.]

Krishnamurti: Do you know anything about meditation?

Student: No, Sir.

Krishnamurti: But the older people do not know either. They sit in a corner, close their eyes and concentrate, like school boys trying to concentrate on a book. That is not meditation. Meditation is something extraordinary, if you know how to do it. I am going to talk a little about it. First of all, sit very quietly; do not force yourself to sit quietly, but sit or lie down quietly without force of any kind. Do you understand? Then watch your thinking. Watch what you are thinking about. You find you are thinking about your shoes, your saris, what you are going to say, the bird outside to which you listen; follow such thoughts and enquire why each thought arises.

Do not try to change your thinking. See why certain thoughts arise in your mind so that you begin to understand the meaning of every thought and feeling without any enforcement. And when a thought arises, do not condemn it, do not say it is right, it is wrong, it is good, it is bad. Just watch it, so that you begin to have a perception, a consciousness which is active in seeing every kind of thought, every kind of feeling. You will know every hidden secret thought, every hidden motive, every feeling, without distortion, without saying it is right, wrong, good or bad. When you look, when you go into thought very very deeply, your mind becomes extraordinarily subtle, alive. No part of the mind is asleep. The mind is completely awake.

That is merely the foundation. Then your mind is very quiet. Your whole being becomes very still. Then go through that stillness, deeper, further – that whole process is meditation. Meditation is not to sit in a corner repeating a lot of words; or to think of a picture and go into some wild, ecstatic imaginings.

To understand the whole process of your thinking and feeling is to be free from all thought, to be free from all feeling so that your mind, your whole being becomes very quiet. And that is also a part of life and with that quietness, you can look at the tree, you can look at people, you can look at the sky and the stars. That is the beauty of life.

1. You can't change the past but you can ruin the present, by worrying for the future.
2. Learn, Earn and Return - these are three phases of life.

ध्यान : आत्म-साक्षात्कार की प्रक्रिया

आचार्यप्रवर डॉ. शिवमुनिजी महाराज

'ध्यै चिन्तायाम्' धातु से ध्यान शब्द की निष्पत्ति हुई है जिसका अर्थ होता है चिन्तन करना। **'ध्यानं आत्मस्वरूपचिन्तनम्'** अर्थात् आत्मस्वरूप का चिन्तन करना ही ध्यान है। इसमें ध्याता, ध्यान, ध्येय और संवर-निर्जरा ये चार बातें आती हैं। ध्यान के अभ्यास से आत्म शक्तियाँ विकसित होती हैं, आत्मा की शुद्ध अवस्था प्राप्त होती है, इसीलिये कहा है कि **'अप्पा अप्पम्मि रओ, इणमेव परं हवे झाणं'** अर्थात् आत्मा अपने में तन्मय हो, यही उत्कृष्ट ध्यान है।

ध्यान का महत्त्व

ध्यान धर्म का सार है, धर्म की कुंजी है। जिसने ध्यान को समझा उसने धर्म को समझ लिया। ध्यान को छोड़कर सारे धर्मशास्त्र जान लेने पर भी धर्म को नहीं समझा जा सकता। भगवान् महावीर स्वयं कहते हैं **'संपेहए अप्पगमप्पएणं'** अर्थात् अपनी आत्मा से अपनी आत्मा को देखो। जिसने आत्मतत्त्व को जान लिया उसने सब कुछ जान लिया। आत्मा की जानकारी के बिना ध्यान हो ही नहीं सकता। ध्यान के द्वारा ही आत्मा की अनुभूति हो सकती है। यही कारण है कि भगवान् महावीर ने ध्यान को विशेष महत्त्व दिया है, क्योंकि निश्चयनय की दृष्टि से आत्मा ही ध्यान स्वरूप है। कहा भी है- **'ध्यानमात्मैव निश्चयात्'**। ध्यान आध्यात्मिक शक्तियों को विकसित करके मोक्ष पाने का अभ्यास है। आत्मा की शुद्ध अवस्था को प्राप्त करना, स्वयं को जान लेना, अन्तर के सभी रहस्यों को प्रकट कर लेना ध्यान का लक्ष्य है। ध्यान के द्वारा हम मन व बुद्धि को अनुकूल बना लेते हैं। इसी से आत्मानुभूति होती है।

मानव जब से जन्म धारण करता है तब से वह कुछ न कुछ कार्य करता ही रहता है। वह शान्त नहीं रह सकता, पुरुषार्थ करता ही रहता है। वह पुरुषार्थ करता है धन के लिये, सत्ता के लिए , पद के लिए, सुख के लिए, परिवार के लिए, शिक्षा के लिए, लेकिन इन सब कार्यों से भी महत्त्वपूर्ण कार्य है निज को देखना, स्व-स्वरूप को पहचानना। जड़ और चेतन के संयोग से बने संसार के इस प्रपंच को, मायाजाल को अनुभूति के आधार पर जानने के लिये, निज अस्तित्व की ओर दृष्टि करने के लिए, अन्तर्मुखी होने के लिए ध्यान-साधना आवश्यक है।

ध्यान अपने को जानने के लिए सहजमार्ग है। वह चेतना से सम्पर्क कराता है। जिसने अपने आपको जान लिया, उसने सबको जान लिया। किसी सन्त पुरुष ने कहा है-

देखो अपने आपको, जानो अपने आप।
अपने को जाने बिना, मिटे न भव संताप।।

समस्त चिन्तन का आधार हमारी आत्मा है। शास्त्रकार ने **'चेतनालक्षणो जीवः'** का उद्घोष किया है। चैतन्य सत्ता को आत्मा कहा गया है। वह ज्ञानमय है। यह आत्मा जब विभाव दशा में स्थित रहती है तब संसारी आत्मा कहलाती है और जब शुद्ध दशा में स्थित हो जाती है तो वह चैतन्य सत्ता परमात्मा कहलाती है।

इसके बीच में आने वाला, लुभाने वाला तत्त्व है 'मन'। उसे जब देखने लगते हैं कि उसका अस्तित्व क्या है तो परिज्ञात होता है कि उस मन या अंतःकरण में संकल्प-विकल्प संचित संस्कार हैं, जो जन्म-जन्मान्तरों से हमारे साथ हैं। उन संस्कारों का प्रभाव पड़ता है शरीर पर और शरीर व अंतःकरण दोनों के योग से होती है प्रतिक्रिया राग और द्वेष की। चेतना रूपी दर्पण में यही विभाव दशा झलकती है। हम अंतःकरण व शरीर

के साथ तादात्म्य स्थापित करके अपनी प्रतिक्रिया करते चले जाते हैं। जब हम ध्यान के माध्यम से इन अवस्थाओं को अनुभूति के आधार पर जान लेते हैं तब जागृत होता है भीतर का विवेक। आता है चेतना का जागरण। टूटती है संस्कारों की दीवारें और अनुभव होता है शुद्ध चेतना का प्रकाश। झलक मिलती है शाश्वत सुख की। प्रारम्भ होता है सम्यग्दर्शन और दृष्टि होती है स्व की ओर, प्रारम्भ होती है अन्तर की यात्रा।

शुद्ध चेतना का स्वभाव है- केवलज्ञान, केवल दर्शन, अनन्त सुख और अनन्तवीर्य। हमें ध्यान में अभ्यास करना है केवल जानने व देखने का। पुरुषार्थ इसी में करना है, सारी शक्ति इसी में लगानी है। यदि ऐसा करेंगे तो शाश्वत सुख की अनुभूति के क्षण इसी समय हमें प्राप्त होने लगेंगे। जैसे-जैसे साधना की गहराई में जायेंगे वैसे-वैसे अंतःकरण के संस्कार निर्जरित होने लगेंगे। भीतर से शाश्वत शान्ति, सुख, समता तथा निज स्वरूप का अनुभव होगा और साधक अपने पुरुषार्थ से **अप्पा सो परमप्पा** की अनुभूति कर सकेगा।

(जिनवाणी, नवम्बर 1991 से गृहीत)

सब तुम्हारा है, तुम सबके हो

जैन किरणभाई जयंतिलाल कामदार

तुम्हारा क्या गया, जो तुम रोते हो? तुम क्या लाये थे, जो तुमने खो दिया? तुमने क्या पैदा किया था, जो नाश हो गया? न तुम कुछ लेकर आये, जो लिया यहीं से लिया, यहीं पर दिया।

खाली हाथ आए, खाली हाथ चले। जो आज तुम्हारा है, कल किसी और का था, परसों किसी और का होगा। तुम इसे अपना समझकर मग्न हो रहे हो। बस यह प्रसन्नता ही तुम्हारे दुःखों का कारण है।

जो हुआ, वह अच्छा हुआ, जो हो रहा है, वह अच्छा हो रहा है। जो होगा, वह भी अच्छा होगा। तुम भूत का पश्चात्ताप न करो। भविष्य की चिन्ता न करो। वर्तमान चल रहा है।

क्यों व्यर्थ की चिन्ता करते हो? किससे व्यर्थ डरते हो? कौन तुम्हें मार सकता है, आत्मा न पैदा होती है, न मरती है। न यह शरीर तुम्हारा है, न तुम शरीर के हो। यह अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी, आकाश से बना है और इसी में मिल जायेगा। परन्तु आत्मा स्थिर है, फिर तुम क्या हो? परिवर्तन संसार का नियम है। जिसे तुम मृत्यु समझते हो, वही तो जीवन है। एक क्षण में तुम करोड़ों के स्वामी बन जाते हो, दूसरे ही क्षण में तुम दरिद्र हो जाते हो। मेरा-तेरा, छोटा-बड़ा, अपना-पराया मन से मिटा दो, विचार से हटा दो, फिर सब तुम्हारा है, तुम सबके हो।

-कुंदकुंद नगर सोसायटी, स्वरूप, ब्लॉक नं. 218-219, दूसरी मंजिल, रेलवे क्रोसिंग के पास, बेलदगंवहण-देवलाली-422401, जिला-नाशिक (महा.)

जिनवाणी पर अभिमत

श्री ज्ञानचन्द कोठारी

पिछले कुछ माह से जिनवाणी के अंक में बाल जिनवाणी का अलग से प्रकाशन किया जा रहा है। यह प्रयास युवाओं को धर्म का मर्म जानने के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध हो रहा है। मेरा तो यहाँ तक मानना है कि इस प्रयास से केवल बच्चों को ही नहीं वरन् उन सब का भी ज्ञान बढ़ रहा है, जिनकी आयु तो 60 या इसके भी पार है, परन्तु धर्म के मर्म को समझने में उनका भी बालपन है। ऐसे लोगों को भी इस प्रकाशन से काफी ज्ञान अर्जन हो रहा है। बाल जिनवाणी में वर्ग-पहेली मुद्रण से भी बच्चों तथा बड़ों को जिनवाणी के पुराने अंक को बार-बार एवं एकाग्रचित्त होकर पढ़ना पड़ता है, जिससे ज्ञान बढ़ता है। इस कार्य में आपके प्रयासों के लिए और सम्बन्धित व्यक्तियों का सादर आभार। *-6, सर्वेश्वर नगर, अजमेर (राज.)*

प्रवचन

भजन और आध्यात्मिक विकास

तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा.

तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनि जी म.सा. द्वारा आषाढ़ कृष्णा चतुर्दशी शनिवार 16 जुलाई, 2011 को सामायिक-स्वाध्याय भवन, धर्मनारायण जी का हत्था, पावटा, जोधपुर (राज.) में फरमाए गए प्रवचन का आशुलेखन श्री नौरतन मेहता, सह-सम्पादक, जिनवाणी ने किया है। **-सम्पादक**

भक्ति के रहस्य को हृदयंगम कर, भक्ति के रंग में रंगकर, भक्त से भगवान बनने वाले अनन्त-अनन्त उपकारी वीतराग भगवन्त और वीतराग भगवन्तों द्वारा प्ररूपित इस वीतराग वाणी के अवलम्बन से उसी भक्ति में- उसी भजन में लवलीन बनने वाले संघ के नायक आचार्य भगवन्तों के चरणों में वन्दन के पश्चात्.....।

भजन क्या है? वह कैसे बने? अनुभवियों की भाषा में सेवा, त्याग और प्रेम का नाम है- भजन। हम तो रोज भजन बोलते हैं, सुबह प्रार्थना करते हैं, उनमें ये शब्द सेवा, त्याग, प्रेम तो हमारे ध्यान में नहीं आये। कौनसी सेवा, कौनसा त्याग, किनसे प्रेम। कर्म से सेवा करें, अचाह होकर ममता रहित बन जायें, प्रभु से अपनेपन की अनुभूति करें, तब सिद्ध होता है- भजन।

हम कल गुरुपूर्णिमा के प्रसंग से भक्त के विषय में जान रहे थे। जो विभक्त न हो वह भक्त कहलाता है। वह तो भजन करता ही रहता है। 67 बोल में आया- हृदय की कोमल वृति को विनय कहते हैं। अरिहन्तों का विनय, सिद्धों का विनय, आचार्यों का विनय। चौथे बोल में शुद्धि तीन में आया- विकृत श्रद्धा के निराकरण से शुद्धि होती है। उसके भी 3 भेद बताये- मन से वीतराग देव का, सुगुरु का ध्यान करें, विनय से गुणगान करें और काया से वन्दन करें, नमस्कार करें। उत्तराध्ययन 30.32 में भक्ति को भी विनय के अन्तर्गत कहा। अध्ययन 20.58 एवं 29.4 में भी यह शब्द आया है।

हम जिस अध्यात्म की चर्चा कर रहे हैं, उसमें वीतराग वाणी का प्रत्येक विधान आध्यात्मिकता को पुष्ट करने वाला है। आप यहाँ निस्सिही ...निस्सिही बोलकर आते हैं तब बाहरी चीजों को गौण करते हैं तथा आत्म-साधना करने के लिये उपाश्रय में प्रवेश करते हैं। बाहर से भीतर में आना अर्थात् भजन करना। बाहर का कितना भी क्यों न मिले, जीव की इच्छाएं पूरी हुई नहीं, होगी नहीं। वह चाहे चक्रवर्ती सम्राट बने, इन्द्र बने अहमिन्द्र बने इससे इच्छाएं पूर्ण नहीं होंगी। नौ ग्रेवेयक तक जीव अनन्त बार, 5 अनुत्तरविमान के 10 भेदों को छोड़कर जीव के 563 भेदों में से 553 भेदों में कोई भेद बचा नहीं जहाँ पर इस जीव ने जन्म-मरण नहीं किया है।

रंगभूमिर्न सा काचित् शुद्धा जगति विद्यते।
विचित्रैर्कर्मनैपथ्यैर्यत्र जीवैर्न नाटितम्।।

संसार की रंगभूमि में ऐसी कोई जगह नहीं, जहाँ कर्मों के कारण जीव ने नाटक न किया हो। भगवती सूत्र शतक 12 उद्देशक 7-दृष्टान्त रूप से बता रहा है। कोई बकरियों के बाड़े में बकरियों को ठूंस-ठूंसकर भरे। बाड़े में क्षमता से ज्यादा बकरे भर दिये जायें, छः महीने तक बकरे वहाँ रह गये, उस बकराशाला में वहाँ काम करने वाले से पूछें- क्या इस बकराशाला में कोई ऐसी जगह है जहाँ बकरों की मींगणी नहीं पड़ी हो।

इस जग के प्रदेशों में नहीं एक भी बच पाया,
मृत्यु जिनपे हैं अनन्त, यह जीव न कर आया,
और कालचक्र का भी, नहीं वक्त एक खाली,
आत्म का हितकारी, संयम है सुखकारी,
पथ मुक्ति श्रेयकारी, दीक्षा है दुःखहारी।।

पुनर्जन्म को लेकर कई मान्यताओं में अन्तर है। ईसाई पुनर्जन्म नहीं मानते। मुस्लिम मान्यता में पुनर्जन्म नहीं होता। पर ईसाई और मुसलमान भी अप्रत्यक्ष रूप से पुनर्जन्म का समर्थन कर बैठते हैं। बचपन में सांसारिक पिताश्री के साथ रेलगाड़ी में यात्रा का एक प्रसंग। वे पुनर्जन्म को नहीं स्वीकारते, पर फिर भी सांसारिक पिताश्री की ईसाई पादरी से चर्चा हुई तो ज्ञात हुआ कि वे हैल एण्ड हैवन की बात करते हैं। Day of Judgement की चर्चा करते हैं। क़ब्रों में से रूहों को निकालकर उनके कर्मों (Deeds) के अनुरूप स्वर्ग-नरक में भेजने का विवेचन प्रस्तुत करते हैं- यह पुर्नजन्म नहीं तो और क्या है? मुसलमान भी बोलते हैं कयामत का दिन। वे जन्नत और दोजख को मानते हैं। कान को सीधा नहीं पकड़कर घुमा कर पकड़ते हैं।

भगवती सूत्र स्पष्ट कर रहा है- णत्थि केइ परमाणुपोग्गलमेत्तेवि पएसे जत्थ णं अयं जीवे ण जाए वा ण मए वावि....। परमाणु पुद्गलमात्र भी कोई ऐसा प्रदेश नहीं है जहां यह जीव उत्पन्न न हुआ हो अथवा मृत्यु को प्राप्त न हुआ हो।

आचारांग सूत्र कह रहा है- सबसे पहले यह जब तक भरोसा नहीं जगेगा कि मैं कहाँ से आया हुआ हूँ, तब तक अन्तर की चेतना, चिन्मयता प्रतीत नहीं होगी। आदमी सोचता है- खाओ, पीओ, मौज करो। Eat, Drink & be Marry यह बात बचपन में सुनी थी। आज Drink, Dance & Dinner नामकरण हो गया है।

दुनियाँ में एक छत्र राज्य चलता है तो चलता है चार्वाक दर्शन का। बैंक से लोन लो, फैक्ट्री में मशीन के फर्जी बिल लो, फिर कुछ दिनों में सारा चौपट कर भाग जाना। 1996 में एक घोटाले का पर्दाफाश हुआ जिसमें लोगों से प्रभावशाली ब्याज दर पर धन एकत्र किया गया। जमा करने में 100 रुपये पर 30 रुपये का खर्चा। एजेन्टों को, बिचोलियों को कमीशन आदि दिए गए। 100 रुपये जमा पर ऊँचे ब्याज का प्रलोभन होने से खूब रुपये जमा हुए। परिणाम क्या होना था, दिख ही रहा था- सब कुछ लेकर, रफूचक्कर। यह वीतराग दर्शन तो नहीं। नाम से वह भले ही जैन हो, पर यह तो चार्वाक दर्शन का ही अनुसरण है।

यावत् जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।
भस्मीभूतस्य देहस्य पुनरागमनं कुतः।।

भोगी और दुराचारी हृदयहीन होते हैं, वे निर्दय और हिंसक बन जाते हैं। ऐसे व्यक्ति भजन के अधिकारी नहीं। क्या हो रहा है शादियों में? शादी की वर्षगांठ पर प्रदर्शन, दिखावा, आडम्बर कितना हो रहा है। पाँच-पाँच लाख रुपये बिसलरी पानी पर खर्च हो जाते है। हरी लॉन, लाइटिंग, 100-125 तरह की खाद्य सामग्री। यह वीतराग दर्शन है या चार्वाक दर्शन? अनेक लोगों ने जो रेलवे से रिटायर हो गये थे, अपने जीवन भर की पूँजी लगाई, वे सब कंगाल हो गये। पुलिस विभाग में हत्या, डकैती, लूटमार, मारकाट के जितने भी केस आते हैं उनमें गुप्तचर प्रायः जैन को दोषी नहीं मानते, दूसरे-दूसरे लोगों पर शक जाता है। बड़े शर्म के साथ कहना पड़ता है कि पुलिस विभाग के बड़े अधिकारी कहते हैं हत्या, डकैती, लूटमार में जैन पर कभी हमारी दृष्टि नहीं जाती, पर जहाँ भी आर्थिक क्राइम होता है सबसे पहले हमारी नज़र जैन पर पड़ती है। क्यों? यह जैन की बुद्धि का दुरुपयोग नहीं है क्या? वह वीतराग है उपासक या चार्वाक उपासक?

बुद्धि ताहि सराहिये, जो सेवे जिन धर्म।
वा बुद्धि किण काम की, बैठा बांधे कर्म।।

यह जैन समाज पर लांछन है। प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक साधक अपने जीवन में तय कर ले कि हम जिस भजन या आचारांग सूत्र की बात कर रहे हैं वह आस्तिकता की परिचायक है। कहीं से मैं आया हूँ। शरीर तो यहीं बना है। वह शरीर से अतीत है और सच्चा भजन आस्था, श्रद्धा, विश्वास होने पर ही हो सकता है। बाहर में जो भी हमारे साथ हो रहा है, वह हमारे साथ घटित हो रहा है।

पहला उद्घोष है आस्था, श्रद्धा, विश्वास। आत्मा है 'अटति पर्यायात् पर्यायान्तरं गच्छति इति आत्मा' एक पर्याय से दूसरी पर्याय को प्राप्त होती है आत्मा। वह तो सिद्ध भगवन्त की भी होगी, पर वह द्रव्यात्मा उपयोगात्मा, दर्शनात्मा और ज्ञानात्मा स्वरूप है। उसके लिये ही हम भजन की बात से चर्चा को प्रारम्भ कर चुके हैं। उत्तराध्ययन सूत्र, अध्ययन 2 गाथा 44-45 में परमात्मा के सम्बन्ध में कहा है-

अभू जिणा अत्थि जिणा अदुवा वि भविस्सइ।
मुसं ते एवमाहंसु इइ भिक्खू ण चिंतए।।

परमात्मा पर शंका, आत्मा पर शंका उचित नहीं। किसने देखा जिनेश्वर थे, जिनेश्वर हैं अथवा जिनेश्वर होंगे? इस तरह भिक्षु शंका न करे। कौन जानता है? ये शंकाएं व्यर्थ हैं, क्योंकि कर्म का फल सबको मिलता है। कोई बोलता है कयामत का दिन, इन्साफ का दिन, Day of Judgement, नरक-स्वर्ग में भेजने की बारी-

करम प्रधान विश्व करी राखा।
जो जस करही सो तस फल चाखा।।

-भजन कब बनेगा? आस्था श्रद्धा विश्वास होगा तब। आचारांग क्या कह रहा? कहां से आया? पूर्व से, दक्षिण से, पश्चिम से या उत्तर से- क्यों आया कषाय आत्मा, योग आत्मा है इसलिये आया। 'कर्मविज्ञान' पुस्तक में एक दृष्टान्त है-

साबरमती, अहमदाबाद में डिस्ट्रिक्ट एण्ड सैशन जज थे। रोज प्रातः सूर्योदय से पूर्व नदी किनारे भ्रमण करने, आवश्यक क्रिया करने जाते। उन्होंने प्रातः काल के धुंधले-धुंधले प्रकाश में एक दिन एक आदमी की हत्या कर भागते हुए हत्यारे को अपनी आँखों से देखा। उस हत्या के आरोप में गिरफ्तार किये गये व्यक्ति पर केस संयोग से उन्हीं की अदालत में चला। जिस व्यक्ति पर हत्या का आरोप था, उसने बिल्कुल हत्या नहीं की। जनता ने भी अपनी आँखों से प्रत्यक्ष देखा था। न्यायाधीश गवाह नहीं बन सकता। साक्ष्य, गवाह आदि से पूरी तरह साबित कर दिया गया कि हत्या इसी व्यक्ति ने की है। जज साहब के पास कोई तीसरा विकल्प नहीं। फाँसी या आजीवन कैद। दो में से कोई भी सजा। जजसाहब आस्तिक थे, कर्मसिद्धान्त में विश्वास रखते थे।

जज साहब ने उस आदमी को अकेले में अपने कमरे में बुलाया। कहा-भाई, मैं कानून से बंधा हूँ। तेरा अपराध सिद्ध हो गया। क्या तूने यह हत्या की? वह मुलजिम बोला- नहीं माई-बाप, मैंने बिल्कुल भी हत्या नहीं की। जज साहब जानते ही थे इस बात को। पुनः पूछा उन्होंने- तू ईमानदारी से बता कि इस हत्या के पहले तूने कोई हत्या की या नहीं? वह व्यक्ति बोला- जज साहब! मैंने पहले दो हत्याएं की, लेकिन चैक और जैक से दोनों बार ही बच गया।

जज साहब को पक्का विश्वास हो गया कि कर्म सिद्धान्त सही है। जज साहब जान रहे हैं मैंने अपनी आँखों से देखा है कि इसने हत्या नहीं की। परन्तु पहले पाप किया है, इसलिए आज इसे फांसी की सजा प्राप्त हो रही है। उस व्यक्ति ने ईमानदारी से कह दिया कि पहले मैं पैसे देकर बच गया। कर्म सिद्धान्त रसिक जज साहब की आस्था और दृढ़ हो गई। हम आस्तिक, भजन करने वाले क्या मान रहे हैं? वर्तमान में जो कुछ भी क्रियाकलाप हो रहा है उसमें मेरा कही-न-कहीं कोई पाप हुआ, अन्यथा मेरे जीवन में ऐसी घटना घट नहीं सकती।

जोधपुर में आने के साथ अनेक भक्तों की भावना रही कि यहाँ हर रविवार को ध्यान शिविर चलना चाहिये। हम ध्यान में इस चीज को लेने की कोशिश करेंगे। हम आत्मा में पहुँचे। नैतिक व्यक्ति आध्यात्मिक भी हो सकता है और नहीं भी हो सकता। पर आध्यात्मिक व्यक्ति कभी अनैतिक नहीं हो सकता। अध्यात्म अर्थात् आत्मा में, अन्तर में, अपने में साधक बनना है। साधक बनने के लिए पहला सूत्र है- सबसे पहले भरोसा होना चाहिये कि मेरा जीवन

इतना-सा नहीं है जो सामने दीख रहा है। मैं किसी भी स्थिति में रोना नहीं रोऊँगा। धन्धे में नुकसान हो, परिवार में प्रतिकूलता हो, शरीर में बीमारी हो, रोना नहीं रोऊँगा। मुझे इतना सा मिला- रोना नहीं रोऊँगा। मैं तो अस्वस्थ हूँ, ऐसा रोना नहीं रोऊँगा।

तीन व्यक्ति दुकान में आये। तीनों मित्र थे। बाहर निकलकर एक-दूसरे ने एक-दूसरे से पूछा- दुकान से क्या लेकर आए? पहला मित्र बोला- मैं एक लाख रुपये का सेट लेकर आया। दूसरे ने कहा- मेरी जेब में मात्र दस हजार थे, मैं सोने का आभूषण लाया। तीसरे ने कहा- मेरी जेब में मात्र पाँच सौ रुपये ही थे, मैं चांदी के जेवर लाया। अब अगर पाँच सौ रुपये वाला यह रोना रोए कि मैं रत्नों का आभूषण नहीं लाया तो उससे क्या होगा? जिसके पास जितनी पूंजी है, वह उतने का ही माल ला सकता है। पूंजी जितनी ही उतना ही तो सामान मिलेगा। मेरे पुण्य की पूंजी इतनी ही थी, यह सोचें।

मुझे पहले मिला था, पर मैंने मिले का सदुपयोग नहीं किया। मुझे मनुष्य जन्म मिला, लेकिन मैंने उसे विषय-भोगों में पूरा कर दिया। मेरे पास एक करोड़ की पूँजी थी, पर मैंने किसी के आंसू नहीं पौंछे। मैंने घूमने-फिरने में, मौज-शौक में, बाल-बच्चों में खर्च कर दिये, पर मैंने यह कभी नहीं सोचा कि पड़ौसी के घर रोटी नहीं बन रही है, कभी अनुकम्पा का भाव तक नहीं आया, इसलिये मैं दुर्दशा में पड़ा हूँ। सेवा, त्याग और प्रेम का नाम है भजन। भजन में सेवा भी है, त्याग भी है, प्रेम भी है।

वीतराग दर्शन कह रहा है- प्रभु हैं, प्रभु सर्वश्रेष्ठ हैं, प्रभु अनन्त सुख के भण्डार हैं। प्रभु मेरे हैं। सबसे पहले यह आस्था होनी चाहिए। श्रद्धा और विश्वास होना चाहिये। जिससे आत्मीयता होती है उससे प्रीति लगती है जिससे प्रीति होती है, उसकी स्मृति होती है। प्रभु की सहज स्मृति होना भजन है। आस्था से ही भक्ति प्रस्फुटित होती है, भजन होता है। इससे सन्दर्भित शब्दों पर गौर करें। स्तुति, उपासना, प्रार्थना-पूजा आदि भजन के सूचक हैं। प्रभु की महिमा को स्वीकार करना स्तुति है। हम देख ही चुके प्रभु हैं, प्रभु सर्वश्रेष्ठ हैं, प्रभु अमित तृप्ति, अखण्ड, अनन्त, अक्षय रस वाले एवं निराबाध सुख वाले हैं- बस इसी का नाम है स्तुति। आस्था, श्रद्धा, विश्वास से होती है स्तुति। आस्था, श्रद्धा, विश्वास से होता है भजन। उपासना - उप उपसर्ग पूर्वक आस् धातु से निष्पन्न शब्द है 'उपासना'। प्रभु से सम्बन्ध स्थापित करना। 'अरिहंतो मह देवो' अरिहन्त मेरे देव हैं। इन्द्रभूति गौतम फरमाते हैं, शकडालपुत्र श्रमणोपासक गोशालक को कहते हैं- मेरे धर्मोपदेशक धर्माचार्य! प्रभु से सम्बन्ध स्थापित करना। प्रभु मेरे हैं। हो गई आत्मीयता, हो गया भजन। तीसरा शब्द आया प्रार्थना। प्रभु प्रेम की आवश्यकता अनुभव करना प्रार्थना है। आनन्दघन जी अपनी चौबीसी के पहले ही भजन में ऋषभ प्रभु से प्रीतड़ी (प्रीति) की चर्चा कर रहे हैं। दशवैकालिक 8/38 में 'कोहो पीइं पणासेइ' वाक्य क्रोध को आत्म शत्रु मानकर प्रीति विनाशक कह रहा है। अर्थात् प्रीति आत्मा का नैसर्गिक गुण है। उसे ही प्रेम के नाम से भी कह दिया गया। जैनेतर बाने में भी जैन मत के अनुसार संथारा स्वीकार करने वाले आगमयुग के अम्बड़ संन्यासी की स्मृति को तरोताजा करने वाले भूदान नेता आचार्य विनोबा भावे जी ने भी कहा- "हे प्रभो! मैं आपका अतीत काल हूँ, आप मेरे भविष्य काल हो, वर्तमान में आपकी अनुभूति करूँ।" इसी का नाम है भक्ति।

शुद्ध वीतराग सिद्धान्त, शुद्ध जिन धर्म के प्रतिपादक भगवान का जीव भी अनादि काल से 4 गति 24 दंडक 84 लाख जीवयोनि में ही भटक रहा था। उनकी गणना भी मुक्तिमार्ग में समकित आने से ही तो होती है।

हम चौबीस तीर्थंकरों के इतिहास को पढ़ते हैं। नयसार के भव से महावीर का, धन्ना सार्थवाह के भव से ऋषभ देव का अधिकार चलता है। समकित आने के पहले कोई प्रमाण नहीं, कोई गिनती नहीं। जैन दिवाकर

चौथमल जी महाराज ने कहा-

जब लग होती समकित आन।
तब से होता भव का प्रमाण।
बिन श्रद्धा शून्य समान।
पधारे पद्म प्रभु भगवान।।
करने जीवों का कल्याण।

एक तीर्थंकर प्रभु की स्तुति में महाराज ने सारे समकित का सार भर दिया। एक बच्चा दौड़ा-दौड़ा आया। मेरे सौ में से सौ में एक नम्बर कम आया। सौ में से सौ में एक कम, मतलब 99 नम्बर आये, मम्मी को भरोसा नहीं। 3 बार फेल हो चुका इस बार गणित में सप्लीमेंटरी परीक्षा दी थी, उसकी अंकतालिका हाथ में थी। 100/100 थे जो एक कम कह रहा। वास्तव में 00/100 थे जो 1 कम सौ ही थे। एक नहीं तो........? सारा जीवन जीरो में जा रहा है। आप चाहे जितनी सामायिक कर लें, प्रतिक्रमण कर लें, तपस्याएँ कर लें, पर धर्म रूपी वृक्ष की जड़ समकित है, धर्म रूपी प्रासाद की नींव समकित है, समकित नहीं तो ज्ञान नहीं। ज्ञान नहीं तो चारित्र गुण भी नहीं। चार्वाकवादी कह रहे हैं- परलोक किसने देखा है। खाओ, पीओ, मौज करो। यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्- गायली खा जाओ। साझेदार का माल दबा लो। सुना आपने स्मैक के शिकंजे में कॉलेज के छात्र फंस रहे हैं। यह दुर्दशा वीतराग के भक्तों की नहीं हो सकती।

आज से जीवन की तैयारी की शुरुआत करें। अपने लिए हाय-तौबा न करें। दूसरों के अधिकार का हनन हो रहा है। अनाप-शनाप इकट्ठा किया जा रहा है। धन की तीन ही गति बताई गई हैं- दान, भोग और नाश। जो देकर सदुपयोग नहीं करता, बैंक बैलेन्स बढ़ाता जा रहा है वह अपनी संस्कृति का विनाश कर रहा है, घर का नाश कर रहा है। बच्चे पॅब में, बॉर में एक हजार रुपये की एक ग्राम स्मैक में, जिसकी तीन खुराक उसे गुलाम बना देती है। घर में चोरी करता है। छुप-छुप कर सेवन करता है। मथुरादास माथुर अस्पताल पहुँचता है। टूट जाता है अन्दर से, नहीं ले तो शरीर टूटा। मौत का स्पष्ट वारन्ट।

आप सब के सब अच्छा करके आए हैं। जब तक आत्मभाव में जीव स्थित नहीं होता सम्यग्दर्शन प्राप्त नहीं करता, तब तक परिभ्रमण चलता रहता है। जो कुछ भी मिला है, जिम्मेदारी मेरी अपनी है। किसी का परिवार अनुकूल नहीं, घर में कोई बात नहीं सुनता। मैं जिसे भी कहता हूँ मेरी कोई नहीं मानता। आपको सोचना है- मैंने भगवान की बात नहीं मानी, अब अपेक्षा रखें कि दुनिया उसकी बात माने तो कैसे संभव है?

किसी का दोष नहीं, किसी पर द्वेष नहीं। हमारा सूत्र होगा- **किसी से अपेक्षा नहीं, किसी की उपेक्षा नहीं।** हमारा जीवन ऐसी भावना से शुरु होगा तो सामायिक होगी, साधना होगी। सम्यक्त्व रूपी एका आ जायेगा तो फिर जैसे एक पर बिन्दी लगने से दस, दो बिन्दी लगने से सौ, तीन बिन्दी लगने पर हजार होता है, ऐसे ही सम्यक्त्व आने पर साधना का फल बढ़ता रहता है। भजन के शीर्षक में आस्था, श्रद्धा, विश्वास, स्तुति, उपासना, प्रार्थना के साथ हमारी बात समकित को लेकर चल रही थी। गुरु की सन्निधि परम आवश्यक है। आप यहाँ आए तब निस्सिही.....निस्सिही बोलकर आए फिर भी मन कितना टिकता है? कभी कोई व्रत-नियम लिया, दो-चार दिन बाद वासना का शिकार हो गया तो? जीव ग्यारहवें गुणस्थान पर पहुँच जाने की स्थिति होने पर भी मोहनीय कर्म के कारण दसवें तक नहीं पहले गुणस्थान तक नीचे आ सकता है।

भगवान श्रेष्ठ हैं, सर्व श्रेष्ठ हैं, मेरे अपने हैं। भगवान से आत्मीयता होगी तो प्रीति जगेगी। प्रीति होगी तो स्मृति रहेगी। प्रभु की सहज स्मृति आना भजन है। इसमें रुकावट है- ममता, आसक्ति, कामना। ममता, आसक्ति, कामना छोड़कर उपाश्रय में प्रवेश करने कि लिए निस्सिही के साथ अंदर आना पड़ेगा। ममता, आसक्ति, कामना को तोड़ने के लिए कहते हैं-

तिक्खुत्तो, आयाहिणं, पयाहिणं। मन, वचन, काया के योगों को नियन्त्रण में लेने के लिए प्रदक्षिणा करता है। मैं तीनों योगों को सही दिशा में लगाऊँगा। मेरे मुँह से गुणगान हो। मैं जब बोलूँ मीठे शब्दों में बोलूँ।

कल गुरुपूर्णिमा को गुरु की भक्ति करते हुए तिक्खुत्तो के अर्थ को भी देख रहे थे। वह भी तो यही सूचना दे रहा है- बाहर भटकने वाले मन, वचन, और काया को वश में करने की तैयारी है। भजन करने की तैयारी है, गुणगान गाता हूँ, समर्पित होता है, रोम-रोम पुलकित है, श्रद्धा से अवनत हूँ, सम्मान देता हूँ, सत्कार देता हूँ, बहुमान करता हूँ।

सन्दर्भ कई जुड़ गए- मूल में भजन की चर्चा, मुनिराज द्वारा बाँचे गए आचारांग के जीव के कहीं से आने की वार्ता। तिक्खुतो के वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि शब्द हैं, परन्तु भावों में, सार में समग्रता है, एकरूपता है। बाहर के भटकाव से रुकूँ। बाहर के बहाव से रुकूँ। आत्मा पर परमात्मा पर आस्था जगाने वाले महात्मा की स्तुति, उपासना, प्रार्थना के साथ पूजा करूँ। जगत् की सेवा में, निष्काम भाव से मिले हुए को समर्पित करूँ। प्रभु की, गुरु की भाव पूजा हो जाएगी। सदाचारी और सद्व्रती ही भजन के सच्चे अधिकारी हो सकते हैं।

मिले हुए की ममता त्याग कर सेवा में समर्पित करूँ, व्यसन-फैशन से स्वयं बचूँ। सन्तानों को बिगड़ने से बचाऊँ। बस यही है सच्चा भजन, यही है सच्ची भक्ति। अवशिष्ट चर्चा समय के साथ मेरे प्रभु........।

(जिनवाणी, सितम्बर 2011 से गृहीत)

कलुषित कामनाओं की आग

डॉ. रमेश 'मयंक'

कलुषित कामनाओं की
धधकती आग सहज में नहीं बुझती है
इस आग में मिटकर राख हो जाना
विनाश की रीत रही है,
जो साधक
संयम, साधना, विवेक के साधनों से
आग की लपटों पर नियंत्रण कर पाता है
वही परम तृप्ति का अधिकारी कहलाता है।

जब कुत्सित कामनाओं की विष लताएँ फैलती
क्रोध पनपता
विवेक का होता अवसान
नहीं हो पाती सही-गलत
उचित-अनुचित की पहचान।
कलुषित कामनाओं के इस संसार में
चाहत-पिपासाएँ-कुंठाएँ
निरन्तर बढ़ती रही हैं
कहीं भी तृप्ति का भाव नहीं है
हमने-
इस अंतहीन प्रक्रिया में बहुत खोया
जो नहीं जगा वह बहुत रोया।

होने दो- कलुषित कामनाओं पर नियंत्रण
अहंकार का क्षरण
अतृप्ति के स्थान पर तृप्ति भाव लेकर
आनन्द का अंकुरण
तब मृगतृष्णाएँ नज़र नहीं आयेंगी
धधकती आग बुझ जाएगी
रुकेगी भटकन
नहीं विचलित होगा मन और आनन्द की लहरें
अपना दिव्य अलौकिक प्रभाव बतायेंगी।

-बी-8, मीरा नगर, चित्तौड़गढ़-312001 (राज.)

चित्तशुद्धि का उपाय

श्री शरणानन्दजी महाराज

वस्तु, अवस्था एवं परिस्थिति के आधार पर ही अपना मूल्यांकन करना चित्त को अशुद्ध करना है, क्योंकि वस्तु आदि से हमारा नित्य सम्बन्ध नहीं है। जिससे नित्य सम्बन्ध नहीं है, उसका उपयोग किया जा सकता है, उससे ममता नहीं की जा सकती, उसके आधार पर अपना महत्त्व घटाया-बढ़ाया नहीं जा सकता और न उसमें जीवन-बुद्धि ही स्वीकार की जा सकती है। वस्तुओं आदि की ममता से लोभ-मोह आदि विकारों की उत्पत्ति होती है। उनके आधार पर अपना महत्त्व घटाने-बढ़ाने से विषमता आती है और हृदय में दीनता तथा अभिमान की अग्नि प्रज्वलित होती है। वस्तुओं में जीवन-बुद्धि करने से जड़ता, परिच्छिन्नता आदि दोषों की उत्पत्ति होती है। इस दृष्टि से वस्तु, अवस्था एवं परिस्थिति के आधार पर अपना मूल्यांकन करना चित्त की अशुद्धि में हेतु है। वस्तु, अवस्था आदि का सदुपयोग विद्यमान राग की निवृत्ति का साधन है। इसके अतिरिक्त वस्तु आदि का जीवन में कोई स्थान नहीं है।

वस्तु आदि की ममता के त्याग से नवीन राग की उत्पत्ति नहीं होगी और सदुपयोग से विद्यमान राग की निवृत्ति होगी। नवीन राग की उत्पत्ति न हो और विद्यमान राग की निवृत्ति हो जाय, तो बड़ी ही सुगमतापूर्वक चित्त शुद्ध हो जाता है, जिसके होते ही वस्तु आदि से अतीत के जीवन में अविचल श्रद्धा हो जाती है।

यह नियम है कि वस्तु आदि से सम्बन्ध-विच्छेद होते ही समस्त कामनाएँ स्वतः मिट जाती हैं। कामनाओं की निवृत्ति में ही वास्तविक जीवन की उपलब्धि निहित है।

वास्तविक जीवन हमारा अपना जीवन है। उस जीवन में किसी प्रकार की विषमता, अभाव एवं जड़ता आदि विकार नहीं हैं। चित्त की अशुद्धि के कारण आज हम अपने को अपने जीवन से विमुख कर बैठे हैं और जो जीवन नहीं है, उसमें आसक्त हो गये हैं। उसका परिणाम यह हुआ कि हम अनेक प्रकार के अभावों में आबद्ध हो गये हैं। यद्यपि वास्तविक जीवन की जिज्ञासा तथा लालसा प्राणी में बीजरूप से विद्यमान है, परन्तु अस्वाभाविक इच्छाओं ने जिज्ञासा की जागृति को ढक दिया है, जिससे प्राणी वस्तु आदि की दासता में आबद्ध हो, कामना की अपूर्ति और पूर्ति के दुःख-सुख को ही जीवन मान बैठा है।

सुख-दुःख, दिन-रात के समान आने-जाने वाली वस्तुएँ हैं। भला, उनसे नित्य सम्बन्ध कैसे हो सकता है? जिससे नित्य सम्बन्ध हो ही नहीं सकता, वह हमारा जीवन कैसे हो सकता है? कदापि नहीं। चित्त की अशुद्धि के कारण जो जीवन नहीं है, हम उसकी आशा करते हैं और जीवन है, उससे निराश हो गये हैं। उसका परिणाम यह हुआ है कि अनेक प्रकार की आसक्तियाँ, क्षोभ, क्रोध, विस्मृति, पराधीनता आदि दोष उत्पन्न हो गये हैं। आसक्तियों ने स्वाधीन नहीं रहने दिया, क्षोभ ने शान्ति का अपहरण कर लिया, क्रोध ने प्रसन्नता का अन्त कर दिया और विस्मृति ने कर्त्तव्यपरायणता , अमरत्व एवं प्रेम से वंचित कर दिया। स्वाधीनता, शान्ति, प्रसन्नता, कर्त्तव्यपरायणता, अमरत्व और प्रेम के बिना जीवन ही क्या हो सकता है।

जिन दिव्य गुणों के प्राप्त करने में प्राणी स्वाधीन था, उनकी प्राप्ति में अपने को असमर्थ मानता है, और जिन वस्तुओं की प्राप्ति में प्राणी सर्वदा पराधीन है, उनकी प्राप्ति के लिए अपने को स्वाधीन तथा समर्थ मानता है, जो सम्भव नहीं है। यह अनहोनी बात जीवन में चित्त की अशुद्धि से आ गई है।

चित्त की अशुद्धि का कारण कोई और नहीं है। किसी और के द्वारा हमारा चित्त अशुद्ध नहीं हो सकता। हमारे प्रमाद से ही हमारा चित्त अशुद्ध हुआ है। अपने प्रमाद

के मिटाने में प्राणी स्वाधीन है। जिस जीवन में हमारा सदैव अधिकार है, उससे हमें निराश नहीं होना चाहिए। वास्तविक जीवन की आशा ज्यों-ज्यों सबल तथा स्थायी होती जाएगी, त्यों-त्यों जो अस्वाभाविक इच्छाएँ हैं, उनका त्याग स्वतः होता जाएगा। यह नियम है कि अस्वाभाविक इच्छाओं के त्याग में ही वास्तविक जीवन की प्राप्ति निहित है। पर बड़े दुःख की बात यह है कि जिसकी प्राप्ति सम्भव है, उससे निराश हो बैठे हैं। उस निराशा का अन्त कर देना ही चित्त-शुद्धि का मुख्य उपाय है। प्राणी किसी भी परिस्थिति में क्यों न हो, वास्तविकता की ओर अग्रसर होने के लिए समष्टि शक्तियाँ उसे सहयोग देकर सफल बनाती है। इस दृष्टि से चित्त-शुद्धि के लिए सर्वदा तत्पर रहना चाहिए।

साधन के दो प्रधान अंग होते हैं- एक निषेधात्मक और दूसरा विध्यात्मक। यह नियम है कि निषेधात्मक साधन की पूर्ति में सभी साधक स्वाधीन हैं, क्योंकि उसके लिए किसी अप्राप्त वस्तु आदि की अपेक्षा नहीं होती और उसमें कभी असिद्धि भी नहीं होती। जैसे 'हम किसी का बुरा नहीं चाहेंगे'- इस साधन में किसी भी साधक को कोई भी कठिनाई नहीं है और उसकी सिद्धि भी वर्तमान में ही हो सकती है, जिसके होते ही समस्त अशुद्ध संकल्प स्वतः मिट जाते हैं और उनके मिटते ही अकर्त्तव्य का अन्त हो जाता है। अकर्त्तव्य के अन्त में कर्त्तव्यपरायणता निहित है। इस दृष्टि से निषेधात्मक साधन परिपक्व होते ही विध्यात्मक साधन स्वतः हो जाता है। साधन के किसी एक अंग की परिपक्वता से दूसरे अंग की भी सिद्धि हो जाती है और साधक, साधन तथा साध्य में भेद नहीं रहता, जो सभी साधकों को अभीष्ट है। यह नियम है कि निषेधात्मक साधन से चित्त में शुद्धि आती है और विध्यात्मक साधन द्वारा समस्त जीवन में उसकी अभिव्यक्ति होने लगती है। अतः चित्त की शुद्धि से कभी निराश नहीं होना चाहिए।

निषेधात्मक साधना को बिना अपनाए बल-पूर्वक विध्यात्मक साधन का वेष बनाने से चित्त शुद्ध नहीं हो सकता। कारण कि विध्यात्मक साधन तो स्वतः स्वाभाविक होना चाहिए। पर वह तभी सम्भव है, जब निषेधात्मक साधन सिद्ध हो जाय। निषेधात्मक साधन विध्यात्मक साधन की भूमि है। जिस प्रकार भूमि के बिना कोई भी पौधा न तो उग ही सकता है और न हरा-भरा ही हो सकता है, उसी प्रकार निषेधात्मक साधन के बिना सिद्ध हुए विध्यात्मक साधन जीवन से अभिन्न नहीं हो सकता। जो साधन जीवन नहीं हो सकता, वह कभी भी प्रतिकूलताओं के भय तथा अनुकूलताओं के प्रलोभन से असाधन में परिणत हो सकता है। अर्थात् केवल विध्यात्मक साधन से चित्त शुद्ध नहीं हो सकता, अपितु मिथ्या अभिमान ही उत्पन्न होता है, जो चित्त को अशुद्ध कर देता है। निषेधात्मक साधन निरभिमानता द्वारा ही हो सकता है, क्योंकि निषेधात्मक साधन के मूल में अपने दोष की वेदना होती है, जो अभिमान को गलाती है। विध्यात्मक साधन तो केवल उसका शृंगार मात्र है। विध्यात्मक साधन से तो साधक का प्रकाशन होता है, पर साधक की साधना से अभिन्नता तो निषेधात्मक साधन से ही होती है। निषेधात्मक साधना में पराधीनता नहीं है, क्योंकि वह दृढ़ संकल्पमात्र से सिद्ध हो जाती है। संकल्प-शक्ति सभी साधकों को स्वतः प्राप्त है। अतः चित्त की शुद्धि में न तो असमर्थता ही है और न असफलता अथवा यों कहो कि चित्त-शुद्धि का दृढ़ संकल्प ही चित्त को शुद्ध कर देता है।

अकर्त्तव्य को अकर्त्तव्य जानकर ही उसका त्याग करना चाहिए। किसी भय से भयभीत होकर अकर्त्तव्य का त्याग कुछ अर्थ नहीं रखता, प्रत्युत मिथ्या अभिमान ही उत्पन्न करता है, जो अनर्थ का मूल है। अकर्त्तव्य-जनित जो सुख है, वह भय से दब जाता है, मिटता नहीं। इस कारण भयपूर्वक किया हुआ अकर्त्तव्य का त्याग वास्तविक त्याग नहीं है। इसी कारण कर्त्तव्य में प्रवृत्ति सहज भाव से स्वतः नहीं हो पाती है। प्राकृतिक नियम के अनुसार अकर्त्तव्य के त्याग में ही कर्त्तव्यपालन निहित है। पर ऐसा तब होता है, जब बुराई को बुराई जानकर न किया जाय और भलाई को भलाई जानकर ही किया जाय, किसी प्रलोभन से नहीं। परन्तु यह निर्विवाद सत्य है कि बुराई के त्याग बिना भलाई सम्भव नहीं है।

(चित्त-शुद्धि भाग-1' से साभार)

सुख-दुःख का कारण कहाँ?

स्वामी रामसुखदासजी महाराज

सीधी बात तो यह है कि सुख-दुःख अपने कर्मों का ही फल-भोग है, पर वास्तव में सुखी और दुःखी होना कर्मों का फल नहीं है; यह तो अज्ञान का फल है। प्रायः लोग कहते हैं- 'जिसके पास बाहर की सामग्री बहुत है तथा जिसको अनुकूल परिस्थिति प्राप्त है- वह बहुत सुखी है। बड़ा घर है, पास में रुपये बहुत हैं, कुटुम्ब अनुकूल है; शरीर नीरोग है; समाज में सब तरह की इज्जत-प्रतिष्ठा है तो वह सुखी समझा जाता है और जिसके पास अन्न का अभाव है; सन्तान नहीं है; शरीर रोगी है; रहने के लिये घर नहीं है, पास में पैसा नहीं है; तो वह मनुष्य बहुत दुःखी कहा जाता है।'

सुख-दुःख की परिभाषा यह हुई कि सुख नाम हुआ बाहर की अनुकूल सामग्री का और दुःख नाम हुआ बाहर की सामग्री के अभाव का। दूसरी वास्तविक परिभाषा सुख-दुःख की यह है कि जिसके मन में हर समय प्रसन्नता रहती है- वही सुखी है। चाहे उसके पास बाहरी सामग्री कम है अथवा नहीं, या बहुत अधिक है। जिसके मन में चिन्ता-फिकर नहीं है वही सुखी हुआ। बाहर की सामग्री अत्यधिक मात्रा में रहते हुए भी हृदय जलता है, मन में दुःख सन्ताप है, तो दुःखी ही है।

अब प्रश्न उठता है कि किसी डाकू ने किसी का धन लूट लिया। किसी ने किसी को शरीर में चोट मारकर पीड़ित कर दिया तो दूसरा व्यक्ति उस दुःखदायी परिस्थिति देने वाला हो गया न? फिर यह कैसे कहा गया कि दुःख देने वाला दूसरा नहीं है। अतः जो दूसरे को दुःख देने वाला मानता है, वह कुबुद्धि क्यों है? इसका उत्तर यह है कि चोर लुटेरे आदि दूसरे व्यक्ति दुःखदायी परिस्थिति पैदा कर सकते हैं, किन्तु उस परिस्थिति में दुःखी होना अथवा न होना, यह अपने हाथ की बात है। कोई भी हमको दुःखी होने के लिए बाध्य नहीं कर सकता। दुःख की परिस्थिति देने में जो दूसरे निमित्त बनते हैं, वह हमारे प्रारब्ध का फल है, परन्तु हर परिस्थिति में हम प्रसन्न रह सकते हैं। इसलिए किसी को दोष देना कि अमुक ने मुझे दुःखी बना दिया यह तो अपनी मूर्खता है, यह बुद्धि की विकृति है। मूर्ख मनुष्य किसी तरह भी सुखी नहीं हो सकता। उसका दुःख भी कभी नहीं मिट सकता। मूर्खता मिटने पर ही उसका दुःखी होना मिट सकता है।

एक कहानी आती है कि एक राजा के बहुत वर्षों के बाद पुत्र पैदा हुआ। बहुत साल के बाद पैदा होने के कारण राजा का उस पुत्र में ज्यादा मोह था। उसको खिलाने-पिलाने वाले बहुत रहते थे। बड़ा लाड़-प्यार किया जाता था। राजा ने अपने नौकरों से कहा-'तुम्हारे को इनाम चाहे जितना दे दूँगा, पर यह बालक रोना नहीं चाहिये, दुःखी नहीं होना चाहिये। यह बालक रोयेगा तो इनाम नहीं मिलेगा। अब वे कितना ही प्रयत्न करें, कितनी ही चेष्टा करें पर बालक तो रो ही देता है। बालक का तो रोने का स्वभाव होता है। राजा बड़े नाराज हो जाते हैं और नौकरों से कहते हैं- भाई, हमारे किसी बात की कमी नहीं तो भी बच्चा रोता क्यों है? इस कहानी के विषय में ध्यान देकर सुनना। हम जरा सोचें कि बालक रोता है तो किसी वस्तु की कमी के कारण रोता है क्या? नहीं। रोता है अपने अज्ञान से, बेसमझी से, वह चाहता है कि मैं चाहूँ ज्यों हो जाय। उसकी चाहना बेसमझी से भरी हुई है। अपनी मन चाही हो जाय, तब नहीं रोता है। मानो बालक कहता है- 'चाँद हाथ में दे दो'। चाँद हाथ में आ सकता ही नहीं। इस तरह उसकी मनचाही नहीं हुई तो रोने लगा अब इस रोने का कोई उपाय है क्या?

बालक बेचारा सरल होता है और बड़ी अवस्था वाले कपटी होते हैं। अन्तर इतना ही है, परन्तु रोते दोनों ही हैं। सब अपने मन की पूरी करना चाहते हैं। मन की चाह के अनुसार न होने से रोते हैं। बालक बाहर से रो देता है। बड़ी उम्र वाले बाहर से सभ्य बने रहते हैं पर भीतर से रोते रहते हैं। रोना तो वैसा का वैसा रहा। सज्जनों! यह भीतर का रोना मिटता है- सत्संग से। अर्जुन ने गीता में (अध्ययन 2.8) यही कहा है कि पृथ्वी का निष्कंटक राज्य तो क्या, यदि देवताओं का आधिपत्य भी प्राप्त हो जाय तो भी मेरा इन्द्रियों को सुखाने वाला भीतर का दुःख दूर नहीं हो सकता, नहीं हो सकता।

मैं बार-बार प्रार्थना करता हूँ कि इन बातों को आप ध्यान देकर सुनें और समझें कि दुःख कहाँ है? कैसे होता है? सुखी कैसे हो? यह सोचने, विचारने की बात है। दुःख, चिन्ता, शोक, भय, उद्वेग, जलन भीतर अन्तःकरण में हैं, उनके मिटाने के लिए सामग्री को बाहर से यदि इकट्ठा किया जाय तो बाहर की इकट्ठी की हुई सामग्री से भीतर का दुःख कैसे मिटेगा? पेट में भूख है और बाहर पीठ पर हलवा बाँधने से भूख कैसे मिटेगी? भूख मिटेगी पेट में हलवा जाने से। ऐसे ही भीतर का दुःख मिटेगा अज्ञान या मूर्खता मिटने पर। बाहर की परिस्थिति कैसी भी रहे, भीतर में शान्ति, प्रसन्नता, सुख रहता है, इसी का नाम योग है। भीतर में दुःख का संयोग ही नहीं होता। कैसी ही परिस्थिति आ जाय। 'तं विद्याद् दुःख-संयोग-वियोगं योगसंज्ञितम्'। (गीता 6.23)।

खास बात समझने यह है कि जो कर्म पहले किये हैं, उनके अनुसार परिस्थिति आयेगी। अशुभ कर्म किये हैं तो प्रतिकूल परिस्थिति आयेगी और शुभ कर्म किये हैं तो अनुकूल परिस्थिति आयेगी। परन्तु सुखी-दुःखी होना यह कर्मों का फल नहीं है। हम अज्ञान के कारण ही सुखी-दुःखी होते हैं। यह अज्ञान मिटाया जा सकता है। प्रारब्ध कर्म का फल अवश्यम्भावी आता है, उसको हम मिटा सकते नहीं। सुखदायी-दुःखदायीं दोनों तरह की परिस्थिति ज्ञानी के भी आती है। अज्ञानी के भी आती है। साधक के भी आती है, संसारी पुरुष के भी आती है। पशु-पक्षी आदि सबके पास अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति कर्मों के फलस्वरूप आती है।

-'कल्याणकारी प्रवचन' से गृहीत

आत्मानुभूति

श्री राजमल पवैया-भोपाल

जिस घड़ी निज आत्म की अनुभूति होती है।
उस घड़ी सम्यक्त्व की सुविभूति होती है।।

विश्व का सौन्दर्य जब भाए नहीं,
आत्म में वैराग्य की आपूर्त्ति होती है।
गुरु कृपा से हो हृदय में भेदज्ञान,
तब विभावों से पृथक् निज मूर्ति होती है।
जिस घड़ी निज आत्म की अनुभूति होती है।।

स्वयं निज के रूप में जब हो मगन,
तब सहज की मुक्ति की स्फूर्ति होती है।
ज्ञानमय विज्ञान की जागे किरण,
शुद्ध संवर निर्जरा की पूर्ति होती है।।
जिस घड़ी निज आत्म की अनुभूति होती है।।

मोह कर्म विनाश होता है जब स्वयं,
आत्मा कैवल्य से अभिभूत होती है।
शाश्वत सिद्धत्व पद होता प्रगट,
परम शुचिमय परम पावन मुक्ति होती है।।
जिस घड़ी निज आत्म की अनुभूति होती है।।

(जिनवाणी, मार्च 1979 से गृहीत)

आयतचक्खू, आत्मसंयम और तृष्णा

श्री सत्यनारायण गोयन्का

आयतचक्खू

भगवान महावीर कहते हैं- 'आयतचक्खू'। भीतर ऐसे चक्षु खुले, मानो ऐसे ज्ञानचक्षु खुले, ऐसा ज्ञान जिससे कि दूर-दूर तक की गहरी सच्चाइयां समझ में आने लगीं कि मैं जो यह विकार जगाता हूँ-चाहे क्रोध जगाऊँ, राग जगाऊँ, ईर्ष्या जगाऊँ, अहंकार जगाऊँ, जो भी विकार जगाऊँ वह स्वभाव बनता जा रहा है। भीतर विकार जगाने का एक स्वभाव बन गया। क्यों बन गया? क्योंकि हमारे ये दो बहुत बड़े दुश्मन हैं-मान और माया। माया माने मोह का अंधकार है। पता ही नहीं क्या हो रहा है? होश ही नहीं है क्या हो रहा है? ऐसा यह मायाजन्य मोह है जो सत्य नहीं जानने देता। व्यक्ति बाहर-बाहर की सौ बातें करेगा। भीतर क्या हो रहा है? वहाँ तो उसके लिए एकदम अंधेरा-ही-अंधेरा है। इसलिए माया के अंधकार में एक 'मैं' जागता है। मैं-मैं, का अभिमान जागता है। जब माया है तब यह नहीं समझ पाता कि किसको 'मैं' कह रहा हूँ? किसको 'मेरा' कह रहा हूँ? यह होश ही नहीं है। और जहाँ यह मिथ्या 'मैं-मैं' शुरू हुआ वहाँ राग जागेगा, वहाँ द्वेष जागेगा ही, वहाँ लोभ जागेगा ही, वहाँ क्रोध जागेगा ही। वहाँ कोई-न-कोई विकार जागेगा ही।

ये सारे-के-सारे कषाय (विकार) एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। जहाँ 'मैं-मैं' की रट शुरू हुई, वहाँ उसके प्रति गहरी आसक्ति जागेगी। 'मैं-मेरा', 'मैं-मेरा', मेरी मनचाही होनी चाहिए, मेरी अनचाही न हो जायं। क्योंकि मेरी मनचाही के प्रति इतनी गहरी आसक्ति है। 'मैं' के साथ जब आसक्ति होगी तो 'मनचाही' के साथ आसक्ति होगी ही। खूब आसक्ति होगी। खूब राग जागेगा। मेरी मनचाही, मेरी मनचाही। मेरी मनचाही के खिलाफ कोई एक शब्द कह दे, फिर देखो कितना चिड़चिड़ाता हूँ और कितना क्रोध जगाता हूँ, द्वेष जगाता हूँ, व्याकुलता जगाता हूँ। क्योंकि मेरी मनचाही के खिलाफ कुछ बोल रहा है, मेरी मनचाही के खिलाफ कुछ कर रहा है। मेरी अनचाही हो न जाय कहीं। मनचाही होती जाय, होती जाय-यह राग। अनचाही न हो, अनचाही न हो-यह द्वेष। अरे, यही तो भर रखा है न भीतर। सारे जीवन-भर यही करता है न! मेरी मनचाही ही हो, मेरी अनचाही न हो। तो यह राग, यह द्वेष, यह राग यह द्वेष, भीतर कितनी गहराइयों तक भरा हुआ है। जब तक यह नहीं निकला, कैसे अहिंसक हुए? संयम कर लेने से भी निकला तो नहीं। मुझे क्रोध आया और इसे दबा लिया, वाणी पर नहीं उतरने दिया, अच्छी बात। थोड़ा तो अच्छा हुआ कि वाणी पर नहीं उतरने दिया, शरीर के कर्मो पर नहीं उतरने दिया। पर मन का कर्म तो कर ही रहा है। भीतर-ही-भीतर गहराइयों तक क्रोध-ही-क्रोध, क्रोध-ही-क्रोध। उसने ऐसा कह दिया, मेरा अपमान कर दिया, मुझे गाली दे दी। अरे, हिंसा-ही-हिंसा कर रहा है न तू! कहाँ निकला हिंसा के बाहर? मन का इतना बड़ा महत्त्व। लेकिन इस ऊपर-ऊपर के तप को इतना महत्त्व देने लगे और भीतर वाला अंतस्तप एकदम भुला दिया।

आत्म-संयम

औरों को अनुशासित करने के पहले स्वयं अपने आपको शासित करें, अपने आपको संयमित करें। औरों को जीतने के पहले अपने आपको जीतें। जिसने अपने आपको जीत लिया उसने मानो सारे जग को जीत लिया। परन्तु जो अपने आपको नहीं जीत सका, वह और सबों को जीतकर भी हारा हुआ ही रह गया।

अपने आपको जीतने का नाम ही आत्म-संयम है। आत्म-संयम होगा तो आत्मबल बढ़ेगा, आत्म-पुरुषार्थ बढ़ेगा। आत्मबल और आत्मपुरुषार्थ से ही

सच्चा आत्महित सधेगा। आत्महित साधने पर ही परहित सध सकेगा। अपना भला नहीं कर सकेंगे तो औरों का क्या भला कर पायेंगे? जो स्वयं अंधा है वह औरों को क्या रास्ता बता पायेगा? जो स्वयं लंगड़ा है वह औरों को क्या सहारा दे पायेगा? अतः परहित के लिए भी और आत्महित के लिए भी, आत्म-संयम सीखें। अपने कायिक, वाचिक और मानसिक दोषों का निरीक्षण करते रहें और इन्हें ही अपना सबसे बड़ा शत्रु मानकर इनसे ही युद्ध करते रहें। जब तक एक भी दोष कायम है, तब तक उससे जूझते ही रहें। किसी भी दोष को छोटा मानकर उसकी उपेक्षा, अवहेलना न करें। उसे जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए सतत प्रयत्न करते रहें। आत्म-दोषों के उन्मूलन के लिए ही आत्म-संयम है।

तृष्णा

भगवान ने कितना ठीक कहा-

तणहाय जायति सोको, तणहाय जायति भयम्।
तणहाय विप्पमुत्तस्स, नत्थी सोको कुतो भयं?

तृष्णा से ही शोक उत्पन्न होता है। तृष्णा से ही भय उत्पन्न होता है। तृष्णा से मुक्त हो जाएँ तो शोक ही न रहे, फिर भय कहाँ से रहे? और तृष्णा से विमुक्त होने का सहज, सरल तरीका है- विपश्यना। अपने चित्त में समायी हुई तृष्णा को, कामना को न दबाएँ, न उपेक्षित करें, बल्कि साक्षीभाव से देखें।

कामना-तृप्ति पर प्राप्त हुए क्षणिक सुख से पागल न हो जाएँ, बल्कि उसे साक्षीभाव से देखें।

अतृप्ति के कारण भविष्य के प्रति जो आशंका और भय उत्पन्न होते हैं, उनसे आकुल-व्याकुल और भयभीत न हो जाएँ, बल्कि उन्हें साक्षीभाव से देखें।

इस प्रकार इन मनोविकारों से उत्पन्न होने वाले स्पंदन, सिहरन, कम्पन, जलन आदि विभिन्न संवेदनाओं से प्रभावित हुए बिना इन्हें साक्षिभाव से देखें। इन्हें अचेतन से चेतन मन तक लाकर साक्षीभाव से देखते ही इनका रेचन हो जाता है, उन्मूलन हो जाता है। इनकी जड़ ढीली पड़ जाती है। इनके क्षण-क्षण परिवर्तित अनित्य स्वभाव को प्रज्ञा-दृष्टि द्वारा देख लेना ही साक्षीभाव से देखना है। यही विपश्यना भावना है। यह स्थितप्रज्ञता और अनासक्ति का सहज सरल क्रियात्मक अभ्यास है। तृष्णा की गुलामी से नितान्त विमुक्ति पाने का यही कल्याणपथ है, यही मंगल-मार्ग है। जब से मनुष्य जन्म लेता है, अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए व्याकुल रहता है। आवश्यकताओं की कोई सीमा नहीं है। बीमार होता है तो दुःखी होता है। मरता है तो दुःखी होता है। बूढ़ा होता है तो दुःखी होता है। देखता है कि जीवन में दुःख ही दुःख है। सारे जीवन क्या चलता है? जो प्रिय है उसका वियोग हुआ जा रहा है, प्रिय व्यक्ति, प्रिय वस्तु, प्रिय स्थिति। जो अप्रिय है उसका संयोग हुए जा रहा है। अनचाही होती रहती है, मनचाही नहीं होती। जो कामना करता है, वह पूरी नहीं होती तो व्यक्ति दुःखी होता है। यह जीवन जगत की सच्चाई है।

तीव्र इच्छा यानी तृष्णा अपने आपमें व्याकुलता है। तृष्णा माने जो अपने पास है उससे तृप्ति नहीं और जो नहीं है, उसे पाने के लिए व्याकुल है।

साधना करते-करते स्वयं अनुभव होगा कि तृष्णा माने जो अपने पास है उससे तृप्ति नहीं और जो नहीं है, उसे पाने के लिए व्याकुल है। साधना करते-करते स्वयं अनुभव होगा कि तृष्णा कैसे जागती है। शरीर में जो पीड़ा हो रही है, वह अपने आपमें इतनी दुःखदायी होती है। जीवन भर यही करते आये हैं। जो अप्रिय है उसे दूर धकेलना चाहते हैं। तृष्णा का दुःख इसे धकेलने-समेटने का ही दुःख है।

गहराइयों में उतरकर बुद्ध ने देखा कि यह जो पाँच स्कन्धों के प्रति उपादान यानी आसक्ति (attachment) है, यह दुःख है। ये पाँच स्कंध क्या हैं? एक रूपस्कंध यानी परमाणुओं का स्कंध- यह सारा शरीर जिसे 'मैं' कहता है, उसके प्रति गहरा चिपकाव है, आसक्ति है। इसी तरह चित्त के चार स्कंध- विज्ञान, संज्ञा, वेदना और संस्कार। इनके प्रति गहरा चिपकाव है कि मैं जान रहा हूँ, मैं पहचान रहा हूँ, मैं संवेदनशील हो रहा हूँ, मैं प्रतिक्रिया कर रहा हूँ। इसके साथ जितनी आसक्ति पैदा कर ली उतना ही दुःख है।

बाहर का मैला : जानें भीतर भी फैला

श्री पी. शिखरमल सुराणा

1. दिल्ली का दुर्भाग्य है कि राष्ट्रपति भवन और संसद भवन यमुना नदी से दूर है। अगर ये लंदन के राजभवन और संसद भवन की तरह ही अपनी नदी के किनारे बने होते तो नदी में बहते मैले की दुर्गंध सरकार की नाक तक पहुँचती। शायद दिल्ली में भी वह हो पाता जो सन् 1858 में लंदन में हुआ था।
2. सन् 1858 के सूखे और गर्मी में नदी में सड़ता शहर का मल-मूत्र खदबदाने लगा था। इससे जो बदबू उठी उसे आज भी 'द ग्रेट स्टिंक' के नाम से याद किया जाता है।
3. लंदन में साँस लेना दूभर हो गया था। लोगों का घर से निकलना बंद हो गया था। नदी के किनारे बने संसद भवन के भीतर हो रही कार्यवाही कई बार असहनीय बदबू की वजह से रोकनी पड़ी। दुर्गंध दूर करने के लिए खिड़कियों पर चूने में भिगोए पर्दे टांगे गए। एक सांसद ने तो यह प्रस्ताव तक रखा कि संसद को नदी के पास से हटा कर कहीं और ले जाया जाए। इस बदहवासी की वजह से संसद के सामने सीवर बनाने का विधेयक लाया गया। 18 दिन के भीतर ही यह पारित भी हो गया और कानून बन गया।
4. सन् 1596 में ईजाद हुआ फ्लश कमोड लंदन में अब चल पड़ा था। पानी से मैला बहाने की आदत लोगों में आ चुकी थी। शहर में रहने वालों का मल-मूत्र टेम्स नदी में ही बहाया जाता था। लंदन की टेम्स उन दिनों दुनिया की सबसे प्रदूषित नदी थी। मैले से अटी एक भूरी नाली, जिसमें कोई मछली नहीं दिखती थी।
5. एक बार रानी विक्टोरिया और उनके पति एलबर्ट नदी के किनारे टहलने निकले, किंतु सड़ते मैले की बदबू से भाग कर एकदम वापस अपने महल के अंदर पहुँच गए। लोगों को रानी को यह सच बताने में शर्म आ रही थी कि टेम्स नदी लंदन शहर का शौचालय बन चुकी है। उस समय लंदन विश्व का सबसे बड़ा, ताकतवर और आधुनिक शहर था। इस ताकतवर साम्राज्य, उसकी संसद और उसकी रानी की नाक में ऐसा दम कैसे हुआ?
6. मध्यकाल से ही यूरोप के शहरों में लोग घर के एक कोने में एक मर्तबान में मल त्यागते और उसे खाली कर देते थे सड़क पर, या घर के ही नीचे बने गड्ढे में जिसे 'सेसपिट' कहा जाता था। लंदन के आसपास के किसान पैसा दे कर इन गड्ढो को खाली करते थे और मल-मूत्र को अपने खेत में खाद की तरह इस्तेमाल करते थे। किसानों से हुई इस कमाई को मकान मालिक सेसपिट की देखरेख में लगा देते थे।
7. कुएँ और हैंडपंप के अलावा लंदन के कुछ इलाकों में पाइप 17 वीं शताब्दी से ही पहुँचने लगे थे। इस्तेमाल होने के बाद मैला पानी सेसपिट में पहुँच जाता था। इतने पानी की वजह से गड्ढे उफनने लगे, मैला पानी सड़कों पर बह कर आने लगा। सन् 1800 के आसपास शहर में नालियाँ बनने लगीं। फ्लश वाले शौचालय का इस्तेमाल भी फैल रहा था।
8. सेसपिट उन नालों में बहने लगे, जो सीधे टेम्स नदी में खुलते थे। अब मैला नदी में विसर्जित होने लगा। जैसे-जैसे नदियाँ दूषित होती गईं, शहर में पानी की आपूर्ति करने वाली कंपनियों ने लंदन से दूर, नदी के ऊपरी हिस्सों से पानी खींचना शुरू कर दिया। नदी में पानी कम, मैला ज्यादा रहने लगा।

(सोपान जोशी कृत 'जल,थल,मल' पुस्तक से साभार)

-राष्ट्रीय अध्यक्ष, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर (राज.)

ध्यान-विषयक जिज्ञासाएँ और समाधान

श्री कन्हैयालाल लोढ़ा

जिज्ञासा– ध्यान किसे कहते हैं?

समाधान– चित्त की एकाग्रता या स्थिरता को ध्यान कहा जाता है। चित्त की यह एकाग्रता पाप रूप अशुभ प्रवृत्तियों में भी हो सकती है और पुण्य, संवर व निर्जरा रूप शुभ प्रवृत्तियों में भी हो सकती है। साधना के क्षेत्र में शुभ प्रवृत्तियों में चित्त की एकाग्रता रूप ध्यान को ही स्थान दिया गया है यथा–

चित्तस्सेगग्गया हवइ झाणं

-आवश्यक निर्युक्ति, 1456

ध्यानं तु विषये तस्मिन् एक प्रत्ययसंतति:

-अभिधान चिंतामणि, 9184

तत्र प्रत्ययैकतानताध्यानम्।

-योगसूत्र, 3.12

अर्थात् चित्त की एकाग्रता ही ध्यान है।

द्रव्य संग्रह, गाथा 55 के अनुसार ध्यान-साधक ध्येय के विषय में एकाग्रचित्त होकर जिस किसी पदार्थ का चिन्तन करता हुआ समस्त इच्छाओं से विमुक्ति रूप स्थिति को प्राप्त होता है, उस समय उस ध्यान को निश्चय ध्यान कहा गया है। अर्थात् कषाय को दूर करने तथा चित्त को स्थिर करने के लिये पंच परमेष्ठी आदि भी ध्येय होते हैं। इसके पश्चात् अभ्यास हो जाने पर, चित्त स्थिर होने पर शुद्ध आत्मा का स्वरूप ही ध्येय हो जाता है।

मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह, किं वि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ, इणमेव परं हवेज्झाणं।।

-द्रव्यसंग्रह, 56

हे भव्य। कुछ भी शरीर की चेष्टा मत कर, कुछ भी वचनालाप मत कर, कुछ भी संकल्प-विकल्प रूप चिंतन मत कर। इससे आत्मा स्थिर दशा को प्राप्त होकर स्वयं अपने रूप में लीनता को प्राप्त होगी। यही उत्कृष्ट ध्यान है।

जिज्ञासा– संकल्प-विकल्प रूप चिन्तन न करना ध्यान है, ऐसा कहा गया है। परन्तु चित्त की ऐसी निर्विचार, निर्विकल्प स्थिति तो वीतराग दशा में शुक्ल ध्यान में ही संभव है। हम तो छद्मस्थ हैं फिर हमारे चित्त की निर्विकल्प, विचारशून्य अवस्था कैसे सम्भव है?

समाधान– चित्त की निर्विकल्पता की स्थितियाँ अनेक हैं, यथा- 1. प्रगाढ़निद्रा, मद्यपान, क्लोरोफार्म सूँघने आदि से होने वाली निर्विकल्पता, 2. सम्मोहन (हिप्नोटिज्म) एवं योगनिद्रा से जनित निर्विकल्पता, 3. मोह के क्षयोपशम, उपशम या क्षय से अभिव्यक्त निर्विकल्पता। इनमें ध्यान के द्वारा जो तृतीय प्रकार की निर्विकल्पता होती है वह राग-द्वेष आदि विकारों का शमन करने पर ही प्राप्त होती है। यही निर्विकल्पता साधना में उपयोगी है। निद्रा, मद्यपान, सम्मोहन आदि से प्राप्त निर्विकल्पता जड़तायुक्त होती है, जबकि ध्यान में चेतनायुक्त निर्विकल्पता होती है। वह कषायों के उपशम आदि होने पर अनुभव की जा सकती है।

वैराग्य व विवेक द्वारा मोह के क्षयोपशम, प्रशम या मंद होने पर यह निर्विकल्प स्थिति उत्पन्न होती है। यह निमित्त जनित या आरोपित न होकर अंतरात्मा से प्रकट होती है। ज्ञान, वैराग्य, विवेक से इसकी उपलब्धि होती है। इसी प्रक्रिया को धर्मध्यान कहा है। यह साधना का प्राण है। यह स्थिति ध्यान में उपादेय है।

मोह का उपशम, उपशम सम्यक्त्व व उपशम श्रेणी में होता है। इसमें निर्विकल्प स्थिति होती है तथा मोह का क्षय व क्षायिकभाव क्षपक श्रेणी में होता है।

इसमें निर्विकल्प बोध होता है जिससे कैवल्य की उपलब्धि होती है।

जिज्ञासा– ध्यान में चित्त शान्त न हो तो क्या करना चाहिये?

समाधान– चित्त अति सूक्ष्म शक्ति सम्पन्न है। अत: उसे बांधना, स्थिर रखना अति कठिन है। एक विषय से दूसरे में जाना इसका कार्य है। अत: चित्त का शान्त होना अति कठिन है। इसलिये कुछ समय चित्त को शान्त रखने का अभ्यास करना चाहिये। ध्यान में अपनी ओर से विषय-कषाय को उत्पन्न करने वाला किसी प्रकार का चिन्तन नहीं करना चाहिये। फिर भी चित्त में भाव उठें तो तटस्थ रह द्रष्टा बन कर देखना चाहिये, उनके प्रवाह में नहीं बहना चाहिये। यदि यह प्रयास या प्रयोग सफल न हो और मन विषय-कषाय की ओर जाने लगे तो बारह भावनाओं का चिन्तन करें या श्वास के आवागमन को देखें।

जिज्ञासा– ध्यान कितने समय व कैसे स्थान पर करना चाहिये?

समाधान– ध्यान की स्थिरता का समय अंतर्मुहूर्त अर्थात् 48 मिनट तक कहा है। वर्तमान में शारीरिक स्थिति देखते हुए सामान्यत: एक घण्टे का ध्यान सहज लगाया जा सकता है। चित्त शान्त रहे तब तक ध्यान करना चाहिये। अभ्यास के रूप में प्रात: और सांय जितने काल और जितनी बार किया जा सके, ध्यान का अभ्यास करना उत्तम है।

जहाँ चित्त को अशान्त करने वाले बाहरी-निमित्त कम हों, वही स्थान ध्यान के लिये उपयुक्त है। विकारी वातावरण से रहित धर्मस्थान, घर की छत या अन्य प्रदेश में एकान्त स्थान अभ्यास दशा में उपयुक्त हो सकते हैं।

जिज्ञासा– स्वाध्याय, ध्यान और कायोत्सर्ग में क्या अन्तर है?

समाधान– स्वाध्याय– स्वाध्याय शब्द स्व और अध्याय, इन दो शब्दों से बना है। स्व का अर्थ है अपना और अध्याय का अर्थ है अध्ययन करना। अत: अपने आत्मा के स्वरूप और आत्मा पर लगने वाले दोष, दोषों के कारण व परिणाम, दोषों की निवृत्ति व निवारण के उपाय आदि का अध्ययन करना स्वाध्याय है। स्वाध्याय में तत्त्वों के चिन्तन की प्रधानता होती है।

ध्यान–जिस प्रकार वायु के कारण जल में तरंगें उठती रहती हैं इसी प्रकार राग या रति भाव के कारण चित्त में तरंगें उठती रहती हैं, संकल्प-विकल्प उठते हैं। जिससे चित्त चलायमान व अस्थिर रहता है। स्वाध्याय से संसार का अनित्य, अशरण, दु:खमय वास्तविक रूप सामने आता है जिससे विरति या वैराग्य की जागृति होती है तथा संकल्प-विकल्प एवं चित्त को चंचल बनाने वाले राग-रति भावों की प्रवृत्ति रुकती है। अत: चित्त में संकल्प-विकल्प उठना बन्द हो जाता है। चित्त इधर-उधर दौड़ना छोड़ कर एकाग्र हो जाता है। इस प्रकार चित्त की वृत्ति का बाह्य-विषयों से हट कर अन्तर्मुखी होकर आत्म-स्वरूप में स्थित होना, तल्लीन होना, ध्यान है। ध्यान स्वाध्याय से अगला कदम है।

कायोत्सर्ग– काया का उत्सर्ग कर देना अर्थात् काया से अपने को भिन्न अनुभव करना, काया के प्रति मोह या ममता न रहना, कायोत्सर्ग है। इससे काया पर आए उपसर्गों, पीड़ाओं कष्टों आदि अनुकूल-प्रतिकूल स्थितियों में भी चित्त में समभाव रहता है, आकुलता-व्याकुलता नहीं होती है। ध्यानावस्था में आई आत्म-स्वरूप की रमणता व निमग्नता की प्रगाढ़ता से ही ऐसी स्थिति आती है। अत: कायोत्सर्ग ध्यान से आगे की स्थिति है।

स्वाध्याय से ध्यान की, ध्यान से कायोत्सर्ग की उपलब्धि होती है। स्वाध्याय, ध्यान और कायोत्सर्ग, साधना के क्रमिक विकास की कक्षाएं हैं। जिस प्रकार जो छात्र जिस कक्षा में अध्ययन करने में अक्षम हो उसके लिये उस कक्षा से पूर्ववर्ती कक्षा का अध्ययन करना उपयुक्त रहता है; इसी प्रकार जो साधक कायोत्सर्ग में स्थिर न रह सकें उन्हें ध्यान करना चाहिए।

जो ध्यान में स्थित न रह सकें, उन्हें भावनाओं का चिन्तन करना चाहिये और जिनका भावनाओं के चिन्तन में भी मन न लगे उन्हें स्वाध्याय करना चाहिये।

जिज्ञासा– ध्यान से क्या लाभ है?

समाधान– ध्यान के अगणित लाभ हैं, उनको दो भागों में बांट सकते हैं-मुख्य और आनुषंगिक। ध्यान का मुख्य लाभ मोह का शमन, उपशमन एवं क्षय होना है। जिससे आत्म-स्वरूप का दर्शन होता है णाणसार के रचयिता योगीराज पद्मसिंह ने कहा है–

पाहाणम्मि सुवरणं, अग्गी विणा पओएहिं।
ण जहा दीसन्ति इमो, झाणेण विणा तहा अप्पा।।

अर्थात् जैसे पाषाण में स्वर्ण और काष्ठ में अग्नि बिना प्रयोग के नहीं दीखती; इसी प्रकार ध्यान के प्रयोग के बिना आत्मानुभूति नहीं होती।

ध्यान निर्जरा का आभ्यंतर अंग है। इससे असंख्य जन्मों के कर्म दलिकों की निर्जरा अंतर्मुहूर्त में हो जाती है। ध्यान से ही आत्म-विकास होकर केवलज्ञान व केवलदर्शन की प्राप्ति होती है और अंत में सर्व कर्मो का क्षय होकर मुक्ति मिलती है।

ध्यान में मन, वचन व तन के योगों की अशुभ या पाप प्रवृत्तियों का निरोध होता है तथा शुभ प्रवृत्तियों, पुण्य प्रकृतियों का संचरण होता है। योगों की अशुभ या पाप प्रवृत्तियों के निरोध से संवर होता है।

ध्यान का वास्तविक व मुख्य फल तो संवर, निर्जरा और मुक्ति ही है। पुण्य ध्यान का आनुषंगिक फल है। जिस प्रकार गेहूँ के साथ भूसा अनायास ही पैदा होता है इसी प्रकार ध्यान के फलस्वरूप प्राप्त संवर और निर्जरा के साथ पुण्य अनायास सहज मिलता है।

वर्तमान में ध्यान का उपयोग मानसिक एवं शारीरिक रोगों के निवारण में भी किया जाने लगा है। परन्तु इस उद्देश्य से ध्यान करना चिन्तामणि रत्न का उपयोग चटनी या चूर्ण बांटने-पीसने के लिये करना है। आध्यात्मिक शक्तियों के विकास के लिये किए गए ध्यान से मानसिक एवं शारीरिक रोगों का निवारण आनुषंगिक फल के रूप में स्वत: ही हो जाता है।

जिस प्रकार पथिक को विश्रांति से शांति मिलती है और शांति से शक्ति स्वत: अर्जित होती है; इसी प्रकार साधक को ध्यान रूप विश्रांति से चित्त की शांति मिलती है। इससे चित्त में असीम शक्ति अर्जित होती है।

निद्रा में शक्ति प्राप्ति के लिये न भोजन किया जाता है और न दवा ली जाती है फिर भी निद्रा में विश्रांति से शारीरिक शक्ति प्राप्त होती है, किन्तु निद्रा में जड़ता आती है। इस जड़ता रूप विश्रांति से भी जब इतनी शक्ति प्राप्त होती है तब ध्यान की पूर्ण चेतनता व सजगता युक्त विश्रांति या शांति से कितनी असीम शक्ति प्राप्त हो सकती है इसकी कल्पना नहीं की जा सकती, केवल अनुभव से ही जाना जा सकता है। आशय यह है कि ध्यान शांति, शक्ति पुण्य, संवर, निर्जरा तथा मोक्ष फल का दाता है।

जिज्ञासा– अनित्य, अशरण आदि भावनाओं के चिन्तन से क्या व्यक्ति अपने परिवार, समाज, स्वधर्मी बन्धु, गुरु आदि को पराया समझ कर उनकी सेवा से अपने को नहीं हटा लेगा?

समाधान– इन भावनाओं के चिन्तन से मोह घटता है। मोह घटने से अपने सुख का संपादन या स्वार्थपरता घटती है और वात्सल्य भाव की वृद्धि होती है जो परोपकार व सेवा के रूप में प्रकट होती है। अत: इन भावनाओं के चिन्तन से मोह, ममता, हृदय की कठोरता, स्वार्थपरता, संकीर्णता घट कर प्रेम, आत्मीयता, सहृदयता, वत्सलता, वैय्यावृत्य एवं सेवा की वृद्धि होती है। अत: सच्चे साधक की भावात्मक प्रवृत्ति विषय-कषाय-मोह की निवृत्ति के लिये होती है तथा क्रियात्मक प्रवृत्ति परिवार, समाज आदि निकटवर्ती जन समाज एवं पीड़ित प्राणियों की सेवा के लिये होती है।

जिज्ञासा 8– आजकल हीलिंग का बड़ा प्रचार है। क्या ध्यान और हीलिंग एक ही क्रिया हैं?

समाधान– हीलिंग इंग्लिश शब्द है जिसका अभिप्राय है–चिकित्सा। ध्यान का उद्देश्य कर्मों का क्षय कर आत्मा को निर्विकार बनाना है, जबकि हीलिंग का उद्देश्य शारीरिक एवं मानसिक रोगों का ध्यान के द्वारा निवारण करना है। हीलिंग में मन को किसी बिन्दु पर एकाग्र करके शक्ति को केन्द्रित किया जाता है। फिर संकल्प बल द्वारा शक्ति का रोगी पर संप्रेषण किया जाता है। दृष्टि एवं हाथ की अंगुलियों के स्पर्श से रोगी पर शक्तिपात किया जाता है। हीलिंग का मुख्य कार्य है–संकल्प बल द्वारा शक्ति संचय करना, फिर रोगी अथवा अन्य व्यक्ति पर शक्तिपात करना। हीलिंग सम्मोहन क्रिया का ही एक विशेष रूप है। इस क्रिया का प्रयोग व्यक्तिगत एवं सामूहिक, दोनों प्रकार से किया जाता है और अभी यह प्रयोगावस्था में ही है। इसमें अनेक प्रकार के खतरों एवं हानियों की भी सम्भावना रहती है। ध्यान हीलिंग से बहुत ऊँची स्थिति है। उसमें खतरे व हानि की किंचित् भी सम्भावना नहीं है। ध्यान से अनेक प्रकार की ऋद्धियों–सिद्धियों व लब्धियों की उपलब्धि होती है परन्तु सच्चा ध्यानी उनके चामत्कारिक उपयोग से अपने को बचाता है। कारण कि ध्यान जैसी महान साधना का उपयोग भौतिक उपलब्धियों के लिये करना वैसा ही है जैसा चिंतामणि रत्न का उपयोग कोयला तोलने की तराजू में बांट के रूप में करना। इसीलिये भारतीय महर्षि ध्यान–जन्य अगणित चमत्कारों से परिचित एवं अधिकारी होते हुए भी अपने को इनसे सदैव बचाते रहे हैं। ध्यान से प्राप्त आंतरिक समता, शान्ति, शक्ति एवं परमानन्द की तुलना में हीलिंग आदि के लाभ तथा चमत्कार वैसे ही तुच्छ हैं जैसे बहुमूल्य रत्नों की तुलना में कंकर तुच्छ हैं।

जिज्ञासा– वर्तमान में ऐसे यंत्र निर्मित हो गये हैं, जिनका उपयोग कर ध्यान की अवस्था का अनुभव कर सकते हैं, ध्यान–साधक के लिए इन यंत्रों की कितनी उपयोगिता है?

समाधान– वर्तमान में ध्यान व योग केन्द्रों का मुख्य उद्देश्य शारीरिक आरोग्य एवं मानसिक शान्ति प्राप्त करना है। इसके लिए विविध पद्धतियां प्रचलित हो गई हैं। इनके साथ ही यंत्रों का भी उपयोग होने लगा है, माइण्ड मशीन भी एक ऐसा ही यंत्र है। इसका उपयोग मानसिक शान्ति पाने, तनाव मिटाने, सम्मोहन करने आदि में होता है। इस मशीन को मस्तिष्क पर 10 मिनट से 60 मिनट तक के समय के लिए सेट कर दिया जाता है। फिर हैडफोन और चश्मे को लगाया जाता है। तत्पश्चात् मशीन का बटन दबा दिया जाता है। इसमें आंखें मूंद कर बैठना होता है। इससे मस्तिष्क तनावमुक्त और मन शान्त हो जाता है। वह मशीन के प्रकाश व ध्वनि पद्धति पर आधरित है। इससे धीमा और भिन्न–भिन्न प्रकाश निकलता है एवं एक विशेष प्रकार की ध्वनि उत्पन्न होती है। जिससे मानसिक तनाव, हीनभावना व थकान दूर होती है।

माइण्ड–मशीन के उपर्युक्त लाभ तात्कालिक होते हैं, स्थायी नहीं होते हैं। कारण कि अपच आदि शारीरिक रोगों एवं तनाव, हीनभावना, अभाव, द्वन्द्व आदि शारीरिक रोगों का मुख्य कारण असंयम व विषयासक्ति, भोग–लिप्सा, राग–द्वेष आदि विकार–वासनाएं हैं। इन विकार–वासनाओं का निवारण योग के यम–नियम, प्रत्याहार, ध्यान–धारणा–समाधि आदि अंगों से ही सम्भव है, माइण्ड–मशीन से आन्तरिक दोष नष्ट नहीं होते हैं। अतः दोषजन्य शारीरिक व मानसिक विकार व दुःखों का निवारण माइण्ड–मशीन या अन्य किसी भी यंत्र से सम्भव नहीं है। इन यंत्रों से मस्तिष्क में तरंगें पैदा की जाती हैं। यंत्र में लगे इयरफोन आदि से शिथिलीकरण प्रारम्भ होता है जिससे मन को विश्राम मिलने लगता है; ऐसा अनुभव होने लगता है कि विचार शान्त होने लगते हैं, पहले अर्द्ध–निद्रा का, फिर धीरे–धीरे पूर्ण निद्रा की अवस्था का, पूर्ण विश्रान्ति का अनुभव होता है, भीतर में सब शीतल व शान्त हो जाता है। दस मिनट पश्चात् यंत्र को हटाने पर ऐसा अनुभव होता है कि चित्त शान्त, स्थिर, निश्चल हो गया है। चित्त

चिन्ता, चिन्तन और तनाव रहित हो गया है। जीवन आनन्द, प्रसन्नता, प्रफुल्लता से भरा लगता है। इन सब अनुभूतियों के लिए व्यक्ति को कोई अभ्यास व अनुष्ठान नहीं करना पड़ता है, क्योंकि यह सारा कार्य यंत्र-निर्मित स्वत: होता है।

यंत्र-निर्मित ध्यान की इस स्थिति की तुलना स्वप्नरहित गहन निद्रा से कर सकते हैं। जैसे गहन निद्रा में शरीर व मन के संकल्प-विकल्प, चिन्तन, चिन्ता आदि सब शान्त हो जाते हैं इसी प्रकार यंत्र द्वारा भी यही कार्य होता है, किन्तु गहन निद्रा से जग जाने के पश्चात् वह सब अनुभूति लुप्त या तिरोहित हो जाती है, परन्तु यंत्र के हटाने के पश्चात् प्रयोगकर्ता व्यक्ति को चित्त की शान्त एवं प्रसन्न अवस्था का अनुभव कुछ समय तक रहता है। जाग्रत अवस्था में ऐसा अनुभव पहली बार होता है जो विस्मयकारी व बड़ा अच्छा लगता है। परन्तु यह ध्यान नहीं है। कारण कि कुछ समय पश्चात् यह शान्ति-प्रसन्नता वैसे ही भंग हो जाती है; जैसे निद्रा से जगने के पश्चात् निद्रा अवस्था में हुई चित्त की शान्त निश्चिन्त एवं सुखद अवस्था भंग हो जाती है। इस प्रकार यंत्र द्वारा निर्मित ध्यान की यह अवस्था निद्रा का ही दूसरा रूप है जो यंत्र के द्वारा निर्मित किया गया है। यह अवस्था राग-द्वेष, मोह, संकल्प-विकल्प के नष्ट होने से नहीं होती है, बल्कि मन की शक्ति के रूपान्तरण व निष्क्रिय होने से होती है। जो कुछ काल के पश्चात् पुन: पूर्व अवस्था में आ जाती है। इसमें चित्त में उत्पन्न होने वाले संकल्प-विकल्प, चिन्ता, भय, तनाव, हीनभाव, द्वन्द्व, संघर्ष के कारणों का अर्थात् राग-द्वेष, मोह, विषय-कषाय आदि का नाश नहीं होता है। ध्यान में यह अवस्था राग-द्वेष, मोह आदि के क्षय होने से होती है।

जिज्ञासा– ध्यान में शरीर की संवेदनाओं को देखने से राग, द्वेष व मोह की ग्रंथियों का भेदन कैसे होता है?

समाधान– उपर्युक्त प्रश्न का समाधान पाने के लिये हमें प्रकृति के इस नियम को ध्यान में लाना होगा कि जैसा अन्दर है, वैसा ही बाहर होता है। दूसरे शब्दों में, भूमि में जैसा बीज डाला जाता है वैसा ही फल बाहर प्रकट होता है। यही नियम हमारे जीवन पर भी घटित होता है। अर्थात् हमारे अंतर्जगत् में राग-द्वेष की जैसी लहरें उठती हैं, शरीर पर वैसी ही संवेदनाएं तनाव के रूप में उत्पन्न हो जाती हैं। जितना राग-द्वेष व विषय-कषाय तीव्र होता है, उतना ही मन तीव्र तनाव से भर जाता है और यही तनाव शरीर पर संवेदनाओं के रूप में प्रकट होता है। राग-द्वेष बीज रूप हैं और संवेदनाएं उनके फल के रूप में हैं। इसलिये भावनाओं को, आंतरिक इच्छाओं को, परिणाम कहा गया है, कारण कि आतंरिक इच्छाओं (परिणाम) के अनुसार ही बाहरी जगत् में परिणाम (फल) आता है।

ऊपर बताया गया है कि संवेदनाएं उत्पन्न होने का कारण हमारे अन्तर् में रहे हुए विकार ही हैं। ऐसा कभी नहीं होता कि अन्तर् में विकार रहे और बाहर संवेदना प्रकट न हो। इसे ऐसे भी कहा जा सकता है कि अन्दर के विकार मिटने पर बाहर की संवेदनाएं मिट जाती हैं और बाहर की संवेदनाओं का मिटना भीतर के विकारों के मिटने का द्योतक है। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि बहिर्मुखी अवस्था में संवेदनाओं का अनुभव न होना, संवेदना-मिटना नहीं है अपितु मोह के कारण जड़ता उत्पन्न होना है।

जब साधक कर्तापन और भोक्तापन के भाव को छोड़ कर द्रष्टाभाव से समभावपूर्वक संवेदनाओं को देखता है, संवेदनाओं की अनुकूलता और प्रतिकूलता में सुख-दु:ख का भोग नहीं करता है अर्थात् किसी प्रकार की प्रतिक्रिया नहीं करता है तो उसका चित्त शान्त हो जाता है। चित्त के शान्त होते ही स्वत: तनाव कम होता है और तनाव कम होना इस बात का द्योतक है कि अन्दर में राग-द्वेष का उद्वेग कम हो रहा है। अन्दर राग-द्वेष में कमी आने से बाहर प्रकट होने वाली घनीभूत संवेदनाओं में बिखराव उत्पन्न होता है। फलत: संवेदनाओं का विभाजन होने लगता है और अन्त में संवेदनाएं छोटे-छोटे टुकड़े होकर लुप्त हो जाती हैं। राग-द्वेष या

संवेदनाओं की सघनता ही ग्रंथियां हैं। जैसे रुई की गांठ में रुई सघन होती है तो न वह बिखरती है और न आग से पूरी तरह जल पाती है। परन्तु जब गांठ खोल देते हैं तो रुई बिखर जाती है और फिर उसे धुन कर एक-एक तार अलग कर दिया जाता है तो वह नि:सत्त्व हो जाती है। इसी प्रकार संवेदनाओं को समताभाव की गहराई से देखने से राग-द्वेष की सघनता घटती जाती है और जैसे-जैसे राग-द्वेष की सघनता घटती जाती है वैसे-वैसे उस राग-द्वेष से सर्जित-संवेदनाओं का विसर्जन होना आरम्भ हो जाता है। इस प्रकार ध्यान-साधना में समताभाव का द्रष्टाभाव की जितनी-जितनी गहराई बढ़ती जाती है, उतना ही अन्दर राग-द्वेष की ग्रंथियों का और बाहर संवेदना रूपी ग्रंथियों का विसर्जन-विघटन होता जाता है। समताभाव से सूक्ष्म संवेदनाओं का प्रकटीकरण व उनका विघटन बड़ी द्रुतगति से होता है। इसे ही कर्मों की उदीरणा व निर्जरा कहा जाता है।

उपर्युक्त यह सब अनुभव तब ही संभव है जब साधक संसार को अनित्य, अनात्म व दु:खद रूप में अनुभव करे, जिससे उसके हृदय में वैराग्य भावना जगे। वैराग्य भावना के बिना कोई भी साधक ध्यान में समता की गहराई में प्रवेश नहीं कर सकता। ध्यान-साधना द्वारा पदार्थों (पुद्गलों) की परिवर्तनशीलता के अनुभव से अनित्यता का बोध, पदार्थों के प्रति अपनेपन की मरीचिका के दूर होने के अनुभव से अनात्मत्व का बोध, तथा विषय-कषाय, राग-द्वेष के तनाव के अनुभव से दु:ख का बोध जितना-जितना अधिक गहरा होता जायेगा, उतने ही अंशों में ध्यान-साधना, राग-द्वेष व मोह की ग्रन्थियों को छेदने, भेदने व धुनने में सहायक होगी। जब तक मानव देह, धन आदि पदार्थों (पुद्गलों) को अथवा चित्त तथा चित्तवृत्तियों को नित्य, अपना व सुखदायक मानता रहेगा, उनसे सुख भोगने की रुचि का अभाव न होगा, तब तक ध्यान-साधना गहरी नहीं होगी।

तात्पर्य यह है कि ध्यान-साधना से राग-द्वेष, मोह आदि विकार क्षीण होते हैं और इन विकारों के क्षीण होने से ध्यान-साधना अधिक सबल बनती है। इस प्रकार ध्यान-साधना व विकार-क्षीणता, ये परस्पर पूरक व सहायक हैं। जब तक कोई भी साधक किसी भी प्रकार के सुख-भोग के लोभ से या सुख-भोग की रुचि से ध्यान करता है, तब तक वह समता व शान्ति के गहरे क्षेत्र में प्रवेश नहीं कर सकता। अत: केवल द्रष्टा बन कर बिना किसी भी प्रकार के फल की चाह की साधना करने से ही सफलता संभव है। यह ही ध्यान-साधना की पूर्णता है। **('जैन धर्म में ध्यान' पुस्तक से साभार)**

ईर्ष्या को छोड़ें

डॉ. एन.के खींचा (आर.ए.एस.)

क्रोध, काम, लोभ, अहंकार, ईर्ष्या आदि विकृतियाँ हैं। तब क्या करें? इन विकृतियों की निन्दा नहीं करनी है। बल्कि सतत चिन्तन, मनन एवं विश्लेषण से मन बदलेगा। मन में परिवर्तन लाने की कला है- ध्यान मार्ग। ईर्ष्या के जब भाव जगें तो मन को ध्यान में ले जाने का प्रयास करें। सर्वप्रथम मौन धारण कर शांत हो जायें। स्वयं को मन के विज्ञान को जानने वाला वैज्ञानिक बनना पड़ेगा। विचार करना है कि जब-जब ईर्ष्या के भाव जगते हैं तो मन व्याकुल हो जाता है और तुलना कर-करके दु:खी होता है। हम स्वयं तो दु:खी होते ही हैं। आस-पास के वातावरण को भी भारी भरकम कर देते हैं। खुशी के बजाय दु:खरूपी सागर में गोते लगाते हैं। जीवन विषाक्त बन जाता है। ईर्ष्या कैसे छूटे? उपाय सरल है, सुलभ है, उपाय है- ध्यान। उपाय है आलोचना न करना, तुलना न करना। प्रत्येक व्यक्ति अपने आपमें अद्वितीय है। जो भी अपने पास है उसे बांटने से मन हल्का हो जाता है, प्रेम भाव बढ़ता है। *-544, सिद्धार्थ नगर, जवाहर सर्किल, जयपुर-302017 (राज.)*

युवा-स्तम्भ

सजगता से मन की स्वस्थता

श्री सुन्दरलाल बी. मल्लारा

लम्बे अन्तराल के पश्चात् आज पुनः उसी बगीचे में पहुँचा तो देखा कि पौधों पर बड़े-बड़े ढेर सारे गुलाब खिले हैं और प्रातः के सुनहरे प्रकाश में लहलहा रहे हैं। उनकी मुस्कराहट, महक तथा उनकी अद्भुत सुन्दरता से पूरा परिवेश महक उठा है। फूल इतने बड़े हैं कि आपकी हथेली में न समाएँ। वे बड़ी शान से पौधों पर झूम रहे हैं और खिलने का आनन्द ले रहे हैं। आँखें उनके सौन्दर्य को पीने में लगी हैं। वे वहाँ से हटने का नाम नहीं लेती। यह अनूठा सौन्दर्य मन को पार कर हृदय की गहरायी में प्रवेश करता चला गया। वस्तुतः आँखें, मन, हृदय तथा रोमरोम उन फूलों के साथ एक रूप हो गये। मैं उन्हें देखता रहा और तब तक देखता रहा, जब तक कि सूर्य काफी ऊपर नहीं आ गया।

मैंने नये माली से पूछा-''इस बार वे फूल इतने बड़े-बड़े कैसे हो गये? पहले तो इतने बड़े कभी न थे।'' माली ने कहा-''बाबूजी पौधे तो बच्चे की तरह हैं। यदि उन्हें ठीक-ठीक खाना मिले, प्यार-मोहब्बत मिले, उन्हें बीमारी से बचाया जाए तो वे बड़े-बड़े फूल धारण करेंगे ही। अन्यथा वे कमजोर हो जायेंगे और ज्यादा दिन टिक भी न सकेंगे। पिछला माली नया-नया था। उसने पौधों को सही ढंग से छाँटा नहीं, उन्हें रोग के कीटाणुओं से बचाया नहीं, उनकी माटी को बदलकर उन्हें खाद दिया नहीं और प्रेम से उनकी सार सम्हाल नहीं की। यही कारण है कि पौधे मुर्झा गये, रोगग्रस्त हो गये और उन्होंने छोटे-छोटे गुलाब को जन्म दिया।''

जीवन भी तो एक ऐसा ही बगीचा है। उसमें भी प्रेम और आनन्द के फूल ऐसे ही तो खिलते हैं। यदि मन के पौधे पर ढेर सारी विचारों की शाखाएँ-प्रशाखाएँ निकल आयीं, उन्हें राग-द्वेष के कीटाणुओं ने घेर लिया, प्रेम-समता का उन्हें खाद न मिला, समय-समय पर सजगता के शस्त्र द्वारा उनकी काट-छाँट नहीं हुई तो मन कमजोर हो जाता है, उसकी शक्ति कुंठित हो जाती है। ऐसा मन, प्रेम, शान्ति और आनन्द का अनुभव नहीं कर सकता। उसकी ताजगी, सुकुमारता, निर्मलता समाप्त हो जाती है और वह अत्यन्त क्षीण हो जाता है। क्षीण मन न तो वस्तु को उसके यथार्थ रूप में देख सकता है, न सुन सकता है और न ही उसका अनुभव कर सकता है।

अतः यह बहुत जरूरी है कि हमारा मन सदा ताजा, सुकुमार और स्वच्छ रहे। वह चारों ओर फैले वैचारिक प्रदूषण को स्वीकार न करे और इसके लिये आवश्यकता है सजगता की। यदि सजगता का प्रकाश हम में है तो हम वैचारिक प्रदूषण से मुक्त रह सकेंगे। जैसे घर के मालिक के जगे रहने पर घर में चोर घुसने की हिम्मत नहीं करते। ज्यों-ज्यों यह सजगता गहन होती जाती है मन हलका और निर्दोष होता जाता है। ऐसा ही मन वर्तमान क्षण में जीने में समर्थ हो सकता है। इस सजगता का दूसरा नाम ही ध्यान है।

ध्यान वस्तुतः अपने आपको जानने और समझने की कुंजी है । वस्तुतः ध्यान के बिना जीवन अधूरा है, एकांगी है, बोझिल है, यह पूरा विश्व ही उसके लिये अर्थहीन है। जिस प्रकार अंधे के लिये कश्मीर की घाटियाँ, वहाँ की हिमाच्छादित चोटियाँ और बहरे के लिये सुमधुर संगीत अर्थहीन है, ठीक इसी प्रकार ध्यान के अभाव में हम आँखों के होते हुए भी अंधे और कानों के होते हुए भी बहरे हैं।

ध्यान के आगमन के साथ ही पूरा विश्व सौंदर्य से ओत-प्रोत लगने लगता है व प्रत्येक कण में विशिष्ट अनूठेपन का अहसास होने लगता है। तभी हम जान पाते हैं कि प्रेम क्या है! आनन्द क्या है! सौंदर्य क्या है!

(जिनवाणी, जनवरी 1990 से गृहीत)

-64, जिला पैट, जी.पी.ओ. के पास, जलगाँव-425001

नारी-स्तम्भ

आध्यात्मिक ऊर्जा के लिए तप की आराधना

डॉ. नरेन्द्र भानावत

जीवन की जीवन्तता, जागृति, शक्ति और प्राणवत्ता तप पर निर्भर है। जो जीवन जितना तपता है, उतना ही परिपक्व, पवित्र और पूर्ण बनता है। तप जीवन का ओज और प्रकाश है। तप रहित जीवन जड़ है, निष्क्रिय है, निस्तेज है। यदि जीवन में तप का स्पर्श नहीं है तो समझिए चारों ओर अंधेरा है, तम है। तम को मिटाने की, काटने की शक्ति तप में है। तप से ही पुरुषार्थ फलता है, फूल फल में बदलता है।

तप जाज्वल्यमान अग्नि के समान है। जिस प्रकार अग्नि से सारे दोष, विकार नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार तप के द्वारा जीवन की अशुद्धियां और विकृतियां नष्ट हो जाती हैं, जल ज़ाती हैं। विश्व में जितने भी सद्‌कर्म हुए हैं, उनके मूल में तप की शक्ति रही है। सभी धर्मों में तपस्या को महत्त्व दिया गया है। तपस्या के द्वारा ही संकल्प-शक्ति का विकास होता है और शक्ति मजबूत बनती है।

आज जीवन में जो अस्थिरता, आपा-धापी और वितृष्णा दिखाई देती है, उसका एक प्रमुख कारण तप का भाव न होना है। तप के द्वारा मन, वचन और कर्म की शक्ति केन्द्रीभूत होती है, उससे शक्ति का संचय होता है और विवेक पूर्वक शक्ति के उपयोग का संयमभाव जाग्रत होता है। तप की तुलना हम बिजली से कर सकते हैं। बिजली का आविष्कार अंधकार पर प्रकाश की विजय का प्रतीक है।

वैज्ञानिकों ने विद्युत्-उत्पादन के क्षेत्र में बड़ी प्रगति की है और विद्युत धारा से आज हमारे खान-पान, रहन-सहन, कृषि, उद्योग, कला, कौशल आदि विविध क्षेत्रों में आश्चर्यकारी परिवर्तन आया है पर यह परिवर्तन भौतिक सुख-सुविधाओं तक सीमित है। इससे जीवन सुविधापूर्ण बना है, ज्ञान-विज्ञान का क्षेत्र विस्तृत हुआ है, जीव-जगत् की जानकारी अधिक बढ़ी है। पर इसके समानान्तर दुःख और द्वन्द्व भी बढ़ा है, युद्ध और विग्रह का क्षेत्र विस्तृत हुआ है, उसमें सूक्ष्मता आयी है। बाहर की चकाचौंध में व्यक्ति दिग्भ्रमित हो गया है, अपने आत्म-तेज और आत्म-प्रकाश को विस्मृत कर बैठा है। बाहर के प्रकाश के भीतर का अंधकार अधिक घनीभूत और डरावना बन गया है। आत्मा का बिजलीघर दुर्घटनाग्रस्त है। उसे ठीक करने के लिए मन और इन्द्रियों को बाहर नहीं, भीतर की ओर मोड़ना आवश्यक है। बाहरी प्रवृत्तियों को आत्माभिमुख करना तप है। इसके लिए इन्द्रिय-निग्रह, मन पर नियंत्रण और संयम का सम्बल आवश्यक है। संयम के अभाव में तप की आराधना सार्थक नहीं लगती।

बिजली के आविष्कार से इन्द्रियों को तृप्त करने की जो सुख-सुविधाएं प्राप्त हुई हैं, उससे विषय-भोग की प्रवृत्ति अत्यधिक बढ़ी है, नये प्रकार की उपभोक्ता संस्कृति का विकास हुआ है। शब्द, रूप, रस, गंध, स्पर्श की संतृप्ति के नये-नये क्षेत्र खुले हैं। इससे दैहिक भूख अधिक बढ़ी है और वह निरन्तर बढ़ती जा रही है। उससे दैविक शक्तियों का ह्रास हुआ है अर्थात् आत्मिक गुण अपनी तेजस्विता खो बैठे हैं। व्यक्ति बाहर से भरा-भरा दिखता है, पर अन्दर से रिक्त है, खाली है। इस खालीपन को, रिक्तता को भरने की ताकत तथाकथित चकाचौंध पैदा करने वाली बिजली में नहीं है। आध्यात्मिक ऊर्जा से ही अन्दर का अंधकार मिट सकता है। यह आध्यात्मिक ऊर्जा तपस्या के द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

बिजली पैदा करने के लिए दो बातें आवश्यक हैं-एक दबाव (प्रेशर), जिससे वोल्टेज निर्मित होता है और दूसरा प्रवाह (फ्लो) जिससे विद्युत धारा सतत

गतिशील बनी रहती है। इसी प्रकार आध्यात्मिक ऊर्जा के लिए बाहरी तप (प्रेशर) और आभ्यन्तर तप (करेन्ट) आवश्यक है। बाह्य तप में इन्द्रियों पर नियंत्रण होता है। भूखा रहना, भूख से कम खाना, खाने में शुद्धता और नियमितता का ध्यान रखना, स्वाद के प्रति लोलुप न होना, कष्ट-सहिष्णुता का अभ्यास करना और बहिर्मुखता से अन्तर्मुखता की ओर बढ़ना बाह्य तप है। इस तप के द्वारा शक्ति अर्थात् ऊर्जा बनी रहती है। इसके अभाव में वोल्टेज घटता-बढ़ता रहता है, जिससे शॉक लगने का, आग लगने का, यूज होने का खतरा बराबर बना रहता है और जो स्वाभाविक शक्ति व ऊर्जा है उसका क्षरण होता रहता है। बिना उपयोग शक्ति चुकती रहती है, ऊर्जा का लीकेज होता रहता है।

जब मन और इन्द्रियों पर नियंत्रण और संयमन बना रहता है, तब आभ्यन्तर तप के रूप में विद्युत-धारा निरन्तर प्रवाहित होती रहती है, सतत प्रकाशमान और जागरूक बने रहने के लिए आवश्यक है कि हम अपनी की जाने वाली क्रियाओं पर, प्रवृत्तियों पर निरन्तर चौकसी रखें, गलती को गलती मानकर तुरन्त उसका प्रायश्चित्त कर लें और आगे ऐसी गलती पुनः न हो, इसके लिए बराबर सावधानी बरतें। मन में जब कभी अंधकार का, अहम् का भाव जगे, तब अपने को विनय भाव में प्रतिष्ठित करें, दूसरों के दोषों के प्रति क्रोध का भाव न लायें, उस पर दया, करुणा और प्रेम का भाव लाकर उसके दोषों को दूर करने में मददगार बनें, अपने दोषों को देखें और दूसरों के गुणों के प्रति प्रमोद का भाव लायें।

इससे अन्दर का अंधकार गलेगा, प्रकाश का प्रवाह उमड़ेगा, दूसरों के दुःख के प्रति करुणा जागेगी, दिल पिघलेगा और उनके कष्टों को, दुःखों को दूर करने में पुरुषार्थ जाग उठेगा, निष्काम सेवा भाव पैदा होगा, देह के प्रति ममता छूटेगी और अपने से परे जो शेष सृष्टि है, उसके साथ स्नेह का सूत्र बंधेगा, भीतर का पॉवर हाउस अधिक सशक्त बनेगा, अपने चित्त में उठने वाली विचार-तरंगें अपने आपको बुनेंगी, भीतर के मैल को गलायेंगी, स्वाध्याय का नया प्रकाश छिटकेगा, चित्त एकाग्र होगा, विषय-वासनाएं छूट जायेंगी, सारा ध्यान परम चेतना पर केन्द्रित होगा, तम के पिण्ड पिघल-पिघल कर बह जायेंगे, अन्दर की गांठें एक-एक कर खुलेगी, कर्म-मल निर्जरित होंगे, विद्युत धारा के प्रवाह में जितने भी अवरोध होंगे, वे कट जायेंगे, जड़ता समूल नष्ट हो जायेगी। रहेगी केवल चेतना ही चेतना। देह से ऊपर उठकर चेतना परम सत्य का साक्षात्कार करेगी, जहां देशकाल का बन्धन न होगा, जहां अनन्त ऊर्जा का अनन्त प्रकाश सब को समान रूप से आलोकित करेगा। तप की यह आराधना सच्ची आराधना है। इसी आराधना के बल पर प्राण धारा सतत प्रवहमान और प्रकाशमान बनी रहती है।

आज की हमारी तप-साधना में बिजली का प्रेशर तो है, पर फ्लो नहीं है, प्रवाह नहीं है। पद-प्रभुता, यश-कीर्ति, प्रदर्शन-आडम्बर आदि ऊर्जा के प्रवाह को बाधित करते रहते हैं। तप की आराधना, मानसिक संतुलन और आत्म-जागृति की आराधना है। इसे हम घण्टों, दिनों और महीनों में बांट कर नहीं रख सकते। यह बंटवारा इसलिए है कि हमारी ऊर्जा 'लीकेज' होती हो तो हम रुककर, ठहरकर अपनी जांच कर लें, लेकिन लक्ष्य रहे अनन्त प्रकाश में लीन होने का, स्वयं प्रकाश बनने का। तपाराधना का लक्ष्य है-भोगवृत्ति से ऊपर उठकर त्याग वृत्ति में आना, अपनी आत्म-ऊर्जा की रक्षा करना, अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ना।

(जिनवाणी, अप्रेल 1991 से गृहीत)

मरण रा दूहा

डॉ. नरेन्द्र भानावत

मरण दुःख नीं दरद नीं, मरण महोछव भव्य।
जूना गाबा छोड़ ने, पैरै आतम भव्य।।1।।
घोर अंधारा में खवै, ज्यूं बिजळी आकाश।
चित्त री निरमलता सधै, मरण नसावै पाश।।2।।
तन री ज्वाला शान्त वै, जागै मन री जोत।
आगो-पाछो स्पष्ट वै, नवजीवन दे मौत।।3।।
जो नित है, वो नां मरै, मरै सो नांहि नित्य।
क्यूं झूरै, गाघा करै, यो कुदरत रो सत्य।।4।।
जनम साथ लाग्यो मरण, यो भव-भव रो सत्य।
जो जड़ काटै जनम री, अजर-अमर वो नित्य।।5।।

आत्मस्वरूप का बोध

डॉ. धर्मचन्द जैन

इसमें कोई सन्देह नहीं कि मनुष्य चेतनाशील है। उसमें अनन्त जिज्ञासाएँ हैं। वह बाह्य जगत् एवं उसमें विद्यमान प्रत्येक वस्तु के गुण-धर्म एवं विभिन्न प्राणियों के व्यवहार को जानना चाहता है। दूसरे मनुष्य किस प्रकार जीते हैं, वे क्या खाते हैं, वे कैसे रहते हैं, उनका पारिवारिक एवं सांस्कृतिक माहौल कैसा है, वे विषम परिस्थितियों में किस प्रकार का व्यवहार करते हैं, वे क्या नया कर रहे हैं आदि के सम्बन्ध में भी मनुष्य की जिज्ञासा रहती है। वह अपनी जिज्ञासाओं की पूर्ति हेतु अध्ययन, चर्चा, पर्यटन आदि का आलम्बन लेता है। मनुष्य को केन्द्र में रखकर ही अर्थशास्त्र, समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, कृषि-विज्ञान, चिकित्सा-विज्ञान, मनोविज्ञान, दर्शन, कला, संस्कृति, भूगोल-विज्ञान, अंतरिक्षविज्ञान, गणित, इतिहास, वाणिज्य, अभियांत्रिकी, भाषा-विज्ञान, व्याकरण, ज्योतिर्विज्ञान आदि विद्याओं का विकास हुआ है। जिज्ञासा के कारण नई शोध भी चलती रहती है एवं विद्या की नई शाखाएँ निरन्तर विकसित होती रहती हैं। कम्प्यूटर विज्ञान, जेनेटिक विज्ञान, पर्यावरण विज्ञान आदि अनेक विषय इसके उदाहरण हैं। मनुष्य ने बाहर का जगत् बहुत कुछ जाना है, किन्तु स्वयं के सम्बन्ध में प्रश्न किया जाए तो उत्तर नकारात्मक, सन्देहास्पद अथवा असन्तोषप्रद आता है। मनुष्य अपनी शरीर रचना के सम्बन्ध में विज्ञान की पुस्तकों से तथा चेतना के सम्बन्ध में वैदिक ग्रन्थों अथवा जैन-बौद्ध साहित्य से जानकारी कर लेता है। किन्तु शरीर एवं चेतना के सम्बन्ध को लेकर वह प्रायः अनुभव के स्तर पर सच्चाई को नहीं जानता। वह अधिकतर इस सम्बन्ध में भ्रमित ही रहता है।

प्रश्न यह है कि चेतनाशील तत्त्व क्या है? अनुभव के स्तर पर हम प्रायः शरीर को ही चेतनाशील समझते हैं एवं उसी में मैं मोटा हूँ, मैं दुबला हूँ, मैं काला हूँ, मैं गोरा हूँ, मैं लम्बा हूँ, मैं नाटा हूँ, मैं रोगी हूँ, मैं स्वस्थ हूँ आदि के रूप में बोध करते रहते हैं। शरीर के बल से ही व्यक्ति अपने को बलशाली तथा शरीर के निर्बल होने पर अपने को बलहीन मानता है। यह अनुभव अत्यन्त स्थूल अनुभव है, जो अधिकांश लोगों का अनुभव होते हुए भी ज्ञानियों की दृष्टि में सत्य नहीं है। शरीर से चेतन तत्त्व भिन्न है। उसे हम 'आत्मा' के नाम से जानते हैं। आत्मा में ऐसे अनेक गुण हैं जो उसे शरीर से पृथक् करते हैं। यह भी सच है कि आत्मा के कारण ही हमें शरीर में चेतना का अनुभव होता है। आत्मा के द्वारा देह छोड़ देने पर शरीर में चेतना का अनुभव नहीं होता। शरीर एवं चेतना का पारस्परिक सम्बन्ध अनादिकाल से चला आया है। तेजस एवं कार्मण शरीर चेतन आत्मा के साथ इस तरह सम्पृक्त हैं कि उनकी भिन्नता का ज्ञान सहजता से नहीं हो पाता है। वास्तव में तो शरीर एवं चेतना स्वरूप से भिन्न हैं। चेतना का लक्षण जानना एवं देखना (निर्विकल्प होना) है। जबकि शरीर इन लक्षणों से रहित है। शरीर में स्थित इन्द्रियाँ जानने में साधन बनती हैं। मन एवं बुद्धि भी जानने में साधन हैं, किन्तु जानने वाला उनसे भिन्न है। वह आत्मा है। श्रोत्रेन्द्रिय कभी यह नहीं कहती कि मैं जानती हूँ, चक्षुरिन्द्रिय भी ऐसा नहीं समझती कि मैं देखती हूँ। देखने वाला, सुनने वाला इन इन्द्रियों से पृथक् है, जो विभिन्न इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानों में समन्वय स्थापित करता है। शरीर में ऐसा सामर्थ्य नहीं कि विभिन्न इन्द्रियों से होने वाले ज्ञानों में वह एकता व समन्वय को स्थापित कर सके। किन्तु शरीर के प्रत्येक अंग में एवं प्रत्येक कोशिका में चेतना का प्रवाह होने से हम शरीर के साथ तादात्म्य का

अनुभव करते हैं तथा यह समझते हैं कि मैं बड़ा हो गया हूँ, मैं युवा हो गया हूँ अथवा मैं वृद्ध हो गया हूँ। शरीर का अपना धर्म है एवं आत्मा का स्वभाव उससे भिन्न है। फिर भी इनके पारस्परिक तादात्म्य का अनुभव होने से हम अपने को शरीर ही मानने लगते हैं तथा शरीर की हानि-वृद्धि में अपनी हानि-वृद्धि समझते हैं। शरीर एक साधन है, जिसका उपयोग भोग एवं योग दोनों में हो सकता है। जो व्यक्ति देह को आत्म स्वरूप समझता है वह भोग के मार्ग को अपनाता है तथा जो उसमें सन्देह करता है, उससे असन्तुष्ट होता है एवं देह से स्व की भिन्नता का अनुभव करने की साधना में तत्पर रहता है वह योग मार्ग को अपनाता है। मानव के शरीर की महत्ता इसी में स्वीकार की गई है कि वह शरीर के साथ इन्द्रिय ज्ञान एवं बुद्धिज्ञान से भी समृद्ध है।

जब मनुष्य अपने को देहरूप मानता है, तो उसके प्रति आसक्त होता है। बाह्य जगत् का सम्बन्ध भी प्रायः शरीर के कारण ही बनता है। बुद्धि के साथ तादात्म्य के कारण मनुष्य अपने को बुद्धिमान्, धन के स्वामित्व के कारण धनवान् तथा भूमि का स्वामी होने के कारण भूमिपति समझने लगता है। अपने को शरीर मानने के कारण ही सारे दोष उत्पन्न होते हैं- कामना, ममता और आसक्ति का बीज देहाभिमान में ही विद्यमान है। पर की चाह का अनुभव कामना को उत्पन्न करता है। फिर मानव कामना-पूर्ति के लिए प्रयत्नशील होता है। शरीर के कारण ही वह पुत्र-पत्नी, पिता-माता आदि परिवारजनों के प्रति ममत्व करता है। शरीर के सुख-भोग से जुड़े पदार्थों को प्राप्त करके उनके प्रति ममत्व करता है। कामना और ममता दुःख के हेतु हैं, अतः इनका त्याग करने के लिए अपने को शरीर से पृथक् अनुभव करने की आवश्यकता है। शरीर से चेतना के पृथक् होने का अनुभव ध्यान-साधना के अभ्यास द्वारा किया जा सकता है। जिस दिन शरीर से पृथक् आत्म-स्वरूप का अनुभव होगा, वह क्षण जीवन के सम्यक् उन्नयन का आधार बनेगा। आगम की भाषा में इसे सम्यग्दर्शन का प्रकटीकरण कहा जा सकता है।

विचार करने पर विदित होता है कि संसार में दो तत्त्व हैं- द्रष्टा एवं दृश्य। चेतना या आत्मा द्रष्टा है तो शरीरादि पदार्थ दृश्य। आत्मा के अतिरिक्त समस्त चराचर जगत् दृश्य है। दृश्य से सम्बन्ध विच्छेद होने पर ही निज आत्म-स्वरूप का सम्यक् बोध होना सम्भव है। हमें जो इन्द्रियाँ प्राप्त हुई हैं, उनसे बाह्य जगत् का एक सीमा तक ज्ञान किया जा सकता है, किन्तु स्व का बोध इन्द्रियों से होना सम्भव नहीं है, इन्द्रियाँ शब्द, रूप, गन्ध, रस एवं स्पर्श का ज्ञान कर सकती हैं, इनसे रहित आत्मस्वरूप का नहीं। आत्मा शब्द, रूप, गंध, रस एवं स्पर्श से रहित है, इसका अपना कोई आकार नहीं है। इसका अनुभव मन एवं बुद्धि से भी नहीं हो सकता। मन बाह्य पदार्थों को जानने एवं दुःख-सुख का अनुभव करने में कारण बनता है, किन्तु जानने वाला तो स्वयं आत्मा होता है। वह मन का विषय नहीं बनता। बुद्धि से भी आत्मा को सीधा नहीं जाना जा सकता, क्योंकि बुद्धि उसका साक्षात्कार नहीं कर सकती, वह आत्मा की सिद्धि में तर्क एवं अनुमान उपस्थित कर सकती है। हम बुद्धि से यह जान सकते हैं कि शरीर एवं आत्मा में विभिन्न आधारों पर भिन्नता होनी चाहिए। किन्तु बुद्धि से चेतना का साक्षात्कार नहीं हो सकता। इसलिए यह कहा जा सकता है कि चेतनाशील आत्मा का अनुभव स्वयं आत्मा के द्वारा ही हो सकता है। जब इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि को साधन न बनाकर स्व को जानने का प्रयास किया जाता है, तब आत्मा का स्वरूप बोध होता है।

आत्म-स्वरूप का बोध कराने के लिए वेदान्त में जीव को ब्रह्म स्वरूप कहा गया है- तत्त्वमसि। जैनदर्शन में भी जीव को सिद्ध स्वरूप बताकर उसके आत्मस्वरूप का बोध कराया जाता है। सिद्ध के गुण प्रत्येक आत्मा में स्वीकार किए गए हैं। यह एक विधि है, जिसके द्वारा किसी आत्मा को अपने गुण विकसित करने के लिए प्रेरित किया जाता है। यह मार्ग आस्था का मार्ग है। आस्था से यथार्थ को स्वीकार कर प्रत्यक्ष अनुभव के

लिए प्रयत्न किया जाता है। दूसरा मार्ग विवेक का मार्ग है, जो स्व और पर में, आत्म और अनात्म में, स्वरूपतः चेतन एवं अचेतन में भेद की प्रज्ञा जगाता है। सत्यनिष्ठ साधक स्व-पर का निरीक्षण करते-करते देह और आत्मा में भिन्नता का बोध कर लेता है। तीसरा मार्ग कायोत्सर्ग का मार्ग है, जिसमें काया से अपने को पृथक् अनुभव करने का अभ्यास किया जाता है, इसके लिए तटस्थता की आवश्यकता होती है। अपनी प्राचीन धारणाओं और मान्यताओं को छोड़कर इन्द्रिय एवं मन को निगृहीत करते हुए बुद्धि को तटस्थ कर काया से स्वयं को पृथक् अनुभव किया जाता है। देह एवं आत्मा में पृथक्ता का साक्षात् बोध कराने वाली यह उत्तम विधि है, जो सम्प्रति लुप्त हो गई है। कायोत्सर्ग में चित्त की एकाग्रता युक्त शुभ ध्यान सहायक है। शुभ ध्यान के माध्यम से देहादि पर-वस्तुओं की आसक्ति से उत्पन्न जड़ता को दूर किया जाता है एवं चिन्मयता के अनुभव की वृद्धि की जाती है।

एक बात जान लेने की है कि ममता, कामना, आसक्ति आदि की उत्पत्ति शरीर में नहीं होती है। यह मलिन चेतना में होती है। इस मलिनता का प्रभाव हमें मन के माध्यम से प्रतीत होता है। मन चंचल एवं दूषित हो जाता है। कभी-कभी उसे नियन्त्रित करना भी कठिन प्रतीत होता है। इसलिए चेतना की अशुद्धि को दूर करना आवश्यक है।

चेतना की अशुद्धि को दूर करने हेतु चेतना के स्वरूप का सम्यक् बोध अपेक्षित है। स्वयं का बोध स्वयं के द्वारा ही किया जा सकता है। गुरु एवं शास्त्र का उपदेश उसमें सहायक हो सकता है। भ्रान्त या भटके हुए साधक को अनुभवी महापुरुषों एवं वीतराग वाणी का मार्गदर्शन स्वरूपबोध में प्रकाश की किरण बन सकता है। पर-पदार्थ आत्म-स्वरूप का बोध नहीं करा सकते, स्वयं का बोध स्व के द्वारा ही हो सकता है। आत्मस्वरूप को जानने में पर-पदार्थों से वैराग्य एवं दुःखों से विमुक्ति की तीव्र अभिलाषा सहायक है। आत्म-बोध होने पर पदार्थों की कामना, उनके प्रति ममता एवं आसक्ति को त्यागना सरल हो जाता है। ऐसा व्यक्ति शान्ति, स्वाधीनता एवं अनन्त उदारता का अनुभव करता है। उसका सीमित दृष्टिकोण समाप्त हो जाता है।

आत्मा का बोध उसके गुणों से भी हो सकता है। आत्मा के दो प्रमुख गुण हैं- जानना और देखना (निर्विकल्प होना)। इन दोनों गुणों के आधार पर उसे ज्ञाता एवं द्रष्टा कहा जाता है। ये दोनों गुण आत्मा के ही हैं, शरीरादि के नहीं। इन्द्रियादि इसमें एक सीमा तक सहयोगी हैं, किन्तु ज्ञान इन्द्रिय एवं मन को नहीं आत्मा को ही होता है। अतः आत्मा ही ज्ञाता होता है। ज्ञाता होने एवं द्रष्टा होने का अनुभव जिसे होता है उसे आत्मा के होने में सन्देह नहीं होना चाहिए। उसमें अनन्त शक्ति भी स्वीकार की गई है। आत्मा की शक्ति शरीर की शक्ति से भिन्न है। शरीर को ही आत्मा मानने वाले लोग अवश्य यह तर्क दे सकते हैं कि शरीर को अन्नादि का भोजन नहीं दिया जाए तो ऐसा लगता है कि चेतना क्षीण हो गई है। यह प्रतीति सही होते हुए भी यहाँ कहना होगा कि शरीर एवं आत्मा के बीच एक अन्य कड़ी है- प्राणों की। प्राणों के अन्तर्गत पाँच इन्द्रियों की शक्ति, काया, वचन एवं मन की शक्ति भी सम्मिलित है, वह भोजनादि के द्वारा बनी रहती है। किन्तु आत्मा में जो शक्ति है- सहनशीलता, उदारता, क्षमाभाव, समता आदि गुणों को अभिवृद्ध करने की, वह शरीर में नहीं होती। आत्मा में ही इस प्रकार की शक्ति होती है। प्रभु महावीर सदृश अनेक साधक प्राणशक्ति के घटने पर भी आत्मशक्ति से तपस्या का आराधन करते रहे हैं। किन्तु स्थूल शरीर एवं आत्मा का साथ आहार-सेवन से ही बना रहता है। शरीर बल भी साधना में सहायक है, मनोबल एवं इन्द्रिय-निग्रह भी साधना में सहायक है, किन्तु आत्मा की शक्ति एवं उसके अन्य गुण शरीर पर निर्भर नहीं करते। इसलिए शरीर से आत्म-स्वरूप भिन्न है, इसका बोध साधक को आत्मबल का भान कराता है एवं वह शरीरादि की पराधीनता से भी स्वाधीन होने का प्रयत्न करता है।

-3 के 24-25, कुड़ी हाउसिंग बोर्ड, जोधपुर (राज.)

(जिनवाणी, अगस्त 2014 से गृहीत)

English-Section

Meditation And Its Benefits

Shri Shri Ravishankar

Meditation is relaxation. It is not about concentration, Its actually about de-concentration. Its not about focussing one's thoughts on one thing, but instead on becoming thoughtless.

General Benefits of Meditation:

1. A calm mind
2. Good Concentration
3. Relaxation and rejuvenation of the mind and body.
4. Better Clarity
5. Improved Communication.

Five Health Benefits of Meditation :

1. Lowers High B. P.
2. Lowers the levels of blood lactate, reducing anxiety attacks.
3. Decreases any tension- related pain, such as, headaches, ulcers, insomnia, muscle and joint problems.
4. Increases serotonin production that improves mood and behavior.
5. Improves the immune system.
6. Increases the energy level.

Eleven Mental Benefits of Meditation:

1. Decreases anxiety.
2. Emotion stability improves.
3. Creativity increases
4. Happiness increases.
5. Intuition develops.
6. Gains Clarity and peace of mind.
7. Problems become smaller.
8. Meditation sharpens the mind by gaining focus and expands through relaxation.
9. Brings the brainwave pattern into an alpha state that promotes healing.
10. Mind becomes fresh, delicate and beautiful.
11. It cleanses and nourishes you from within an calms you, whenever you feel overwhelmed, unstable or emotionally shut down.

Three Spiritual Benefits of Meditation :

1. Effortless transition from being something to merging with the infinite and recognizing yourself as an inseparably part of the whole cosmos.
2. In a meditative state, you are in a space of vastness, calmness and joy and this is what you emit into the environment, bringing harmony to the planet.
3. Meditation can bring about a true personal transformation.

Five Benefits of meditation for students:

1. Greater Confidence.
2. More focus and clarity.
3. Better health.
4. More mental strength and energy.
5. Greater dynamism.

If you have the mind and eye to see the pain of others, your own pain is automatically lessened.

ध्यान और उसके लाभ

श्री चौथमल जैन

वास्तविक सुख की खोज

मानव सुख चाहता है और सुखी बनने का उपाय भी करता है। किन्तु वह सुख के स्थान पर दुःख को ही प्राप्त करता है। कारण कि मानव वास्तविक सुख को नहीं पहचान पाया। मानव अज्ञानता के कारण क्षणिक सुख को ही स्थायी सुख मान बैठा है। क्षणिक सुख उषाकाल की लालिमा के समान है जो सूर्योदय के होते ही नष्ट हो जाती है और सूर्य के तेजोमय प्रकाश में परिणत हो जाती है, ठीक उसी प्रकार मानव आत्म-सुख की प्राप्ति के पूर्व उसकी प्रभा को ही पूर्ण सुख मानकर उस बीहड़ जंगल में भटक जाता है, फलस्वरूप वह दुःखी बना रहता है। क्षणिक सुख भी दुःख रूप है। अतः मानव को सुखाभास में न फँस कर वास्तविक सुख की प्राप्ति के मार्ग में अनेक प्रतिकूल और अनुकूल परीषह आते हैं। उन परीषहों से घबराकर मैदान छोड़कर भागना नहीं चाहिये बल्कि उन पर विजय प्राप्त करना चाहिए।

आत्मसुख की झलक और ध्यान साधना

भौतिक सुख जिसको अनुकूल परीषह, सुखाभास आदि कहा जाता है, उसे जीत कर ही विश्राम लेना चाहिए। आत्म-सुख के साथ भौतिक सुख तो दधिमन्थन करने पर घृत के साथ छाछ की भाँति स्वतः प्राप्त हो जाता है। अल्पज्ञजन उस भौतिक सुख को ही *आत्म सुख मान बैठते हैं। यही उनकी बुद्धि का दिवाला* है। भौतिक सुखों की प्राप्ति के समय मनुष्य की यह स्थिति हो जाती है कि उसमें आत्म-सुख और भौतिक सुख के भेद की पहिचान करने की निर्णयात्मक बुद्धि नहीं रहती। इस कमी को दूर करने के लिए पहले मानव को आत्म सुख की झलक दिखाना आवश्यक है। यह झलक ध्यान साधना के बिना नहीं दिखाई देती। अतः यदि हमें आत्मसुख प्राप्त करना है तो ध्यान की प्रक्रिया को अपनाना आवश्यक है। ध्यान साधना एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके बिना आत्म सुख तो क्या भौतिक सुख और साधारण सी वस्तुएँ भी प्राप्त नहीं हो सकती।

ध्यान की व्यावहारिकता

अतः सभी प्रकार के कार्यों में चाहे वे आध्यात्मिक हों या भौतिक, ध्यान के बिना लक्ष्य की प्राप्ति नहीं हो सकती। बिना ध्यान के की हुई क्रिया विफल हो जाती है। जैसे एक दर्जी कपड़े की कटिंग करते समय यदि ध्यान न रखेगा तो कपड़ा गलत कट जायेगा और उसके लक्ष्य की पूर्ति न हो सकेगी। उसका उस्ताद उससे कहेगा कपड़ा काटते समय तेरा ध्यान कहाँ था, ध्यानपूर्वक क्रिया न करने के कारण ऐसा हुआ। इसी प्रकार मूर्तिकार मूर्ति की रचना करते समय पहले उसके प्रत्येक भाग को ध्यान के द्वारा हृदयंगम कर लेता है। तब ही वह उसको मूर्त रूप देता है अन्यथा नहीं। यदि किसी विशेषज्ञ के द्वारा कोई त्रुटि निकाली जाती है तो मूर्तिकार उत्तर में कहता है यह बात उस समय मेरे ध्यान में नहीं आई। कहने का तात्पर्य यह है कि अदना-सा कार्य भी ध्यान के बिना नहीं हो सकता। इसी प्रकार जब कक्षा में शिक्षक बालकों को शिक्षण देता है तो उनमें जो बालक दत्तचित्त होकर श्रवण नहीं करता वह बालक उस ज्ञान से *वंचित रह जाता है। यद्यपि वह विद्यार्थी शरीरस्थ कक्षा में* उपस्थित है किन्तु उसका ध्यान अन्यत्र होने के कारण वह लक्ष्य की प्राप्ति नहीं कर सकता।

आत्म-ज्ञान और ध्यान

जब साधारण और छोटे-छोटे कार्यों में भी हम ध्यान की आवश्यकता अनुभव करते हैं तो आत्म-ज्ञान (मोक्ष) जैसे तत्त्व की प्राप्ति ध्यान के अभाव में कैसे

सम्भव हो सकती है। अतः आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिये ध्यान की नितान्त आवश्यकता है। ध्यान के बिना आत्मज्ञान को प्राप्त नहीं किया जा सकता।

ध्यान प्रकिया

प्राचीन धर्म-ग्रन्थ इस बात को सिद्ध करते हैं कि आत्मज्ञान के लिये ध्यान साधना का अवलम्बन लेना आवश्यक है। ध्यान साधना की प्रक्रिया को अपनाने से पूर्व यह जानना आवश्यक है कि किस प्रकार का ध्यान किया जाये और उसकी क्या प्रक्रिया है। यदि मानव दुर्ध्यान की ओर चला गया तो उसका पतन भी हो सकता है, अतः ध्यान के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त करके ही ध्यान की प्रक्रिया को अपनाना उत्तम है।

आत्मज्ञान की प्राप्ति के साधनों में निर्जरा का स्थान सर्वोच्च है। निर्जरा आत्मा पर लगे कर्म मल को दूर हटाकर आत्मा को उज्ज्वल बनाती है। वह निर्जरा तत्त्व मुख्यतः दो प्रकार का है- 1. आभ्यन्तर, 2. बाह्य। शारीरिक कष्टों को बाह्य तथा आत्मिक कष्टों को आभ्यन्तर तप कहा है। ध्यान साधना का आभ्यन्तर तप में पाँचवाँ स्थान है। आत्मज्ञान की प्राप्ति के उपायों में ध्यान का अवलम्बन भी अपेक्षित है। गजसुकुमाल मुनि व भगवान महावीर ने बाह्य तप के साथ-साथ आभ्यन्तर तप (ध्यान) साधना के द्वारा ही अपने लक्ष्य की प्राप्ति की। अनेक साधकों ने ध्यान साधना के द्वारा ही तत्त्वज्ञान की प्राप्ति की। ध्यान सत्य की खोज का माध्यम है। ध्यान का दो भागों में वर्गीकरण किया गया है- 1. दुर्ध्यान, 2. सुध्यान। दुर्ध्यान आत्मा को मलिन बनाता है तथा पतन का कारण है। इसकी भी दो श्रेणियाँ है- 1. आर्त्तध्यान एवं 2. रौद्रध्यान। इसी प्रकार सुध्यान की भी दो श्रेणियाँ हैं- 1. धर्मध्यान एवं 2. शुक्ल ध्यान। यद्यपि अल्पज्ञ की दृष्टि में सभी ध्यान समान है किन्तु केवलियों के समक्ष सुध्यान और दुर्ध्यान में पूर्व पश्चिम का अन्तर है। इसी दृष्टि से प्रथम के दो ध्यान त्याज्य हैं तथा धर्म ध्यान व शुक्ल ध्यान उपादेय हैं और आत्म-ज्ञान की प्राप्ति में सहायक हैं। ध्यान के अभाव में हमारी आत्मा उज्ज्वल नहीं हो सकती, क्योंकि वस्तु में अनन्त धर्म और अनन्त पर्याय हैं। हम उसके आंशिक धर्म और पर्यायों को जानते हैं, शेष पर्याय और धर्म हमारे लिये अज्ञात रहते हैं। वस्तु के उन अनन्त धर्मों और पर्यायों को जानने का सशक्त साधन ध्यान साधना ही है। ध्यान साधना में 'धर्म ध्यान' उस प्रक्रिया का नाम है जिसमें हम बुद्धि से अगम्य तथा अतीन्द्रिय ज्ञानी मुनियों द्वारा निर्धारित सूक्ष्मातिसूक्ष्म द्रव्य और पदार्थों को जानने का अभ्यास करते हैं। धर्म ध्यान वस्तु सत्य तक पहुँचने की एक आन्तरिक प्रक्रिया है।

शुक्ल ध्यान इससे ऊपर की अवस्था है। शुक्ल ध्यान जीव को निर्वाण की ओर ले जाता है और अन्त में अनन्त सुख प्रदान करता है। अतः ध्यान साधना मानव के लिये परमावश्यक है। प्रत्येक साधक को ध्यान की प्रक्रिया अपने दैनिक कार्यक्रम में जोड़ लेनी चाहिए। इससे साधक एक दिन आत्मानन्द को प्राप्त होगा।

ध्यान से लाभ

आतमानन्द के लाभ के साथ एक ध्यानी साधक को निम्नलिखित लाभ स्वतः ही प्राप्त हो जाते हैं-

1. ध्यानस्थ मुद्रा में स्थिरासन से बैठने पर आत्मा को विश्रान्ति मिलती है और नई चेतना आती है।
2. ध्यानस्थ मुद्रा में चिन्तित सभी समस्याओं का समाधान स्वतः हो जाता है।
3. ध्यान प्रक्रिया एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा असम्भव कार्य भी संभव हो जाते हैं।
4. ध्यानी साधक का आत्मबल बढ़ जाता है।
5. ध्यानी आत्मा के अद्भुत आनन्द को प्राप्त करता है, जिसकी तुलना करने के लिये संसार में कोई वस्तु नहीं है।
6. ध्यान साधना वह साधना है, जिसके द्वारा अप्राप्य वस्तु को भी प्राप्त किया जा सकता है।
7. ध्यान प्रक्रिया को सही रूप से अपनाने वाला साधक अपने अन्दर स्थित सूक्ष्मातिसूक्ष्म, द्रव्य और पर्यायों

को हस्तरेखावत् देखता है।

8. ध्यान साधना करने वाला व्यक्ति अपने आत्म रोगों (कर्म दलिकों) को जान लेता है तथा उनके क्षय के उपाय भी खोज लेता है।

9. ध्यान साधना करने वाला व्यक्ति आत्मिक और दैहिक दोनों प्रकार के रोगों का कुशल चिकित्सक होता है।

10. ध्यान साधना के लिये वित्तीय साधनों की आवश्यकता नहीं है।

11. इस साधना को करने के लिये स्थान विशेष, काल विशेष अथवा आयुविशेष आवश्यक नहीं है।

12 ध्यान साधना के द्वारा व्यक्ति पूर्ण ज्ञाता, द्रष्टा होकर सिद्धि (मोक्ष) को प्राप्त करता है।

(जिनवाणी, फरवरी 1976 से गृहीत)

-स्वाध्यायी श्रावक, आलनपुर (सवाईमाधोपुर)

जीवनोपयोगी बोल, हैं बड़े अनमोल

मधुर व्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतम मुनिजी म.सा. के प्रवचनों से संकलित

1. निरन्तर की गई साधना लक्ष्य तक पहुँचाती है।
2. प्रतिकूल परिस्थिति में भी प्रसन्नता माने, वही ज्ञानी।
3. हाथ में ग्रन्थ रखने वाला भीतर की ग्रन्थि तोड़े।
4. अच्छे विचारों में जीने वालों को अच्छा वातावरण मिलता है।
5. समय की पूजा करने वाला पूज्य बन जाता है।
6. बाहर में सुख ढूंढ़ना राग है, भीतर में सुख ढूंढ़ना वैराग्य।
7. संसार को देखने वाला दोष बढ़ाता है, स्वयं को देखने वाला दोषमुक्त हो सकता है।
8. तप के साथ आस्रव का त्याग आवश्यक है।
9. आदमी धर्म के मामले में जल्दी सन्तोष कर लेता है, जबकि पाप में उसकी सतत गति चलती रहती है।
10. व्यक्ति भौतिक सुख-सुविधा के लिए दिन-रात भाग-दौड़ करता है, इससे अहं पोषण के अलावा कुछ मिलने वाला नहीं है।
11. स्व की रक्षा करने वाला सर्व की रक्षा करने में कामयाब हो सकता है।
12. आधे-अधूरे ज्ञान वाले बोलकर जताते हैं, जबकि ज्ञानवान का आचरण स्वयं बोलता है।
13. शासन इच्छा से नहीं, आज्ञा से चलता है। आज्ञा ही संघ का प्राण है।
14. कहना सरल है, जीवन में उतारना कठिन।
15. संस्कार देने से नहीं, जीने से आते हैं।
16. पर में स्व की दृष्टि रखना या भोग में सुख की कल्पना करना मिथ्यात्व है।
17. दुःख से भागना नहीं, किसी को दुःख देना नहीं और दुःख को समभाव से सहना हलुकर्मी की पहचान है।
18. कष्ट हमारे जीवन के लिए उपयोगी भी हैं, उपकारी भी।
19. गुरु का आशीर्वाद माँगने से नहीं, व्यवहार से मिलता है।
20. ज्येष्ठ बनने की चेष्टा न करें, बनना हो तो श्रेष्ठ बनें।
21. सम्मान पाना हो तो सम्मान देना भी सीखें।
22. अहंकार का त्याग करने वाला सम्यक् दृष्टि है तो त्याग का अहंकार करने वाला मिथ्यादृष्टि।

-संकलनकर्त्ता- नौरतनमल मेहता,

सह-सम्पादक जिनवाणी मासिक पत्रिका

श्रीमद् राजचन्द्र की दृष्टि में ज्ञान

श्रीमती प्रीति शाह (डोसी)

दुःख, पीड़ा, चिंता, भय मानव जीवन के साथ जुड़े हुए हैं। पेटभर खाना मिलेगा कि नहीं, यही चिंता भिखारी को होती है, राजमहल में रहने वाले राष्ट्रपति या प्रधानमंत्री को चिंता होती है कि लोग उनकी आज्ञा का पालन करेंगे या नहीं? घरबार छोड़े हुए साधु को भी आकांक्षा और कामना की पीड़ा होती है। इस तरह समस्त संसार में हर जीव दुःखी है, लाखों में कोई विरला जीव ही ज्ञान के माध्यम से इस तृष्णा की जड़ को निकाल फैंकने के लिये समर्थ है।

इस तृष्णा के जाल से निकलने के लिये ज्ञानी ने कहा कि अपने आप को जानो- 'आत्मानं विद्धि' 'Know thyself' ज्ञान होने से मुक्ति को प्राप्त कर सकते हैं। यह बात शंकराचार्य ने बताई है कि "चाहे तो महान् तीर्थों की यात्रा करो, दान दो या व्रत नियम पालो, पर ज्ञान के बिना सैंकड़ों वर्षों तक मुक्ति नहीं मिलेगी।" भगवद् गीता में श्री कृष्ण ने भी यही बात कही है और जीसस ने भी यही अनुरोध किया है कि 'तुम सत्य को जान लो यही मुक्ति दिलायेगा।' जैन दर्शन में भी ज्ञान को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

"देहादि करते कार्य हैं, आत्मा सदा निर्लेप है
यह ज्ञान सम्यक् होई जब, होता न फिर विक्षेप है
मन इन्द्रियाँ करती रहें, अपना न कुछ भी स्वार्थ है
जो आ गया सो कर लिया, यह ही परम पुरुषार्थ है।।" [1]

भारतभूमि ऋषिमुनियों की भूमि है, सम्यग्ज्ञान की भूमि है, आज से लगभग 145 साल पहले अध्यात्म योगी हुए थे, जिनका नाम था श्रीमद् राजचंद्र। जिन्होंने आत्मविकास की रीत, आत्मा को परमात्मा बनाने की विधि और जैन धर्म की परिभाषा को बहुत सुंदर और सरल तरह से समझाया है।

मुमुक्षुओं की शंकाओं का निवारण करते हुए उन्होंने जैन धर्म के सिद्धांतों को पत्रों के माध्यम से समझाया था। लगभग 900 पत्रों को एक ग्रन्थ के रूप में संकलित किया गया है, जिसका नाम है 'वचनामृत'। आइए, इस वचनामृत से ज्ञान की परिभाषा समझने की कोशिश करते हैं।

ज्ञान की परिभाषा

1. **आत्मा जैसा है वैसा ही जानना ज्ञान है**[2]– कोई मनुष्य अगर ज्योत देखने से समझे कि आत्मा के दर्शन हो गये, तो यह सब कल्पना है। आत्मा जैसा है वैसा ही जानना ज्ञान है।
2. **भक्ति और प्रेम भी ज्ञान में सहायक**[3]– जीव केवल बाह्य इन्द्रियों और बुद्धि की मदद से अगर ज्ञान की प्राप्ति करता है तो इससे अंतर में कुछ परिवर्तन नहीं होता है। आत्मा ही ज्ञान का पिंड है जो भक्ति और प्रेम से ही अनुभव में आ सकता है, जिससे आत्मा की प्राप्ति हो सकती है।
3. **राग और द्वेष के जाने से ज्ञान प्रगट होता है**[4]– श्रीमद् राजचंद्र ने आत्मा सिद्धिशास्त्र में 100 वीं गाथा में कहा है–

   'राग द्वेष अज्ञान ए, मुख्य कर्मनी ग्रंथ।
   थाय निवृति जेहथी, ते ज मोक्षनो पंथ।।'

   राग, द्वेष और अज्ञान इनका एकत्व, कर्म की मुख्य गाँठ है, अर्थात् यही कर्म बांधने का कारण है, अगर उनकी निवृत्ति हो जाये तो वही मोक्ष का मार्ग है।
4. **जिससे वस्तु का स्वरूप जानें वही ज्ञान**[5]– इस वाक्य में श्रीमद्जी कहते हैं कि केवल जीव जिसमें चेतना गुण है, जो जी रहा है वही जान सकता है,

कोई जड़ जानने की क्रिया नहीं कर सकता है। जो इस चेतन के स्वरूप को जानता है, वही ज्ञान है।

5. **स्व और पर को अलग करे वो ज्ञान**[6]– कुन्दकुन्द आचार्य ने समयसार नामक ग्रंथ में समझाया है कि स्व और पर के भेद को जानना जरुरी है।

हर एक पर वस्तु (इसमें शरीर भी) का त्याग करते-करते बाकी जो बचता है वही स्व यानी कि आत्मा है।

1. सुख और दुःख के समय हाजिर हो वो ज्ञान, अर्थात् हर्ष और शोक न हो।[7]
2. तत्त्व का ज्ञान ही ज्ञान है।[8]
3. बारह अंग और पूर्व को जानना ज्ञान है।[9]
4. जहाँ सच्चा ज्ञान हो वहाँ सच्चा त्याग होता है, यह तीर्थकर ने कहा है।[10]
5. ज्ञान के साथ वैराग्य और वैराग्य के साथ ज्ञान होता है; अकेला नहीं होता।[11]
6. असाता के उदय में ज्ञान की परीक्षा होती है।[12]
7. शास्त्र ज्ञान नहीं अपितु अनुभव ज्ञान ही जीव को मुक्ति दिला सकता है।[13]
8. उल्लसित चित्त से ज्ञान की अनुप्रेक्षा करने से अनन्त कर्मों का क्षय होता है।[14]
9. आत्मा शुद्ध चैतन्यमय, जन्म-जरा-मरण रहित असंग स्वरूप है, इस में ही सर्व ज्ञान समा जाता है।[15]
10. जो कोई मुमुक्षु को सत्पुरुष (ज्ञानी) का आश्रय प्राप्त हुआ है, वह ज्ञान प्राप्त करने की याचना न करे, परंतु वैराग्य उपशमादि प्राप्त करने का उपाय करे। वह योग्य प्रकार से प्राप्त होने से उपदेश परिणमन होगा, यही विचार और ज्ञान का हेतु है।[16]

''अनन्त काल से जो ज्ञान भव हेतु का कारण था, एक समय मात्र के जात्यन्तर से वही ज्ञान भव निवृति रूप हो गया वैसे कल्याणमूर्ति सम्यग्दर्शन को नमस्कार।''[17](वचनामृत, पृष्ठ 625)

ज्ञान मार्ग[18]:

1. जीव स्वयं को भूल गया है, और इसलिये उसे सत्सुख का वियोग है, ऐसा सर्व धर्म सम्मत कथन है।
2. स्वयं को भूल जाने रूप अज्ञान का नाश ज्ञान मिलने से होता है।
3. ज्ञान की प्राप्ति ज्ञानी के पास से होनी चाहिये। यह स्वाभाविक रूप से समझ में आता है, फिर भी जीव लोकलज्जा आदि कारणों से अज्ञानी का आश्रय नहीं छोड़ता, यही अनंतानुबंधी कषाय का मूल है।
4. जिनागम आदि शास्त्र में कहा है कि जो ज्ञान की प्राप्ति करना चाहता है, उसे ज्ञानी की इच्छा के अनुसार चलना चाहिये। अपनी इच्छा के अनुसार चलने वाला जीव अनादिकाल तक भटकता रहता है।
5. ज्ञानी की आज्ञा का आराधन वह कर सकता है जो एकनिष्ठा से तन,मन और धन की आसक्ति का त्याग करे।
6. जीव यदि अनंत काल तक स्वछंदता से चलकर परिश्रम करे तो भी अपने आप ज्ञान की प्राप्ति नहीं करता; ज्ञानी की आज्ञा का आराधक अन्तर्मुहूर्त में केवलज्ञान की प्राप्ति कर लेता है।

आत्मस्वरूप का भान न होना ही तत्त्व का अज्ञान है। ये अज्ञान दूर करे वही ज्ञान। देह का अध्यास न रहे- देह में अनात्मबुद्धि अर्थात् 'मैं' का भाव ना रहे, यही सच्चा ज्ञान।

अनादि काल से जीव मोह मिश्रित होने के कारण वह स्व व पर में भेद नहीं देख पाता। शरीर आदि परपदार्थों को ही निजस्वरूप मानता है, इसी से मिथ्या यानी अज्ञान नाम पाता है। जब सम्यक्त्व के प्रभाव से परपदार्थों से भिन्न निज स्वरूप को जानने लगता है तब भेदज्ञान नाम पाता है, वही सम्यग् ज्ञान है। सम्यग्ज्ञान

श्रेयमार्ग की सिद्धि करने में और समर्थ होने के कारण जीव को इष्ट है। जीव का अपना प्रतिभास तो निश्चय सम्यग् ज्ञान है और उसको प्रगट करने में निमित्त भूत आगमज्ञान व्यवहार सम्यग्ज्ञान कहलाता है। निश्चय सम्यग्ज्ञान ही वास्तव में मोक्ष का कारण है, व्यवहार सम्यग्ज्ञान नहीं।

संदर्भः–

1. आत्मज्ञान और साधनापथ, पृष्ठ संख्या 29
2. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 718
3. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 295
4. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 727
5. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 115
6. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 751
7. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 687
8. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 592
9. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 595
10. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 452
11. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 762
12. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 769
13. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 299
14. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 646
15. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 605
16. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या
17. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 625
18. वचनामृत श्रीमद् राजचन्द्र, पृष्ठ संख्या 504

पुस्तकें:– 1. आत्मज्ञान और साधनापथ
2. वचनामृत श्रीमद् राजचंद्र

-Ph. D Research scholor, University of Madras , No.8 G shatrunjay apartment, 42/57 vepery high road, opp shantivijay guru girls college, Chennai-600007(T.N.)

ध्यान की उपयोगिता

श्री पूनमचन्द मुणोत

ध्यान और साधना का अटूट सम्बन्ध है। किसी भी प्रकार की साधना क्यों न हो, उसमें ध्यान को स्थान रहता ही है। प्राचीन ग्रंथों में ध्यान के विषय में अवश्य ही विधान है। अध्यात्म क्षेत्र की कोई ऐसी साधना नहीं, जिसमें ध्यान का स्थान न हो। योगशास्त्र ही नहीं, आज का मनोविज्ञान भी ध्यान को महत्त्व देता है और उसका प्रयोग भी करता है। यन्त्र, मंत्र, तंत्र सभी साधनाओं में ध्यान के विविध रूपों का विधान किया गया है। जप में ध्यान को स्थान मिलता है। तप, ध्यान और जप विषयक जो प्राचीन उल्लेख उपलब्ध होते हैं, उससे ज्ञात होता है कि ध्यान को साधना का मुख्य अंग साधकों ने स्वीकार किया है।

ध्यान चेतना की वह अवस्था है, जहाँ समस्त अनुभूतियाँ एक ही अनुभूति में विलीन हो जाती हैं, विचारों में सामंजस्य आ जाता है, परिधियाँ टूट जाती हैं, भेद रेखाएँ मिट जाती हैं। जीवन स्वतन्त्रता की इस अखण्ड अनुभूति में जीवात्मा परमात्मा बन जाता है।

ध्यान आत्मा की एक शक्ति है। ध्यान के बिना ध्येय की पूर्ति एवं प्राप्ति नहीं की जा सकती। स्वाध्याय और ध्यान तो मन की साधना के मुख्य अंग हैं, प्रातः जल्दी उठकर सबसे पहले ध्यान, बाद में स्वाध्याय। स्वाध्याय और ध्यान से मन बड़ा प्रसन्न रहता है। स्वाध्याय से ज्ञान की प्राप्ति होती है। ध्यान के मुख्य तीन लाभ हैं–

1. ध्यान करने से मन शान्त और प्रसन्न रहता है। मनोबल में भी वृद्धि होती है। अनुभूति बढ़ती जाती है।
2. जब मन इधर-उधर हो जाता है, तब ध्यान की साधना से उसे केन्द्रित किया जा सकता है।
3. ध्यान से मनुष्य की मानसिक शक्ति बढ़ जाती है। ध्यान आत्मा की एक अद्भुत शक्ति है। ध्यान जीवन का बल है।

ध्यान से मन की शक्ति और मौन से वाणी की शक्ति बढ़ती है। धर्म साधना के इतिहास में ध्यान और मौन दोनों का ही अत्यन्त महत्त्व रहा है। बहुत से संत आज भी सप्ताह में एक दिन मौन रखते हैं और प्रतिदिन ध्यान की साधना भी करते हैं।

(जिनवाणी, अगस्त 1981 से गृहीत)

जिनवाणी के अंकों पर प्रतियोगिता

श्राविकारत्न स्व. श्रीमती सुशीलाजी धर्मपत्नी श्रावकरत्न श्री गौतमचन्दजी संकलेचा, कुम्बकोणम् की पावन स्मृति में उनके सुपुत्र श्री प्रवीणकुमार, मनोजकुमार संकलेचा, कुम्बकोणम्, चेन्नई के सहयोग से 'जिनवाणी पत्रिका' के विगत अंकों का पुनः स्वाध्याय हो सके, इस दृष्टि से यह प्रतियोगिता आयोजित की जा रही है। इस प्रतियोगिता हेतु जिनवाणी **मार्च-2015 से फरवरी-2016** के अंकों से यहाँ कतिपय वाक्य दिए जा रहे हैं। आपको इन वाक्यों को पढ़कर इनके **लेखक/प्रवचनकार, लेख-शीर्षक, माह एवं पृष्ठ संख्या** का उल्लेख करना है तथा अपने उत्तर **जिनवाणी सम्पादकीय कार्यालय, सामायिक स्वाध्याय भवन, नेहरूपार्क, जोधपुर-342003 (राज.)** के पते पर **31 जुलाई 2017** के पूर्व प्रेषित करने हैं। श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को क्रमशः 1100/-रुपये, 800/-रुपये एवं 500/-रुपये की राशि से तथा आठ सांत्वना पुरस्कार में प्रत्येक को 200/-रुपये की राशि से पुरस्कृत किया जाएगा। अतः अपना नाम, पता स्पष्ट अक्षरों में प्रेषित करें एवं उत्तर प्रेषित करते समय वाक्यों को पुनः लिखने की आवश्यकता नहीं है, मात्र प्रश्नों की क्रम संख्या लिखकर अभीष्ट उत्तर लिफाफे में बंद कर प्रेषित करें।**-सम्पादक**

प्रश्न (जिनवाणी के विभिन्न अंकों से उपयोगी वाक्य):-

1. जिसने समझ बूझकर पर पदार्थों के प्रति आसक्ति एवं ममत्व का त्याग किया है वह ही अपरिग्रही की श्रेणी में आता है।
2. ''अपनी उन्नति किसी की अवनति पर, अपने सुख किसी के दुःख पर, अपनी प्रशंसा किसी की निंदा के आधार पर न हो।''
3. जो अपने द्रव्य का दान करता है, वह केवल इस भावना से ही दान नहीं करे कि उसमें आपको अधिक लाभ होगा, बल्कि उसके साथ यह भावना भी रहनी चाहिए कि यह परिग्रह दुःखदायी है। इससे जितना अधिक स्नेह रखूँगा, यह उतना ही अधिक क्लेशवर्धक तथा आर्त्त एवं रौद्र-ध्यान का कारण बनेगा।
4. 'विकत्ता' शब्द भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। विकत्ता का संस्कृत शब्द 'विकर्त्ता' है। जो अपने कर्तृत्व से रहित हो जाए उसे विकर्त्ता कहते हैं।
5. गुरु साधर्मिक सेवा से वह, विनय धर्म को पाता।
भक्ति और बहुमान के द्वारा सद्गति से जुड़ जाता।
6. जैन धर्म ही एक ऐसा धर्म है, जिसमें क्षमा को बड़ा महत्त्व दिया जाता है। आपस के मनमुटाव, क्रोध एवं शत्रुता की खाई को पाटने का कार्य क्षमा करती है। क्षमा शुद्ध मन और प्रेमभाव से मांगनी चाहिए।
7. ये दोनों महापुरुष चन्द्र और सूर्य की भांति संघ में चमक रहे हैं। एक ओर आचार्य भगवन्त की तेजस्विता दूसरी ओर उपाध्यायप्रवर की शीतलता।
8. समझ का सार है समता, सुज्ञ तो उसी में रमता
निज दोष को मत छुपाना, वरना मुश्किल होगा
आत्मगुणों को छू पाना।।
9. अहंभाव के कारण ही जीव अनन्त वैभव, प्रभुता एवं मुक्तावस्था से विच्छिन्न होकर सीमित चारदीवारी के कारागार में आबद्ध हो गया है।
10. विद्या बुद्धि की जड़ता का हरण करती है, वाणी में सत्य का सिंचन करती है, विद्या की इस महत्ता को समझकर बेटियों को शिक्षा देना वर्तमान की परम आवश्यकता है।

कृति की 2 प्रतियाँ अपेक्षित हैं

नूतन साहित्य

डॉ. श्वेता जैन

आत्म-उत्थान का मार्ग (भाग-3)*- *लेखक*-** पंन्यासप्रवर श्री भद्रंकरविजयजी, ***सम्पादक- आचार्य श्री रत्नसेनसूरीश्वरजी, ***प्रकाशक*** - दिव्य सन्देश प्रकाशन, द्वारा-सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेम्बर्स, 507-509, जे.एस.एस. रोड़, चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (ई.), मुम्बई-400002 (महा.), फोनः 022-22034529, ***प्रचारक***- 1. प्रकाश बड़ोल्ला- 08971230600, 2. राहुल वैद- 09810353108, ***पृष्ठ***-304, ***मूल्य***- 150 रुपये, सन् 2017

प्रस्तुत तीसरे भाग में ध्यान, लेश्या, समापत्ति, मंत्र, मूर्ति, मन, तत्त्व, सत्संग, भाषा-विशुद्धि, जीवन, दान, भवितव्यता आदि विषयों पर लेखक का चिन्तन प्रकाशित हुआ है। इसमें 194 विषयों पर संक्षिप्त रूप से विचार प्रस्तुत हुए हैं। मुनिश्री कहते हैं कि पशु से कुछ अच्छा खाना-पीना-रहना यह कोई मानवता का विकास नहीं है। मानवता का विकास, स्वयं को पहचानने और समझने में है। बुद्धि की पहुँच और शक्ति बहुत ही सीमित है। बुद्धि के क्षेत्र से ऊँची, ऐसी कोई अद्भुत सृष्टि है, जिसे सर्वज्ञ पुरुष ही देख सकते हैं। मन बिजली जैसा चंचल और तरल है। उसका वेग और शक्ति बिजली से भी अधिक श्रेष्ठ है। जिस प्रकार बिजली जहाँ-तहाँ गिरती है और विनाश करती है, परन्तु उसे धातु के तार में पिरोकर कार्य कराया जाये तो सभी कार्य वह त्वरित गति से करती है, अन्यथा उन्माद में जहाँ-तहाँ गिरकर सबकुछ भस्मीभूत कर देती है। इस प्रकार मन के वेग और आवेग किसी शुद्ध ध्येय के धागे में पिरोया जाये तो वह अपना कार्य शीघ्रता से कर देता है। वे भवितव्यता के सम्बन्ध में लिखते हैं कि जब-जब असमाधि होती है, तब तब भवितव्यता वाद का आलम्बन लेने से असमाधि दूर हो जाती है और आत्मा अपने स्वभाव में आ जाती है। किन्तु कार्य की सिद्धि में सिर्फ भवितव्यता कारण नहीं है, अन्य भी कारण हैं। भवितव्यता का एकान्त आलम्बन जीव को पुरुषार्थहीन बना देता है। अतः भवितव्यतावाद का आलम्बन लेने में विवेक की आवश्यकता होती है। पुस्तक के अन्त में 'पूर्वाचार्यों के वचनामृत' शीर्षक से विभिन्न ग्रन्थों की गाथाएँ एवं अंश दिए गए हैं। तत्त्वपिपासुओं के लिए पुस्तक ग्रहणीय है।

साधना-संग्रह- संकलित पुस्तक, ***प्रकाशक*** - श्री सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, दुकान नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-302003 (राज.), फोनः 0141-2575997, ***पृष्ठ***-172, ***मूल्य***- 15 रुपये, सन् 2017

नव विभागों के अन्तर्गत विभाजित यह पुस्तक स्वाध्यायियों के लिए संग्रहणीय है। नव विभाग निम्न हैं- 1. मंगलाचरण, 2. स्वाध्याय, 3. स्तोत्र, छन्द, 4. आलोचना, 5. चौबीसी, 6. वन्दना-स्तुति, 7. प्रार्थना-स्तवन, 8. प्रत्याख्यान और 9. अन्य विभाग। दशवैकालिक सूत्र के चार अध्याय, सुखविपाकसूत्र, नमिपवज्जा आदि; भक्तामर, कल्याण मंदिर, उवसग्गहर, महावीराष्टक आदि स्तोत्र, वृहद् आलोयणा, रत्नाकर पच्चीसी, मेरी भावना आदि, मनोरथ, चौदह नियम, आदि संगृहीत हैं। अन्त में आनूपूर्वी भी दी गई है।

कर्मग्रन्थ (भाग-1)- विवेचनकार- श्रीमद् रत्नसेनसूरीश्वरजी म.सा., ***प्रकाशक*** - दिव्य सन्देश प्रकाशन, द्वारा-सुरेन्द्र जैन, 205, सोना चेम्बर्स, 507-509, जे.एस.एस. रोड़, चीरा बाजार, सोनापुर गली के सामने, मरीन लाईंस (ई.), मुम्बई-400002 (महा.), फोनः 022-22034529, 9892069330, ***पृष्ठ***-212, ***मूल्य***- 100 रुपये, सन् 2017

प्रस्तुत ग्रन्थ में कर्म सम्बन्धी 36 अध्ययन ग्रथित हैं, उनमें से कतिपय निम्नांकित हैं- जगत् कर्ता कौन, कर्म विज्ञान, कर्म विपाक, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान आदि पाँच ज्ञान वेदनीय कर्म, मोहनीय कर्म, नाम कर्म, गोत्र व अन्तराय कर्म, आयुष्य कर्म बंध के हेतु आदि।

समाचार विविधा

पूज्य आचार्यप्रवर की गोटन को मिली सन्निधि

अक्षय तृतीया के पश्चात् भी 32 तेले एवं कई अन्य तपस्याएँ

असावरी होते हुए बारनी की ओर विहार

आगमज्ञ, प्रवचन-प्रभाकर, ज्ञान सुधाकर, गुणरत्नाकर, सामायिक-शीलव्रत-रात्रिभोजनत्याग-व्यसन-मुक्ति के प्रबल प्रेरक, जिनशासन गौरव, रत्नसंघ के अष्टम पट्टधर **परम श्रद्धेय आचार्यप्रवर पूज्य श्री 1008 श्री हीराचन्द्रजी म.सा., महान् अध्यवसायी, सरस व्याख्यानी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा.** आदि ठाणा के साथ धवल सीमेंट, धवल पुट्टी, धवल कली वाली, धवल धरा गोटन में विराजकर धवल वस्त्रों में अपने व्यक्तित्व-कृतित्व एवं नेतृत्व की धवलता से जिनशासन की प्रभावना करते हुए 26 दिन विराजे।

अक्षयतृतीया 29 अप्रेल को तप और दान दिवस पर पंजीकृत 56 तपस्वी भाई-बहनों में से 50 तपस्वी भाई-बहिन गोटन पधारे तथा मंगल देशना श्रवण कर कुछ भाई-बहनों ने पूज्य आचार्यप्रवर के मुखारविन्द से अपनी तपस्या का क्रम आगामी वर्ष तक जारी रखने हेतु संकल्प ग्रहण किए। जो तपस्वी प्रत्यक्ष में उपस्थित नहीं हो पाए, उन्होंने भी आगामी वर्ष तक तप जारी रखने की भावना आचार्य गुरुदेव की सेवा में निवेदन करवाई। अक्षय तृतीया पर मेड़तासिटी व असावरी संघ ने पूज्यप्रवर से शेषकाल फरसने तथा पाली संघ ने चातुर्मास प्रदान करने हेतु विनति प्रस्तुत की। भोपालगढ़ संघ ने पूज्यप्रवर के साथ महासती मण्डल के चातुर्मास की भी याचना की। सवाईमाधोपुर से पूर्व विधायक श्री हंसराजजी शर्मा, भारतीय जनता पार्टी के जिलाध्यक्ष श्री सुरेशजी जैन एवं जिला प्रवक्ता श्री कुशल जी गोटेवाला ने दर्शन-वन्दन एवं चर्चा का लाभ लिया।

30 अप्रेल को पूज्य आचार्यप्रवर ने समस्त आगारों के साथ सेवाभावी व्याख्यानी श्री नन्दीषेणजी म.सा. आदि ठाणा का पाली के लिए, व्याख्यात्री महासती श्री ज्ञानलताजी म.सा. आदि ठाणा का भोपालगढ़ के लिए, व्याख्यात्री महासती श्री चारित्रलताजी म.सा. आदि ठाणा का नेहरूपार्क, जोधपुर के लिए, व्याख्यात्री महासती श्री प्रतिष्ठाप्रभाजी का नागौर के लिए चातुर्मास स्वीकृत किया। अहमदाबाद के समर्पित सेवाभावी श्रावक श्री धनेशजी बागरेचा के स्वर्गवास पर परिवारजनों के साथ श्री मीतजी, श्री प्रीतजी दर्शन-वन्दन एवं मांगलिक श्रवण करने हेतु पधारे।

02 मई को असावरी संघ की विनति पर क्षेत्र फरसने की स्वीकृति फरमाई गई। 07 मई को श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा का पूज्य आचार्यप्रवर के सान्निध्य में पधारना हुआ। 09 मई को नागौर के युवक परिषद् के सदस्यों ने पूज्यप्रवर के मुखारविन्द से स्वयं निर्व्यसनी बनने तथा इसका प्रचार-प्रसार करने का संकल्प लिया। 11 मई को नाडसर संघ ने क्षेत्र फरसने हेतु विनति प्रस्तुत की। 14 मई को संघ-संरक्षक मण्डल के संयोजक श्री मोफतराजजी मुणोत एवं संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री पी. शिखरमल जी सुराणा ने दर्शन-सेवा का लाभ लिया।

ज्येष्ठ कृष्णा पंचमी 16 मई को पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 27 वां आचार्य पदारोहण दिवस उपस्थित हुआ। इस अवसर पर जोधपुर, पीपाड़, पाली, नागौर, जयपुर, अहमदाबाद, जलगाँव, चेन्नई, शोरापुर, खोह आदि क्षेत्रों से गुरुभक्त उपस्थित थे। प्रवचन सभा में नवदीक्षित श्री अशोकमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री विनम्रमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री आशीषमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री देवेन्द्रमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी

म.सा., श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा., महान् अध्यवसायी श्रद्धेय श्री महेन्द्रमुनिजी म.सा. ने पूज्य आचार्य भगवन्त के चादर महोत्सव से लेकर वर्तमान तक रत्नसंघ की दीप्ति एवं गौरव गरिमा को प्रवर्धमान करने के सम्बन्ध में प्रकाश डाला। इसी दिन पूज्य आचार्यप्रवर श्री विनयचन्द्रजी म.सा. का आचार्य पदारोहण अजमेर में हुआ था। संघाध्यक्ष श्री पी. शिखरमल जी सुराणा ने प्रमोद व्यक्त किया कि आचार्यप्रवर के 27 वर्षों का संघनायक काल स्वर्णिम रहा है। इस अवसर पर 40 से अधिक नीवीं तप सम्पन्न हुए। सभा का संचालन संघ अध्यक्ष श्री हंसराजजी चौपड़ा ने प्रभावी एवं ओजस्वी शैली में किया।

कल्याणपुर (मारवाड़) एवं कोप्पल (कर्नाटक) निवासी वीर पिताश्री घमण्डीलाल जी बागरेचा के स्वर्गवास पर श्री यशवन्तराजजी बागरेचा एवं परिवारजन पूज्य गुरुदेव के दर्शन-वन्दन एवं मांगलिक श्रवण हेतु आये। श्री घमण्डीलालजी की सुपुत्री रत्नसंघ में दीक्षित होकर श्री शिक्षाश्रीजी के रूप में शासन की प्रभावना कर रही हैं। 17 मई को पूज्य श्री कुशलोजी म.सा. के पुण्य स्मृति दिवस पर पूज्य गुरुदेव श्री हीराचन्द्रजी म.सा. ने फरमाया कि आज जो संघ की दीप्ति एवं प्रशस्ति का स्वरूप परिलक्षित हो रहा है, यह पूज्य कुशलोजी की देन है। सुमेरगंज मण्डी के युवारत्न श्री महेन्द्रकुमारजी जैन सुपुत्र श्री चाँदमल जी जैन के स्वर्गवास पर श्री चाँदमलजी जैन, श्री नरेन्द्रकुमारजी जैन मोहम्मदपुरा वाले अपने परिवारजनों एवं संघ सदस्यों के साथ मंगलपाठ श्रवण करने हेतु पधारे तथा पूज्य श्री से तप-त्याग के नियम ग्रहण किए। श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा ने जोधपुर के लक्ष्य से खारिया के लिए विहार किया।

19 मई को ज्ञानार्थी भाई-बहिन 20 दिवसीय शिविर का लाभ लेकर शिक्षकों के साथ गुरुदेव की चरण सन्निधि में सह-संयोजक श्री विवेकजी लोढ़ा के नेतृत्व में उपस्थित हुए। पूज्य आचार्यप्रवर ने मंगल उद्बोधन में उन्हें वक्तृत्व कला के विकास हेतु प्रेरित किया कि ज्ञानार्थी बाहर बोलने एवं समूह में अपनी बात रखने का अभ्यास करें। सीखने के साथ प्रस्तुति की दक्षता भी आनी चाहिए। पढ़ने के साथ पढ़ाने की कला भी आनी चाहिए। शिक्षकों को प्रेरित करते हुए फरमाया कि शिक्षक विशेषज्ञों की तरह अपने-अपने विषयों के विशेषज्ञ बनें।

22 मई को पूज्य आचार्यप्रवर के गोटन प्रवास का 26 वां दिवस था। घरों की अल्प संख्या के बावजूद धर्माराधन उत्तम रहा। 175 के लगभग उपवास, 32 तेले, 1 चोला, 2 पचोला, 5 अठाई एवं 2 नौ दिवसीय तप की साधना हुई। गोटन संघ आतिथ्य सत्कार हेतु अहर्निश तत्पर रहा। ओसवाल परिवार, चौपड़ा परिवार, बाफना परिवार, लोढ़ा परिवार आदि सभी की सेवाभावना प्रमोदकारी रही। श्री नवरतनजी ओस्तवाल ने भीषण गर्मी में भी नंगे पैर चलकर गोचरी पानी के समय संतों की सेवा का लाभ लिया।

22 मई को ही सायंकाल पूज्य गुरुदेव स्थानक से विहार कर राना बाई भवन पधारे। जहाँ रात्रि-साधना कर 23 मई को हरसोलाव पहुँचे। यहाँ जैन समाज के आठ घर हैं। पूर्व में महाजनों के यहाँ 700 घर थे। श्री बंशीलालजी प्रसन्नराजजी रूणवाल आदि ने सेवाभक्ति का लाभ लिया। सुज्ञ स्वाध्यायी श्राविका श्रीमती कमलाबाईजी सिंघवी जो लगभग 20 वर्षों से चातुर्मास काल में चौका लगाकर संवर-साधना का लाभ लेती रही, उनके स्वर्गवास पर चेन्नई पनरूटी से श्री सुमतिविजयराजजी, अशोकराजजी, पदमराजजी, गौतमराजजी सिंघवी परिवारजनों के साथ गुरुसेवा में पधारे तथा मांगलिक श्रवण किया। 24 मई को भाटियों की ढ़ाणी में श्री हरीरामजी भाटी के गृह में विराजकर 25 को असावरी पधारे। असावरी श्रद्धेय श्री मनीष मुनिजी म.सा. का सांसारिक ननिहाल एवं महासती श्री आनन्दप्रभाजी म.सा. का सांसारिक गाँव है। भारतदेश में सोलर पॉवर के विद्युत उत्पादन एवं प्रसारण का शुभारम्भ सर्वप्रथम असावरी गाँव में हुआ, ऐसा बुजुर्ग ग्रामवासी का कथन है। गुरुदेव के पधारने से छल्लाणी परिवार में उल्लास का

वातावरण है। श्री सुगनचन्दजी, श्री इन्दरचन्दजी, श्री रिखबचन्दजी, श्री कांतिलालजी, श्री महेन्द्रजी सहित सभी सदस्य अतिथि सत्कार एवं धर्माराधन में तत्पर हैं। 26 मई को बारनी संघ शेषकाल फरसने की विनति लेकर सेवा में उपस्थित हुआ। गोटन संघ ने 26 एवं 27 मई को प्रवचन श्रवण का लाभ लिया। 27 मई को आसोप संघ ने फरसने हेतु विनति प्रस्तुत की। गोटन विराज रहे श्रद्धेय श्री योगेशमुनिजी म.सा. आदि ठाणा वहाँ से विहार कर हरसोलाव फरसते हुए 28 मई को पूज्य गुरुदेव की सेवा में पधारे। आगे का विहार बारनी की ओर संभावित है। *-जगदीश जैन*

उपाध्यायप्रवर की सन्निधि में अनेकविध प्रसङ्गों पर विशेष धर्माराधना

उपाध्यायप्रवर पण्डितरत्न श्री मानचन्द्रजी म.सा., सेवाभावी व्याख्यानी संत श्री नन्दीषेणजी म.सा. आदि ठाणा 8 सुखसातापूर्वक सामायिक-स्वाध्याय भवन, पावटा, जोधपुर में विराज रहे हैं। व्याख्यात्री महासती श्री रतनकंवरजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. आदि ठाणा सिद्धान्तशाला पावटा में विराजित हैं। विदुषी महासती श्री सौभाग्यवतीजी म.सा. आदि ठाणा 6 नेहरूपार्क स्थित सामायिक-स्वाध्याय भवन विराज रहे हैं। तत्त्वचिन्तक श्रद्धेय श्री प्रमोदमुनिजी म.सा. के व्याख्यान भेदविज्ञान एवं स्थानांग सूत्र पर चल रहे हैं। अष्टमी, चतुर्दशी एवं रविवार को विशेष उपस्थिति रहती है तथा तप-त्याग भी अधिक होते हैं। प्रत्येक शनिवार को युवाओं द्वारा सामूहिक सामायिक का कार्यक्रम निरन्तर चल रहा है। वैशाख शुक्ला अष्टमी 03 मई 2017 को परम पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. का 26 वां पुण्य दिवस तप-त्याग एवं गुरु गुणगान के साथ मनाया गया। सेवाभावी श्री नन्दीषेणजी म.सा., तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री चन्द्रकलाजी म.सा. एवं आचार्य हस्ती के मुखारविन्द से अंतिम रूप से दीक्षित व्याख्यात्री महासती श्री विनीतप्रभाजी म.सा. ने गुरुदेव के उपकारों एवं गुणों का स्मरण किया। तीन-तीन सामायिक के लक्ष्य के साथ लगभग 100 संवर, दया, एकाशन के प्रत्याख्यान हुए। 04 मई को 27 वें उपाध्याय पद दिवस पर उपाध्यायप्रवर के गुण स्मरण किए गए तथा 25 गुणों के अनुरूप वंदना की गई। वैशाख शुक्ला त्रयोदशी 08 मई को उपाध्यायप्रवर के 54 वें दीक्षा दिवस पर महासती श्री विनीतप्रभाजी, श्रद्धेय श्री जितेन्द्रमुनिजी, श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी, तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी ने उपाध्यायप्रवर की सरलता, संयमशीलता आदि पर प्रकाश डाला। सेठिया परिवार की ओर से वात्सल्य सेवा का लाभ लिया गया। ज्येष्ठ कृष्णा पंचमी 16 मई को पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 27 वां आचार्य पदारोहण दिवस तीन-तीन सामायिक एवं 80 एकाशन तप के साथ मनाया गया। तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री दर्शनमुनिजी म.सा. एवं व्याख्यात्री महासती श्री विनीतप्रभाजी म.सा. आदि ने पूज्य आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की गौरव गरिमा एवं संघ को योगदान पर प्रकाश डाला। ज्येष्ठ कृष्णा षष्ठी 17 मई को पूज्य श्री कुशलोजी म.सा. की 225 वीं पुण्य तिथि तप-त्याग के साथ मनाई गई। तत्त्वचिन्तक श्री प्रमोदमुनिजी म.सा., श्रद्धेय श्री मोहनमुनिजी म.सा. के एकान्तर तप की साधना चल रही है। कभी बेले तप भी हो जाते हैं। 11 से 21 मई तक चोरडिया, भवन पावटा में 7 साधक-साधिकाओं ने ध्यान शिविर का लाभ लिया। *-सुभाष हुण्डीवाल, मंत्री*

अन्य सन्त-सतियों की सन्निधि में धर्मजागरणा

ब्यावर- मधुरव्याख्यानी श्रद्धेय श्री गौतममुनिजी म.सा. आदि ठाणा 3 पाली में पूज्य गुरुदेव हस्तीमलजी म.सा. की 27 वीं पुण्यतिथि को दया संवर एवं विविध धार्मिक आराधना के साथ मनाकर एवं उनके प्रेरणाप्रद प्रसंगों से समाज को झंकृत कर सोजत आदि ग्राम-नगरों को फरसते हुए 20 मई को ब्यावर पधारे। सन् 2009 का ब्यावर का उपाध्यायप्रवर के साथ हुआ चातुर्मास अभी भी श्रावक-श्राविकाओं की स्मृति में तरोताजा है। अतः संतप्रवर के

पदार्पण से यहाँ धर्म ध्यान का प्रातः से रात्रि तक ठाट लगा हुआ है। व्याख्यान में विशाल उपस्थिति हर जनमन को चातुर्मास का अहसास करवा रही है। प्रत्येक धार्मिक आयोजन में भक्तजन बढ़चढ़कर भाग ले रहे हैं। दिन में आगम वाचनी के समय में भी बहनें बड़ी संख्या में प्रश्न-चर्चा के साथ अपनी जिज्ञासाओं का समाधान करने को तत्पर रहती हैं। संतों के पदार्पण से ब्यावरवासी अत्यन्त प्रमुदित हैं और अपनी धर्म भावना को निरन्तर वर्द्धमान बना रहे हैं। स्थानकवासी जैन वीर संघ-पीपलिया बाजार, ब्यावर की कार्यकारिणी के सभी सदस्यों ने पूज्य श्री गौतममुनिजी म.सा. की प्रेरणा से प्रत्येक शनिवार सुबह 7 से 8 बजे पीपलिया बाजार स्थानक में आकर सामूहिक सामायिक में भाग लेने का नियम लिया। इसकी शुरुआत 31 मई को प्रातः 7 से 8 बजे सामूहिक-सामायिक के साथ की गई है।

-अनुपमा कर्णावट

नागौर- श्रद्धेय श्री मनीषमुनिजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में तप-त्याग की साधना एवं धर्माराधना से धनारी धन्य हो गई। ज्ञान-दर्शन एवं चारित्र तीनों क्षेत्रों में नये कीर्तिमान स्थापित हुए। प्रतिदिन उपवास, एकाशन तेले की लड़ी के साथ श्री जेठमलजी सेठिया ने पहले ही दिन एक साथ 9 उपवास के प्रत्याख्यान लिये। अभिषेक वैद और पिंकीजी सेठिया ने भी 9 की तपस्या कर भीषण गर्मी में दृढ़ मनोबल का परिचय दिया। यहाँ से बिरलोका पधारने पर श्रीमती जेठीदेवीजी लुणावत ने वर्षीतप की आराधना का शुभारम्भ किया। 16 अप्रेल से 19 अप्रेल तक पाँचला सिद्धा में चार शीलव्रती बने। 20 अप्रेल को आचीणा में श्रीमती मधुबालाजी लुणावत ने तेले की तपस्या कर संतों की अगवानी की। आचीणा से विहार कर आप 22 अप्रेल को नागौर पधारे। नागौर में उपवास, एकाशन, आयंबिल एवं तेले की लड़ी निरन्तर चलती रही। लगभग पाँच तेले पूर्ण हुए, यहाँ से आपका गोटन की ओर विहार हुआ।

-गजेन्द्रकुमार जैन, जयपुर

जयपुर- साध्वीप्रमुखा महासती श्री तेजकंवरजी म.सा., व्याख्यात्री महासती श्री सुमनलताजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में 09 अप्रेल को प्रभु महावीर का जन्म-कल्याणक दिवस आचार्य हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान में मनाया गया। महासती श्री दिव्यप्रभाजी म.सा. ने प्रभु महावीर के जीवन को पुण्य पुंज, प्रेरणा पुंज और पुरुषार्थ पुंज से ओतप्रोत बताया। महासती श्री चैतन्यप्रभाजी ने सहन करने, अपकारी पर भी उपकार करने, अप्रमत्त भाव में जीने एवं लक्ष्य प्राप्ति के पूर्व विश्राम नहीं करने की प्रेरणा की। लगभग 200 श्रावक-श्राविका की उपस्थिति रही। संस्थान के छात्रों ने सेवा का लाभ लिया। इसी दिन लाल भवन में प्राज्ञ संघ की महासती श्री कमलाजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासतियों ने प्रभु महावीर के जीवन से प्रेरणा लेने हेतु प्रेरित किया। 29 अप्रेल को अक्षय तृतीया पर महासती श्री संगीता जी म.सा., महासती श्री दिव्यप्रभाजी म.सा. का आचार्य श्री हस्ती आध्यात्मिक शिक्षण संस्थान में प्रवचन हुआ। साध्वीप्रमुखा ने मंगलपाठ सुनाया। 03 मई को पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. का 26 वां पुण्य स्मृति दिवस मालवीय नगर के हरि मार्ग पर स्थित जैन स्थानक में साध्वीप्रमुखा के सान्निध्य में तप-त्याग के साथ मनाया गया। इस दिन तीन-तीन सामायिक एवं एकाशन की तपस्याएँ सम्पन्न हुईं। महासती श्री पुष्पलताजी, महासती श्री दिव्यप्रभाजी ने पूज्य आचार्यप्रवर के सद्गुणों पर विस्तार से प्रकाश डाला। अनेक वक्ताओं ने भी पूज्य गुरुदेव के गुणगान किए। उधर लाल भवन में महासती श्री संगीताजी म.सा. के सान्निध्य में पूज्य आचार्यप्रवर के गुणानुवाद के साथ एकाशन तप सम्पन्न हुए। उन्होंने सिंवाची पट्टी में 144 गाँवों के झगड़े के समापन, मूक पशुओं के प्रति करुणा भाव आदि अनेक गुणों का विवेचन किया। संघ मंत्री श्री विमलचन्दजी डागा ने भी पूज्य गुरुदेव के गुणों से सम्बद्ध संस्मरण प्रस्तुत किए। श्रीमती निशाजी मेहता द्वारा भजन सुनाया गया। 14 मई को मालवीयनगर स्थानक में साध्वीप्रमुखा का 79 वां जन्मदिवस प्रातः नवकार मंत्र के जाप, प्रवचन एवं उसके पश्चात् प्रश्नोत्तरी कार्यक्रम के साथ मनाया गया। आपके सांसारिक पिताश्री उमरावमलजी सेठ पुनमिया श्रावक के नाम से प्रसिद्ध थे। आपने 56 वर्ष

पूर्व पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. के मुखारविन्द से दीक्षा ग्रहण कर शासन प्रभाविका महासती श्री मैनासुन्दरीजी म.सा. का शिष्यत्व स्वीकार किया था। ज्ञान-ध्यान, तप-त्याग एवं संयम के प्रति निष्ठा के साथ आप आगे बढ़ती गई। आपने लगभग 18-19 वर्ष दक्षिण भारत में व्यतीत किए तथा अनेक राज्यों में विचरण कर धर्म की जाहोजलाली की। आपकी सन्निधि में रत्नसंघ में अनेक साध्वियाँ दीक्षित हुई हैं। आपमें सरलता एवं वात्सल्य का भाव सबमें प्रेम एवं मैत्री का संचार करता है। आपके सांसारिक भ्राता श्री विनोदजी सेठ एवं संघ मंत्री श्री विमलजी डागा ने भी साध्वीप्रमुखाजी के गुणों पर प्रकाश डाला। साध्वीप्रमुखाजी ने अंत में मंगलपाठ सुनाया। सभा का सुन्दर संचालन श्री वीरेन्द्रजी झामड़ ने किया। अनेक व्रत-प्रत्याख्यान करते हुए साध्वीप्रमुखाजी हेतु दीर्घ आयु की मंगल कामना की गई। *-सुरेशचन्द कोठारी, मंत्री*

नदबई- व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवरजी म.सा., सेवाभावी महासती श्री विमलाकंवरजी म.सा. आदि ठाणा के सान्निध्य में महावीर भवन नदबई में पूज्य आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म.सा. की 26 वीं पुण्य तिथि 03 मई को एकाशन दिवस के रूप में मनाई गई। लगभग 55 एकाशन के साथ अन्य तपस्याएँ भी सम्पन्न हुईं। महासती श्री सिद्धि प्रभाजी म.सा., महासती श्री रिद्धिप्रभाजी म.सा., महासती श्री वृद्धिप्रभाजी म.सा., महासती श्री विमलाकंवरजी म.सा. ने पूज्य आचार्य हस्ती के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला। इस अवसर पर डेहरामोड़, पहरसर, खेरली, भरतपुर, मई आदि क्षेत्रों के श्रावक-श्राविका पधारे। 04 मई को उपाध्यायप्रवर का 27 वां उपाध्यायपद आरोहण दिवस ज्ञान एवं स्वाध्याय दिवस के रूप में मनाया गया। *-नरेशचन्द जैन, मंत्री*

महवा (दौसा)- व्याख्यात्री महासती श्री सोहनकंवरजी म.सा. एवं सेवाभावी श्री विमलावतीजी म.सा. आदि ठाणा का विचरण पल्लीवाल क्षेत्र में चल रहा है। श्री सोहनकंवरजी म.सा. आदि ठाणा 4 करौली से कटकड़, पटोदा, कजानीपुर, बरगमां, झारेड़ा, फाजिलाबाद, ढेहरा, करमपुरा, बौण, खेडला, कुतुकपुर, खाबदा, गहनोली, रसीदपुर, पाखर, खोंकर महवा पधारीं। उधर सेवाभावी श्री विमलावतीजी म.सा. आदि ठाणा 3 खोह, सहाड़ी, रोणिजाथान, भनोखर होते हुए दांतियाँ पहुँचीं। महुवा में दोनों सिंघाड़ों का मिलन हुआ। यहाँ से 20 अप्रेल को खेड़लीगंज पधारी तथा यहाँ से नदबई की ओर विहार किया। प्रत्येक रविवार को धर्मस्थान में आकर सामायिक, भक्तामर स्तोत्र, नवकार मंत्र आदि की साधना अनेक ग्राम नगरों में चल रही है। धार्मिक पाठशालाएँ भी गतिशील हैं।

-अशोककुमार जैन, महामंत्री

होशियारपुर- व्याख्यात्री महासती श्री मुक्तिप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा का दिल्ली से पंजाब की ओर विहार हुआ। पंजाब के बरेठामण्डी में महासती श्री संयमप्रभाजी म.सा. के स्वास्थ्य में प्रतिकूलता हुई। बरेठा मण्डी के सभी श्रावक-श्राविकाओं ने समर्पित भाव से महासती मण्डल की श्रमणोचित औषधोपचार में महनीय सेवाएँ प्रदान कीं। होशियारपुर से सुश्राविका श्रीमती किरणजी जैन, श्री नवनीतजी जैन तथा उनके सुपुत्र ने उपस्थित हो सेवा का लाभ लिया। गोहाना की डॉ. प्रतिभाजी जैन जो महासती मण्डल के विहार में निरन्तर सहयोग प्रदान कर रही थी, वे भी सेवा में सन्नद्ध रहीं। मडलोडा मण्डी से सुश्रावक श्री मदनलालजी जैन तथा भटिण्डा से श्री पारसमलजी कुम्भट 'ब्यावर वाले', श्री महेश जी बोथरा, प्रधान-जैन समाज भटिण्डा, श्री उमेशजी जैन, श्री शांतिलालजी बुरड़ ने भी उपस्थित होकर श्रमणोचित औषधोपचार में अमूल्य सेवाएँ प्रदान कीं। संघ के राष्ट्रीय कार्याध्यक्ष श्री आनन्दजी चौपड़ा-जयपुर, संघ के उपाध्यक्ष (स्वास्थ्य समिति) डॉ. प्रेमसिंहजी लोढ़ा-जयपुर तथा जोधपुर के श्री महेन्द्रजी सुराणा तथा अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् के कार्याध्यक्ष श्री लोकेशजी कुम्भट-जोधपुर ने भी वहाँ उपस्थित होकर महासतीवृन्द के स्वास्थ्य की सुखसाता पृच्छा कर दर्शन-वन्दन का लाभ लिया।

-पूरणराज अबानी, महामंत्री

आचार्य हस्ती-स्मृति-सम्मान 2017 तथा संघ द्वारा प्रदत्त अन्य सम्मान हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित

आचार्य हस्ती-स्मृति सम्मान

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर द्वारा प्रतिवर्ष जैन आगम, जैन धर्म-दर्शन, कला एवं संस्कृति तथा जैन जीवन-पद्धति के क्षेत्र में लेखन, शोध तथा जैन सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में विशिष्ट योगदान करने वाले विशिष्ट विद्वान् को 'आचार्य हस्ती-स्मृति-सम्मान' से सम्मानित किया जाता है। इस सम्मान हेतु लेखकों से सम्मान योग्य कृति की चार प्रतियाँ 30 जून 2017 तक आमन्त्रित हैं। उक्त तिथि के पश्चात् प्राप्त प्रविष्टियाँ सम्मिलित नहीं की जाएगी। सम्मान हेतु नियम इस प्रकार हैं-

1. सम्मान हेतु प्रकाशित अथवा अप्रकाशित (टंकित) कृति की चार प्रतियाँ प्रेषित की जानी चाहिए।
2. प्रकाशित कृति सन् 2013 से पूर्व की नहीं होनी चाहिए।
3. अन्य संस्थाओं द्वारा पूर्व में पुरस्कृत कृति पर यह सम्मान नहीं दिया जाएगा।
4. कृति का विशेषज्ञ विद्वानों से मूल्यांकन कराया जाएगा।
5. कृति के मौलिक एवं पूर्व में पुरस्कृत न होने का प्रमाण-पत्र संलग्न करना होगा।
6. विद्वान् की एक कृति अथवा उनके सम्पूर्ण योगदान के आधार पर भी सम्मानित किया जा सकेगा।
7. सम्मान के रूप में 51 हजार की राशि प्रशस्ति-पत्र के साथ प्रदान की जाती है।

आवदेन-पत्र कृति की चार प्रतियों के साथ अपने बायोडेटा एवं सम्पर्क सूत्र सहित संघ कार्यालय के पते पर प्रेषित करें।

युवा प्रतिभा- शोध साधना-सेवा-सम्मान (45 वर्ष की आयु तक)

1. **प्रशासनिक चयन-** राज्यस्तरीय व केन्द्रीय प्रशासनिक सेवा, न्यायाधिपति आदि विशिष्ट पदों पर चयन।
2. **प्रोफेशनल विशिष्ट-** डॉक्टर, इंजीनियर, चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट, कम्पनी सचिव व अन्य प्रोफेशनल कोर्स में योग्यता सूची में स्थान पाने पर।
3. **शोध-** वैज्ञानिक खोज (अहिंसा व जैन सिद्धान्तों को पुष्ट करने वाली)
4. **संघ-सेवा-** चतुर्विध संघ-सेवा, विशेष धार्मिक अध्ययन, धार्मिक लेखन इत्यादि।

उपर्युक्त में से किसी एक क्षेत्र में उत्कृष्ट प्रविष्टि/व्यक्ति का चयन किया जाएगा।

विशिष्ट स्वाध्यायी सम्मान (श्राविका, युवा, वरिष्ठ स्वाध्यायी)

कम से कम 10 वर्ष स्वाध्याय संघ, जोधपुर से स्वाध्यायी (पर्युषण पर्वाराधन) के रूप में सक्रिय सेवा। (युवा स्वाध्यायी के लिए आवश्यक होने पर सेवा वर्ष में छूट दी जा सकेगी।)

गुणी-अभिनन्दन-

1. **तपस्या-** कम से कम पाँच वर्ष तक एकान्तर, दीर्घ तपस्या, दीर्घ संवर-साधना या अन्य विशिष्ट तप।
2. **अन्य-** सेवा, साधना, संघ उन्नयन में योगदान, चतुर्विध संघ-सेवा, विद्वान्।

न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा स्मृति युवा-शिक्षा-प्रतिभा सम्मान

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर संघ-संरक्षक न्यायमूर्ति श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा

की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी स्व. श्रीमती उगमकंवरजी लोढ़ा की पावन प्रेरणा से संघ द्वारा प्रदत्त युवा शिक्षा-प्रतिभा सम्मान हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित हैं। इसके अन्तर्गत उन छात्र-छात्राओं की प्रविष्टियाँ स्वीकार की जायेंगी, जिन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में विशिष्ट उपलब्धि प्राप्त की हो। माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, विश्वविद्यालय आदि की परीक्षाओं में वरीयता सूची में विशिष्ट स्थान प्राप्त करने वाले श्रेष्ठ छात्र को 21 हजार रुपये की राशि से सम्मानित कर प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाएगा। प्रतियोगी एवं प्रोफेशनल पाठ्यक्रमों में उच्च वरीयता प्राप्त छात्र-छात्रा को भी सम्मानित किया जा सकता है। इच्छुक अभ्यर्थी आवेदन करते समय अंकतालिका की सत्यापित प्रतिलिपि संलग्न करें।

डॉ. बिमला भण्डारी जैन रत्न शोध सम्मान

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की पूर्व महामंत्री डॉ. बिमला जी भण्डारी की पुण्य स्मृति में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के तत्त्वावधान में भण्डारी परिवार की ओर से जैन धर्म-दर्शन से सम्बद्ध विषय पर पी-एच्.डी एवं डी.लिट् उपाधि प्राप्त करने वाले शोधकर्त्ताओं को 'डॉ. बिमला भण्डारी जैन रत्न शोध सम्मान' से सम्मानित किया जाएगा। इस हेतु आवश्यक बिन्दु इस प्रकार हैं-

1. जिन शोधकर्त्ताओं ने 18 फरवरी 2016 से 17 फरवरी 2017 की अवधि में पी-एच्.डी/डी.लिट् उपाधि प्राप्त की है, उनमें से 5 पी-एच्.डी. उपाधिधारकों तथा 2 डी.लिट् उपाधिधारकों को क्रमशः 11 हजार रुपये एवं 15 हजार रुपये की प्रोत्साहन राशि से सम्मानित किया जाएगा।
2. निर्धारित अवधि के मध्य जो भी जैनधर्म-दर्शन से सम्बद्ध विषय पर पी-एच्.डी. एवं डी.लिट् उपाधि प्राप्तकर्त्ता होंगे, वे इस सम्मान हेतु आवेदन कर सकते हैं। आवेदन-पत्र के साथ पी-एच्.डी./डी. लिट् उपाधि के समुचित सर्टिफिकेट एवं शोधकार्य का सारांश संलग्न करना होगा।
3. प्राप्त आवेदन-पत्रों का निर्णायक समिति द्वारा मूल्यांकन कर सम्मान हेतु अनुशंसा की जाएगी।
4. सम्मान राशि 'श्री सरदारमल भण्डारी चेरिटेबल ट्रस्ट, जयपुर' के सौजन्य से प्रदान की जाएगी।

उक्त सभी सम्मानों हेतु अपनी प्रविष्टियां संघ के निम्नांकित पते पर संबंधित सम्मान का नाम लिखते हुए **30 जून 2017** से पूर्व प्रेषित करें। ***-पूरणराज अबानी, महामंत्री, अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोन नं. 0291-2636763***

संघ एवं संघीय संस्थाओं के पदाधिकारियों की बैठक आयोजित

संघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री पी. शिखरमल जी सुराणा के जोधपुर प्रवास के दौरान 14 मई 2017 को संघ एवं सहयोगी संस्थाओं के पदाधिकारियों की आवश्यक बैठक पावटा स्थित अतिथि भवन में रखी गई। बैठक में संघाध्यक्ष महोदय ने सभी पदाधिकारियों से संघ एवं संघीय संस्थाओं की गतिविधियों के उन्नयन एवं विकास हेतु सुझाव आमंत्रित किए तथा आपसी विचार-विमर्श के साथ बैठक सम्पन्न हुई। *-पूरणराज अबानी, महामंत्री*

आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की आगामी परीक्षा 16 जुलाई 2017 को

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड, जोधपुर की कक्षा 1 से 12 तक की आगामी परीक्षा **16 जुलाई 2017** को दोपहर 12.30 बजे से आयोजित की जायेगी।

1. परीक्षा ज्ञानवृद्धि का प्रमुख साधन है। क्रमबद्ध एवं सही ज्ञान ही व्यक्ति को हित-अहित की जानकारी कराता है। अतः ज्ञान बढ़ाने एवं सुसंस्कार पाने हेतु आप स्वयं भी परीक्षा दें तथा अन्य भाई-बहनों को भी परीक्षा में भाग लेने की प्रभावी प्रेरणा कर धर्म दलाली का लाभ प्राप्त करें।

2. कम से कम 10 परीक्षार्थी होने पर परीक्षा केन्द्र नया प्रारंभ किया जा सकता है।
3. परीक्षा से सम्बन्धित आवेदन-पत्र एवं पुस्तकें शिक्षण बोर्ड कार्यालय से प्राप्त की जा सकती है।
4. सभी उत्तीर्ण परीक्षार्थियों को प्रोत्साहन पुरस्कार व मेरिट में आने वालों को विशेष पुरस्कार से सम्मानित किया जाता है।
5. परीक्षार्थियों के प्रोत्साहन पुरस्कार उनके स्वयं के बैंक खाते में भिजवाये जाते हैं, अत: परीक्षार्थी आवेदन-पत्र भरते समय अपने बैंक खाता सम्बन्धी पूर्ण जानकारी अनिवार्य रूप से भरें।
6. परीक्षार्थियों के लिए पाठ्यपुस्तकें हिन्दी, अंग्रेजी तथा गुजराती तीनों भाषाओं में प्रकाशित हैं।
7. परीक्षा में प्रश्नों के उत्तर हिन्दी, अंग्रेजी तथा गुजराती इन तीनों में से किसी भी भाषा में लिखे जा सकते हैं।

परीक्षा सम्बन्धी अन्य जानकारी के लिए सम्पर्क करें-अशोक चोरडिया, संयोजक-94141-29162, नवरतन गिड़िया, सचिव-94141-00759, धर्मचन्द जैन, रजिस्ट्रार-93515-89694, शिक्षण बोर्ड कार्यालय, जोधपुर-0291-2630490, फेक्स : 2636763, **Website : jainratnaboard.com, E-mail: shikshanboardjodhpur@gmail.com**

श्राविका मण्डल का मारवाड़-पल्लीवाल क्षेत्र में प्रवास कार्यक्रम

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की महासचिव श्रीमती बीनाजी मेहता-जोधपुर, विहार सेवा समिति की उपाध्यक्ष श्रीमती पुष्पाजी मेहता-पीपाड़शहर, स्वाध्याय संघ की पूर्व सचिव श्रीमती मोहनकौरजी जैन-जोधपुर, श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल, जोधपुर शक्तिनगर क्षेत्र की संयोजक श्रीमती कंचनजी रांका द्वारा 05 मई से 12 मई 2017 तक गोटन, पाली, भोपालगढ़, पीपाड़शहर, मेड़ता, पुष्कर, दूदू, ब्यावर, अजमेर, जयपुर आदि क्षेत्रों में प्रवास कार्यक्रम किया गया। पल्लीवाल क्षेत्र में अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल की महासचिव श्रीमती बीनाजी मेहता, सचिव श्रीमती अरुणाजी कर्नावट-जयपुर, श्राविका मण्डल की उपाध्यक्ष श्रीमती पुष्पाजी मेहता-पीपाड़शहर, मण्डावर शाखा अध्यक्ष श्रीमती अर्चनाजी जैन ने पहरसर, खेरली, नदबई, भरतपुर, हिण्डौनशहर, मण्डावर, हरसाना आदि ग्राम-नगरों में 14 से 16 मई 2017 तक प्रवास कार्यक्रम किया।

प्रवास कार्यक्रम में संत-सतीवृन्द के दर्शन-वंदन, प्रवचन-श्रवण के साथ स्थानीय संघ, श्राविका मण्डल, युवक परिषद् के पदाधिकारियों-स्वाध्यायियों, श्रावक-श्राविकाओं आदि से सम्पर्क साधकर गुरु एवं संघ के प्रति श्रद्धा समर्पण, संघ में वर्धापन कैसे हो सके, विचार-चिन्तन के साथ संघ समर्पण एवं समय का भोग देने की प्रेरणा की गई। स्थानक में प्रतिदिन सामायिक-प्रतिक्रमण करने और धोवन पानी के लिए विशेष प्रेरणा कर आत्मीयता बढ़ाने का प्रयास किया गया। *-बीना मेहता, महासचिव*

बनें आगम अध्येता (6)

आवश्यकसूत्र पर खुली पुस्तक परीक्षा आयोजन

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल द्वारा 'बनें आगम अध्येता' योजना के अन्तर्गत 'आवश्यक सूत्र' परीक्षा की पारितोषिक राशि प्रतिभागी के बैंक खाते में प्रेषित की जायेगी। अत: प्रतियोगिता के प्रत्येक प्रतिभागी अग्रलिखित जानकारी भिजवाने का श्रम करावें :- Name of Bank, Name of Account holder, Bank Account Number, Bank Place, Bake IFS code, Micr Code, Mobile No. श्राविका मण्डल की ईमेल पर भी भेज सकते हैं। नये आगम पर परीक्षा का आयोजन की जानकारी आपको शीघ्र भिजवाई जायेगी। ईमेल का पता-shravikmandal@yahoo.com *-बीना मेहता-महासचिव*

केन्द्रीय स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर जोधपुर में 24 जून से

स्वाध्यायियों के ज्ञान में उत्तरोत्तर विकास हो, इस लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ द्वारा **दिनांक 24 से 28 जून 2017 तक 'पंच दिवसीय स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर' जोधपुर (राज.)** में **परमश्रद्धेय उपाध्यायप्रवर पण्डितरत्न श्री मानचन्द्र जी म.सा. आदि ठाणा** के पावन सान्निध्य में आयोजित किया जा रहा है। इस शिविर में निम्नांकित योग्यता में से एक भी योग्यता प्राप्त स्वाध्यायी भाग ले सकेंगे- 1.श्री स्था. जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के स्वाध्यायी हों एवं पर्युषण सेवा देते हों। 2.अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की पंचम परीक्षा उत्तीर्ण हों। 3.सामायिक, प्रतिक्रमण, पच्चीस बोल कण्ठस्थ हो।

उक्त शिविर में कुशल प्रशिक्षकों द्वारा **अन्तगडसूत्र वाचन, प्रवचन शैली, भजनकला एवं आध्यात्मिक शिक्षण बोर्ड की कक्षाओं के पाठ्यक्रम** के साथ ही **आध्यात्मिकता एवं नैतिकता** को पुष्ट करने वाले विविध विषयों का प्रशिक्षण दिया जाएगा। **विशेषतः इस शिविर में प्रख्यात प्रशिक्षकों द्वारा वक्तृत्व कला विषय का प्रभावी प्रतिपादन किया जाएगा।** बिना पूर्व आवेदन पत्र व स्वीकृति के शिविर में प्रवेश देना सम्भव नहीं होगा। आवेदन-पत्र **15 जून, 2017** तक प्राप्त होने पर स्वीकृति भेजी जाएगी।

शिविर सम्बन्धी जानकारी के लिए निम्नांकित महानुभावों से सम्पर्क कर सकते हैं- 1. जगदीशमल कुम्भट, निदेशक-87640-34586, 2. श्री ओमप्रकाश बांठिया, संयोजक-94615-22309, 3. श्री गोपालराज अबानी, सचिव-80036-15215, 4. श्री प्रकाश सालेचा, जोधपुर-94610-26279, 5. श्री धीरज डोसी, जोधपुर-94625-43360, 6. कार्यालय- श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, घोड़ों का चौक, जोधपुर-342001 (राज.), फोनः- 0291-2624891, 94141-26279 (समय 10 से 5 बजे तक)

-ओमप्रकाश बांठिया, संयोजक

अर्द्धमूल्य पर साहित्य उपलब्ध

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के पर्युषण में सेवा देने वाले स्वाध्यायी बन्धुओं को कल्याणमल चंचलमल चोरडिया ट्रस्ट, जोधपुर द्वारा अर्द्धमूल्य में साहित्य उपलब्ध करवाया जा रहा है। स्वाध्यायी बन्धु अपनी आवश्यकता एवं पसन्द का साहित्य खरीदकर उसका बिल स्वाध्याय संघ कार्यालय, जोधपुर को भेजकर या प्रस्तुत कर कुल राशि का 50 प्रतिशत भुगतान प्राप्त कर सकते हैं। इस सुविधा का अधिक-से-अधिक स्वाध्यायी बन्धु लाभ उठाएँ, ऐसा विनम्र अनुरोध है। *-गोपालराज अबानी, सचिव*

'अहिंसात्मक चिकित्सा सेवा सम्मान' हेतु प्रविष्टियाँ आमन्त्रित

आचार्य हस्ती अहिंसा शोध संस्थान, जोधपुर द्वारा स्वावलम्बी अहिंसात्मक चिकित्सा पद्धतियों के द्वारा उपचार, प्रशिक्षण, सेमीनार, प्रचार-प्रसार एवं शोध के क्षेत्र में सेवा देने वाले चयनित व्यक्तियों को भव्य समारोह में सम्मानित किया जायेगा। इनकी श्रेणियाँ इस प्रकार हैं- **1. उत्कृष्ट सेवा सम्मान (एक)** राशि 51000/ रुपये, 2. **विशिष्ट सेवा सम्मान (दो)** राशि 11000/- रुपये प्रत्येक, **3. दक्ष सेवा सम्मान (तीस)** राशि 5000/- रुपये प्रत्येक। उपर्युक्त सम्मान हेतु आपसे सविनय अनुरोध है कि अपने कार्यों की विस्तृत जानकारी के साथ अपनी प्रविष्टि **30 सितम्बर 2017** तक डाक द्वारा निम्न पते पर प्रेषित करने का कष्ट करावें। **सम्पर्क सूत्रः-** डॉ. चंचलमल चोरडिया, प्रबन्धक न्यासी, आचार्य हस्ती अहिंसा शोध संस्थान, चोरडिया भवन, गोल बिल्डिंग रोड, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-342003 (राज.), फोन : 0291-2621454, 94141-34606 (मोबाइल)।

-चंचलमल चोरडिया

मिड-ब्रेन प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित

अ.भा. श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र, जोधपुर के द्वारा मिड-ब्रेन एक्टिवेशन के शिविरों के आयोजन की मांग को देखते हुए निम्न विवरणानुसार शिविर आयोजित हुए हैं- **1.** चौपासनी हाउसिंग बोर्ड 16 सेक्टर स्थानक में 15, **2.** गजेन्द्र ज्ञानशाला, रिद्धि विनायक अपार्टमेन्ट, गुलाब नगर में 16, **3.** नेहरूपार्क स्थानक में 37, **4.** समता भवन, कमला नेहरू नगर में 32 एवं **5.** शास्त्रीनगर (20 मई 2017 से प्रारम्भ) में 15 छात्र लाभान्वित हुए। 15 मई 2017 को राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री पी. एस. सुराणा ने समता भवन, कमला नेहरू नगर में चल रहे इस शिविर में प्रशिक्षण का अवलोकन किया। प्रशिक्षण की उपलब्धि पर छात्रों का परीक्षण कर संतोष व्यक्त किया। मिड-ब्रेन एक्टिवेशन का एडवांस कोर्स प्रशिक्षण शिविर शक्तिनगर छट्ठी गली में आयोजित हो चुका है।

छात्र-छात्राओं का प्रतिभा प्रदर्शन समारोह वृहत् स्तर पर 30 जुलाई, 2017 को आयोजित होना निश्चित हुआ है। एतदर्थ इस समारोह में भाग लेने वाले इच्छुक छात्र-छात्राओं का 'चयन शिविर' 14 मई 2017 को नेहरूपार्क जैन स्थानक में आयोजित हुआ। इसमें छात्र-छात्राओं द्वारा सामायिक-प्रतिक्रमण, पाठ उच्चारण, नाटक, संगीत, संवाद, योग, मिड-ब्रेन एक्टिवेशन, प्रार्थना, ध्यान, गुरुवंदन, प्रतिज्ञा पाठ आदि कार्यक्रमों में भाग लेने के इच्छुक छात्र-छात्राओं का चयन किया गया। चयनित छात्र-छात्राओं को प्रशिक्षित करने का कार्य अब शुरु किया जायेगा। *-राजेश भण्डारी, सचिव*

अल्पसंख्यकों को मिलते हैं कई लाभ

अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम 1992 के केन्द्रिय अधिनियम संख्या 19 के अन्तर्गत अल्पसंख्यक कार्य मंत्रालय भारत सरकार नई दिल्ली की अधिसूचना दिनांक 27.01.2014 के द्वारा जैन समुदाय को भी अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में अधिसूचित किया गया है। अल्पसंख्यक मामलात विभाग के अन्तर्गत अल्पसंख्यक वित्त एवं विकास सहकारी निगम लि., राजस्थान मदरसा बोर्ड, वक्फ बोर्ड एवं अल्पसंख्यक आयोग द्वारा अल्पसंख्यक वर्ग के समुदायों को विभिन्न कल्याणकारी योजनाओं में सामाजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक उन्नयन के लिए लक्ष्य एवं पात्रता के अनुरूप लाभ दिया जाता है। वे निम्न हैं- 1. उत्तर मैट्रिक छात्रवृत्ति कक्षा 11-12 एवं कॉलेज स्तरीय कक्षाओं में नियमित अध्ययनरत विद्यार्थियों को ऑनलाइन आवेदन करने पर दी जाती है। 2. मैरिट कम मीन्स छात्रवृत्ति तकनीकी एवं व्यावसायिक पाठ्यक्रमों बीएससी नर्सिंग, एमएससी नर्सिंग, मेडिकल कोर्स (MBBS/BDS/BVS&H/BAMS/BUMS/BHMS) इन्जीनियरिंग कोर्स, एलएलबी, एलएलएम, एमसीए, एमबीए, बीफार्मा, एमफार्मा आदि कोर्स हेतु नियमित अध्ययनरत विद्यार्थियों को ऑनलाइन आवेदन करने पर दी जाती है। उपर्युक्त दोनों छात्रवृत्ति के लिए आवेदन करने हेतु पिछली उत्तीर्ण कक्षा में 50 प्रतिशत अंक होने अनिवार्य हैं एवं माता-पिता की वार्षिक आय समस्त स्रोतों से 2.50 लाख रुपये से अधिक नहीं होनी चाहिए। 3. अनुप्रति योजना के अन्तर्गत आईएएस, आरएएस, आईआईटी, आईआईएम, क्लेट आदि प्रतियोगिता परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने वाले विद्यार्थियों एवं 12 वीं बोर्ड परीक्षा में 60 प्रतिशत अंकों से उत्तीर्ण होकर राजकीय मेडिकल, इन्जीनियरिंग कॉलेज में नियमित प्रवेश प्राप्त करने वाले एवं अनुप्रति योजना में आवेदन करने वाले विद्यार्थियों को प्रोत्साहन स्वरूप निर्धारित राशि दी जाती है। 4. व्यावसायिक ऋण योजना में कम ब्याज दर पर व्यवसाय हेतु ऋण मिलता है। 5. शिक्षा ऋण योजना में रोजगारोन्मुखी व्यावसायिक पाठ्यक्रम हेतु ऋण मिलता है। इनके अतिरिक्त अल्पसंख्यक बालक/बालिका छात्रावास, प्रधानमंत्री का 15 सूत्री कार्यक्रम, अल्पसंख्यक संस्था दर्जा प्रमाण पत्र, कौशल विकास प्रशिक्षण, एम.एस.डी.पी. योजना आदि में भी लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अधिक जानकारी हेतु देखिए

www.minorityaffairs.rajasthan.gov.in

चेन्नई की प्रयास संस्था का प्रयास सराहनीय

चेन्नई- प्रयास नामक संस्था वैवाहिक आडम्बर और अपव्यय को न्यून करने के लिए कई प्रयत्न कर रही है, यथा- 1. नवयुवक-युवतियों एवं बालक-बालिकाओं को सड़कों पर नृत्य करने, पटाखे छोड़ने, रात्रि समारोह आयोजन, संगीत संध्या, मांसाहारी एवं पंच सितारा होटलों में आयोजन आदि के दुष्परिणामों को विस्तृत रूप से समझाकर उन्हें छोड़ने के लिए प्रेरित कर रही है। 2. मात्र दो लाख ग्यारह हजार में शादी एवं एक लाख पचहत्तर हजार रुपये में आशीर्वाद समारोह की सारी व्यवस्थाएँ सभी आधुनिक सुविधाओं से युक्त उपलब्ध करवाती है ताकि जैन परिवार के विवाह समारोह में अनावश्यक आडम्बर और अपव्यय पर अंकुश लग सके एवं जैन समाज के मध्यम एवं निम्न वर्ग को नित्य नई परेशानियों से राहत पहुँचाई जा सके। विवाह सम्बन्धी सारे आयोजन सूर्यास्त पूर्व यानी दिन में ही आयोजित किए जायेंगे। 3. सामूहिक आयोजनों में बड़ी मात्रा में भोजन जूठे में चला जाता है। इस विषय पर समाज में जागरूकता लाने हेतु 'प्रयास' ने सामूहिक आयोजन स्थल पर खड़े विज्ञापन लगाने शुरु किए हैं। जिनमें आकर्षक संदेशों द्वारा अन्न का महत्त्व, अन्न देवता का अपमान करने का दुष्परिणाम, सीमित मात्रा में उपयुक्त भोजन लेने आदि प्रेरणात्मक नारों को आकर्षक चित्रों के माध्यम से जैन समाज के महानुभावों को भलीभांति समझाने का प्रयास करता है। 4. ग्रीष्मकालीन अवकाश में चेन्नई महानगर के विभिन्न क्षेत्रों में प्रदर्शनियों एवं भाषण प्रतियोगिताओं के माध्यम से समाज में जागरूकता लाने का प्रयास गतिमान है। *-प्रदीपराज सेठिया*

संक्षिप्त समाचार

अहमदाबाद- परमश्रद्धेय आचार्यभगवन्त श्री हस्तीमलजी म.सा. की 26 वीं पुण्य तिथि श्री जैन रत्न श्रावक संघ द्वारा सामूहिक सामायिक साधना के साथ मनाई गई। श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के संयोजक श्री ओमप्रकाशजी बांठिया ने आचार्य भगवन्त के जीवन संस्मरणों के माध्यम से विशेषकर उल्लेखनीय संथारा के प्रसंग को रखा। सामायिक-स्वाध्याय के माध्यम से जीवन उन्नत करने की प्रेरणा प्रदान की। पाली संघ के मंत्री श्री चैनराज जी मेहता ने गुरु-गुणगान महिमा प्रस्तुत की। संघ द्वारा प्रार्थना, संकल्प, गजेन्द्र चालीसा सहित व्रत-प्रत्याख्यान किए गए। *-ललित गोलेच्छा*

बैंगलुरु (कर्नाटक)- श्री जैन रत्न श्राविका मण्डल (कर्नाटक) बैंगलुरु द्वारा भगवान महावीर जन्म-कल्याणक अहिंसा दिवस के उपलक्ष्य में जीवदया, अभयदान एवं प्राणी सेवा का कार्य किया गया। अमृत गौशाला में गायों को चारा, कबूतरों को चुग्गा दाना, जरूरतमंदों को वस्त्र व फल वितरण के साथ ही धर्मपुरा जीवदया केन्द्र में 41 अमर बकरों को छुड़वाकर अभयदान का अपूर्व कार्य किया गया। *-गौतमचन्द ओस्तवाल, मंत्री*

बैंगलुरु (कर्नाटक)- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ (कर्नाटक) बैंगलुरु व श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ ट्रस्ट (कर्नाटक) बैंगलुरु, श्री जैन रत्न युवक परिषद् (कर्नाटक) बैंगलुरु के तत्त्वावधान में आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के 81 वें जन्म-दिवस के उपलक्ष्य में अन्नदान व आवश्यक सामग्री वितरण कर मानव सेवा कार्य किया गया।

-गौतमचन्द ओस्तवाल, मंत्री

बैंगलुरु (कर्नाटक)- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ (कर्नाटक) बैंगलुरु व श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ ट्रस्ट (कर्नाटक) बैंगलुरु के संयुक्त तत्त्वावधान में श्रमणसंघीय महासती श्री आदर्शज्योतिजी म.सा. आदि ठाणा, महासती श्री धर्मप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा एवं महासती श्री सुप्रभाजी म.सा. आदि ठाणा के निश्रा में आचार्य श्री

हस्तीमलजी म.सा. का 26 वां पुण्य स्मृति दिवस दो-दो सामूहिक-सामायिक व विविध व्रत-प्रत्याख्यान से गुरु महिमा गुणगान एवं अपूर्व श्रद्धाभक्ति से मनाया गया। *-गौतमचन्द ओस्तवाल, मंत्री*

चेन्नई- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में भगवान ऋषभदेव का जन्म एवं दीक्षा कल्याणक व आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 79 वाँ जन्मदिवस आचार्य विजयराजजी म.सा. की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री मणिप्रभाजजी म.सा. आदि ठाणा 6 के पावन सान्निध्य में सामायिक व एकाशन दिवस के रूप में मनाया गया। महासती श्री सौम्यश्रीजी म.सा. ने आचार्यश्री को चक्रवर्ती से भी बढ़कर सामर्थ्यवान बताया। श्री निर्जरश्रीजी म.सा. ने सम्पूर्ण प्रवचन राजस्थानी भाषा में देते हुए आचार्यश्री को गणेशरूप अर्थात् गण के ईश, गणपति अर्थात् गण के मालिक, संघ के ईश, मुखिया बताया। महासती श्री मणिप्रभाजी म.सा. ने अवसर्पिणीकाल के प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव के गुणगान के भी गुणगान किए। श्री लीलमचन्दजी बाघमार, श्री राजेन्द्रजी बाघमार, श्री नरेन्द्रजी कांकरिया ने प्रभु ऋषभदेव एवं आचार्यश्री के गुणगान में अपने भाव रखे। प्रवचन सभा का संचालन संघ के मंत्री श्री गौतमचन्दजी लोढ़ा ने किया। *-आर. नरेन्द्र कांकरिया, प्रचार-प्रसार मंत्री*

साहुकारपेट (चेन्नई)- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. का 27 वाँ आचार्य पदारोहण दिवस 16 मई 2017 को सामायिक-स्वाध्याय दिवस के रूप में मनाया गया। श्री विरेन्द्रजी कांकरिया ने सूत्रकृतांग आगम का वाचन किया। श्री चम्पालालजी बोथरा, श्री नरेन्द्रजी कांकरिया, श्री प्रकाशचन्दजी ओस्तवाल, श्री गौतमचन्दजी लोढ़ा ने आचार्य भगवन्त के साधनामय जीवन के अनेक संस्मरण धर्म सभा में रखे। *-आर. नरेन्द्र कांकरिया, प्रचार-प्रसार मंत्री*

चेन्नई- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु के तत्त्वावधान में 03 मई 2017 को जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी का 26 वाँ स्मृति दिवस सामायिक एवं एकाशन के रूप में तीन सामायिक सहित साधनापूर्वक मनाया गया।

नई दिल्ली- श्वेतपिच्छाचार्य श्री विद्यानन्दजी मुनिराज की 93 वीं जन्म-जयन्ती के अवसर पर एलाचार्य प्रज्ञसागरजी महाराज को आचार्यपद पर प्रतिष्ठित किया गया। *-कमलकान्त जैन (कुन्दकुन्द भारती)*

उज्जैन- बाबा उमाकान्त महाराज के सान्निध्य में 22 मई 2017 को हर जाति और मज़हब के एक लाख लोगों ने हमेशा शाकाहारी रहने का संकल्प किया। बाबा जय गुरुदेव महाराज की पुण्यतिथि के अवसर पर आयोजित त्रिदिवसीय कार्यक्रम में पहले दिन यह ऐतिहासिक पवित्र संकल्प किया गया। इस कार्यक्रम को विश्व-कीर्तिमान की स्वर्ण-पुस्तक (गोल्डन बुक ऑफ वर्ल्ड रिकार्ड) में शामिल किया गया है। *-डॉ दिलीप धींग*

साहुकारपेट (चेन्नई)- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, तमिलनाडु एवं श्री जैन रत्न युवक परिषद् के तत्त्वावधान में धार्मिक संस्कार शिविर का आयोजन 05 मई से 14 मई 2017 तक स्वाध्याय भवन, साहुकारपेट (चेन्नई) एवं 01 मई से 10 मई 2017 तक सैदापैट एवं विरगमबाक्कम में सुसम्पन्न हुआ। श्री कालहस्ती एवं नई धोबीपेट में भी संस्कार शिविर का आयोजन किया गया। स्वाध्याय भवन, साहुकारपेट में 18, विरगम्बाक्कम में 95, सैदापेट में 90, नई धोबीपेट में 40 एवं कलाहस्ती में 101 शिविरार्थियों ने भाग लिया।

-आर नरेन्द्र कांकरिया, प्रचार-प्रसार मंत्री

मेड़तासिटी- श्री जयमल जैन छात्रावास विगत 60 वर्षों से संचालित है। सत्र 2017-18 के प्रवेश प्रारम्भ हो चुके हैं। जयमल जैन छात्रावास में आर्थिक कमजोर वर्ग के छात्रों को पूर्णतः निःशुल्क व्यवस्था दी जाती है तथा सशुल्क छात्रों को कम फीस में प्रवेश दिया जाता है। **सम्पर्क सूत्रः**-01590-231160

मालेगाँव (जिला-नाशिक)- कुमारी रुचि राजेन्द्रजी नाहर की जैन भागवती दीक्षा 07 मई 2017 को युवाचार्य श्री

महेन्द्रऋषिजी म.सा. के मुखारविन्द से सम्पन्न हुई। *-अनिलकुमार लोढ़ा, संघपति*

नागपुर- श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, नागपुर के तत्त्वावधान में व्याख्यात्री महासती श्री इन्दुबालाजी म.सा. आदि ठाणा 6 के सान्निध्य में 15 वर्ष की आयु से अधिक की अविवाहित लडकियों का 12 से 14 मई 2017 को लाइफ डिजाइनिंग-3 शिविर का आयोजन हुआ। इस शिविर का 45 शिविरार्थियों ने लाभ लिया। महासती श्री मुदितप्रभाजी म.सा. एवं महासती श्री सिंधुजी म.सा. ने अपने उद्बोधन से शिविरार्थियों में संस्कारों के बीजारोपण किए। भारतीय जैन संघटना के राष्ट्रीय पदाधिकारी रजनीश जैन ने 21 वीं सदी में 'लड़कियों का सक्षमीकरण' विषय पर संबोधित किया। *-डॉ. गौतम सिंघी*

पीपाड़- 'हीरा सेवा संस्थान' ट्रस्ट के तत्त्वावधान में निःशुल्क जाँच एवं रक्तदान शिविर में नाक, कान, गला रोग के विशेषज्ञ डॉ. अमित भण्डारी ने 141 मरीजों की जाँचकर निःशुल्क परामर्श दिए। इसी शिविर में 43 भाई-बहनों ने उत्साहपूर्वक श्री पारस ब्लड बैंक के विशेषज्ञों की उपस्थिति में रक्तदान किया। *-ललित कोठारी, संस्थापक अध्यक्ष*

जोधपुर- श्री वर्द्धमान जैन रिलीफ सोसायटी, जोधपुर द्वारा **स्व. श्री दलपतमलजी कुम्भट** की पुण्यस्मृति में कुम्भट परिवार के संयुक्त तत्त्वावधान में निःशुल्क शल्य चिकित्सा शिविर 23 जुलाई 2017 को आयोजित किया जायेगा। इस शिविर में अनुभवी एवं ख्याति प्राप्त सर्जन **डॉ. राम गोयल** (एम.एस.) द्वारा हर्निया, मस्सा, भगन्दर, एपेडिक्स, फिस्टूला आदि के ऑपरेशन किये जायेंगे। मरीजों को अस्पताल में तीन दिवस तक रखा जायेगा व उन्हें पाँच दिवसीय दवाई भी उपलब्ध कराई जायेगी। मरीजों की रक्तजाँच व डिजीटल एक्स-रे लागत दर पर की जायेगी। इसी दिन परामर्श जाँच शिविर में अहमदाबाद अस्पताल के चिकित्सक **डॉ. सौरभ गोयल** (जोइन्ट रिप्लेसमेन्ट सर्जन), **डॉ. हितेश शाह** (हृदय रोग विशेषज्ञ), **डॉ. शैलेश लोढ़ा** (मधुमेह, थाईराइड, हारमोन्स रोग विशेषज्ञ) द्वारा मरीजों की जाँच कर परामर्श दिया जायेगा। ध्यातव्य है कि वर्द्धमान हॉस्पिटल में नियमित रूप से अनुभवी चिकित्सकों द्वारा मरीजों की जाँच की जाती है। **सम्पर्क सूत्र-** 2627283, 89470-43735

-पूरणराज अबानी, अध्यक्ष

बधाई

जोधपुर- श्री मनमोहनजी कर्णावट, मंत्री-स्वास्थ्य समिति, अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ,

जोधपुर को 27-28 मई, 2017 को आयोजित अखिल भारतीय कर्णावट भाईपा संघ के राष्ट्रीय अधिवेशन में सर्वसम्मति से राष्ट्रीय अध्यक्ष घोषित किया गया। आप कर्मठ, मिलनसार एवं सेवानिष्ठ व्यक्तित्व हैं। आप रत्न संघ के साधु-साध्वीवृन्द के स्वास्थ्य सम्बन्धी अपने दायित्व को सजगतापूर्वक निर्वहन कर रहे हैं।

अहमदाबाद- प्रो. (डॉ.) अशोककुमारजी सिंघवी सुपुत्र स्व. डॉ. अचलमलजी सिंघवी को जोधपुर के 559 वें

स्थापना दिवस समारोह के अवसर पर 12 मई 2017 को **'मारवाड़-रत्न सम्मान'** और विज्ञान एवं प्रौद्योगिक क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान के लिए 'महाराज हनवन्तसिंह सम्मान' से सम्मानित करते हुए श्रीफल, शॉल, स्मृति चिह्न एवं रुपये 51000/- की राशि प्रदान की गई। इससे पूर्व भी वे अनेक पुरस्कारों से अलंकृत हुए हैं।

मैसूर- वीर पिता श्री बी.ए. कैलाशचन्दजी जैन ने समाज, धर्म के लिए, मानव जाति एवं जीवदया के लिए जो कार्य किए हैं तथा राजनैतिक क्षेत्र में, स्वाध्याय सेवा के क्षेत्र में, जैन एवं जैनेतर संघ-संस्थाओं में जो अविस्मरणीय सेवाएँ

प्रदान की हैं, उनकी उत्कृष्ट सेवाओं हेतु उन्हें **समाज रत्न** के अलंकरण से अलंकृत किया गया है।

झालावाड़- श्री हिमांशु जैन सुपुत्र श्रीमती उर्मिला-सोहनलाल जी जैन (अलीगढ़-रामपुरा) को सेन फ्रेंसिस्को (यू.एस.ए.) में **Culture luminary Award** से सम्मानित किया गया। वे वहाँ एम.एस. (Master of Science) कर रहे हैं।

चेन्नई- सुश्री दीपिका सुपुत्री श्रीमती संगीताजी (अध्यक्ष, जैन रत्न श्राविका मण्डल, चेन्नई)-महेन्द्रजी बोहरा एवं सुपौत्री श्री हस्तीमलजी बोहरा (अध्यक्ष, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, पीपाड़) ने एम.बी.बी.एस. (वर्ष 2016) के.एल.ई. यूनिवर्सिटी, बेलगांव से पूर्ण की एवं कर्नाटक मेडिकल काउंसिल से रजिस्ट्रेशन सर्टिफिकेट प्राप्त किया।

सीनियर सैकण्डरी के परिणाम पर बधाई

ऋषभ सुराणा

प्रांजल अबानी

हिमांशु सुराणा

शुभम जैन

1. **चेन्नई-** श्री ऋषभ सुराणा सुपुत्र श्रीमती सपना-राजेश जी सुराणा एवं सुपौत्र श्रीमती किरणजी-मंगलचन्दजी सुराणा ने 12 वीं की परीक्षा में 96.6 प्रतिशत से सफलता अर्जित की तथा दो विषयों में शत प्रतिशत अंक प्राप्त किए।
2. **जोधपुर-** श्री प्रांजल अबानी सुपुत्र श्रीमती रेखा-प्रवीणजी अबानी एवं सुपौत्र श्रीमती लीला-पूरणराजजी अबानी (महामंत्री-अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर एवं अध्यक्ष-श्री वर्द्धमान जैन रिलीफ सोसायटी, जोधपुर) के द्वारा सी.बी.एस.ई. बोर्ड में वाणिज्य वर्ग में 94.4 प्रतिशत अंक प्राप्त करने एवं टेबल टेनिस में ड्रिस्ट्रिक लेवल पर तथा **IPSC** टूर्नामेण्ट में खेलने की उपलब्धि प्राप्त करने पर हार्दिक बधाई।
3. **जोधपुर-** श्री हिमांशु सुराणा सुपुत्र श्रीमती रेखा-राजेन्द्रजी एवं सुपौत्र श्री हरकराजजी सुराणा ने सी.बी.एस.ई. बोर्ड (वाणिज्य संकाय) में 94 प्रतिशत अंक प्राप्त कर विद्या आश्रम स्कूल में प्रथम स्थान अर्जित किया है। आपको प्रतिक्रमण, भक्तामर, पुच्छिस्सु णं कण्ठस्थ है।
4. **अलीगढ़-रामपुरा-** श्री शुभम जैन सुपुत्र श्री चांदमलजी जैन ने कला वर्ग में 88 प्रतिशत अंक प्राप्त किए हैं।

श्रद्धाञ्जलि

पनरुटी (तमिलनाडु)- सुश्राविका श्रीमती कमला जी सिंघवी धर्मपत्नी श्री अजितराजजी सिंघवी का 09 मई 2017 को 86 वर्ष की वय में परलोकगमन हो गया। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने वाली चिन्तनशील श्राविका थीं। जीवन में अनेक त्याग-प्रत्याख्यान ग्रहण कर रखे थे। आप बाबाजी श्रद्धेय श्री जयन्तमुनिजी म.सा. की सांसारिक सुपुत्री थीं। संत-सतीवृन्द की सेवा-भक्ति में वे सदैव तत्पर रहती थीं। सिंघवी परिवार संघ-सेवा, समाज-सेवा में सदैव अग्रणी रहा है।

जोधपुर- समाजसेवी सुश्रावक श्री उपेन्द्रजी गाँधी सुपुत्र श्री अनराजजी गाँधी का 56 वर्ष की आयु में 07 मई 2017 को स्वर्गवास हो गया। आप मृदुभाषी, धर्म कार्य में अग्रणी, वित्तीय सलाहकार होने के साथ मिलनसार एवं सरल स्वभावी थे। आपका परिवार आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. के

अनन्य भक्त है तथा आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा., उपाध्यायप्रवर के प्रति श्रद्धा, समर्पण एवं पूर्ण भक्तिभाव से समर्पित है। आप नेहरूपार्क जोधपुर स्थानक के ट्रस्टी थे।

जोधपुर- सुश्राविका श्रीमती चैनकंवरजी ललवाणी धर्मपत्नी श्री प्रकाशमलजी ललवाणी का 68 वर्ष की आयु में 01 मई 2017 को संथारापूर्वक प्रयाण हो गया। आप नियमित सामायिक-प्रतिक्रमण करती थीं। आपकी सभी संत-सतियों के प्रति अटूट आस्था थी। आपके नेत्र दान किए गए।

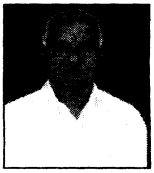

चेन्नई- तपस्वी साधक श्री सोहनचन्दजी गादिया सुपुत्र श्री तपसीलालजी गादिया का 2 मई 2017 को परलोकगमन हो गया। आप नित्य सामायिक में शास्त्र वाचन करते थे। चातुर्मास के दो माह में आयम्बिल व्रत की तपाराधना करते थे। आचार्य श्री हीराचन्द्रजी म.सा. के चेन्नई चातुर्मास में 129 आयम्बिल की सुदीर्घ तपस्या की। आपके नेत्र दान किए गए। *-शान्तिलाल जैन, जोधपुर*

अहमदाबाद- धर्मपरायणा सुश्राविका श्रीमती रामादेवी धर्मपत्नी श्री दौलतराजजी बाँठिया का 74 वर्ष की उम्र में 29 अप्रेल 2017 को स्वर्गगमन हो गया। आप सरलमना एवं संत-सतीवृन्द के प्रति श्रद्धा से पूरित थीं।आपके पति श्री बाँठियाजी ने बाड़मेर में आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. के मंगल प्रवास के समय समर्पित भाव से सेवा की तथा श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, अहमदाबाद के मंत्री पद पर सेवाएँ प्रदान कीं। *-ओमप्रकाश बाँठिया*

अहमदाबाद- सुश्रावक श्री कांतिलालजी कांकरिया सुपुत्र श्री हनुमानचंदजी कांकरिया का 70 वर्ष की उम्र में स्वर्गारोहण हो गया। आप आचार्य भगवन्त, उपाध्यायप्रवर सहित संघ के प्रति सदैव श्रद्धानिष्ठ रहे एवं बालोतरा तथा अहमदाबाद में आपकी सेवाएँ अनुकरणीय रहीं। *-ओमप्रकाश बाँठिया*

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जिनवाणी-परिवार तथा अ.भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उनके परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

चलो मन! एकाकी बढ़ चलो उस पथ पर

श्रीमती अभिलाषा हीरावत

चलो मन! एकाकी बढ़ चलो, उस पथ पर,
जहाँ हर पथिक अकेला है,
जहाँ आह दाह त्रास नहीं,
अनन्त सुखों का मेला है,
चलो मन! एकाकी बढ़ चलो उस पथ पर,
जहाँ न धूप छाया
और न मोह माया
न ही भूख प्यास है,
अनन्त कोटि दिवाकर का
जहाँ उजास है,
चलो मन! एकाकी बढ़ चलो उस पथ पर,
जहाँ न कोई लघु गुरु
न कोई दूर पास है
ना ही तेरे मेरे का
ना कोई द्वैतता का आभास है
अनन्त समता का जहाँ
शाश्वत निवास है
चलो मन! एकाकी बढ़ चलो उस पथ पर,
जहाँ न भेद ना ही दूरियाँ
ना भय ना ही जन्म-मरण की बेड़ियाँ
इक दूजे में विलय ही
जहाँ अपना आवास हो
चलो मन! एकाकी बढ़ चलो उस पथ पर.....।

-मुम्बई (महा.)

साभार-प्राप्ति-स्वीकार

1000/-जिनवाणी पत्रिका की आजीवन (अधिकतम 20 वर्ष) सदस्यता हेतु प्रत्येक

क्रम संख्या 15811 से 15817 तक 7 सदस्य बने।

'जिनवाणी' मासिक पत्रिका हेतु साभार प्राप्त

5100/- श्रीमती पुष्पाजी (माताजी), राकेशजी गाँधी (भाई), जोधपुर, स्व. श्री उपेन्द्रजी गाँधी की स्मृति में।

5100/- श्री सम्पतराजजी एवं बाँठिया परिवार, अहमदाबाद, सुश्राविका श्रीमती रामादेवीजी धर्मपत्नी स्व. श्री दौलतराजजी बाँठिया का 74 वर्ष की आयु में 29 अप्रेल, 2017 को स्वर्गगमन पर उनकी पुण्य स्मृति में।

4000/- डागा परिवार, जयपुर, श्री सुनीलचन्द जी सुपुत्र स्व. श्री इन्दरचन्दजी डागा के स्वास्थ्य लाभ प्राप्त करने के उपलक्ष्य में सप्रेम।

3100/- श्री महावीरराजजी, राजेन्द्रकुमारजी, हितेन्द्र जी, शैलेन्द्रजी, हेमन्तजी सिंघवी, बैंगलुरु हाल मुकाम जोधपुर, पूज्य स्व. श्री रिखबराज जी सिंघवी की पुण्य स्मृति में।

2500/- श्री रूपकुमारजी, मोहनराजजी, मदनराजजी, धर्मेशकुमारजी चौपड़ा 'कवास वाले', पाली-जोधपुर-बालोतरा, पूज्य पिताजी स्व. श्री खींमराजजी की पच्चीसवीं एवं मातुश्री स्व. श्रीमती आयचुकीदेवीजी की सतहरवीं पुण्य स्मृति में।

2100/- श्री हंसराजजी बांठिया, केकडी, सुपुत्र चि. अक्षयजी का शुभविवाह सौ.कां. मेघाजी सुपुत्री श्री गौतमजी डोसी, दूदू निवासी के संग सुसम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम।

2100/- श्री महेन्द्रजी, जितेन्द्रजी, पंकजी जैन, नंदूरबार, पूज्य पिताश्री श्री मानकलालजी एवं मातुश्री श्रीमती कलावतीजी सिसोदिया की शादी की 50वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में एवं श्री मानकलालजी आसकरणजी सिसोदिया के सुपौत्र चि. मेहल कुमारजी सुपुत्र श्री महेन्द्रजी सिसोदिया को सिविल इंजीनियर की पदवी मिलने की खुशी में सप्रेम।

2100/- श्रीमती पुखराजकंवरजी एवं स्व. श्री उत्तमचन्द जी ढढ्ढा, जयपुर, सुपौत्र चि. प्रोमितजी सुपुत्र श्रीमती सुमनजी-अभयकुमारजी ढढ्ढा का शुभविवाह सौ.कां. पूजाजी सुपुत्री श्रीमती मंजूजी-राजेशजी खिंवसरा के संग 19 मई, 2017 को अजमेर में सुसम्पन्न होने की खुशी में।

1501/- श्री प्रेमचन्दजी जैन (लहसोडा वाले), मानसरोवर-जयपुर, चि. राजकुमारजी जैन का शुभविवाह सौ.कां. प्रियंकाजी के संग सुसम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम।

1101/- श्री पुरुषोत्तम कुमारजी जैन (करेला वाले), सवाईमाधोपुर, सुपुत्र चि. दीपक कुमारजी जैन सुपौत्र स्व. श्री पूरणमलजी जैन का शुभविवाह सौ.कां. रुचिजी के संग 21 मई 2017 को सुसम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम।

1100/- श्रीमती दाखाबाईजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा, सुपौत्र श्री हिमांशुजी जैन, सोफ्टवेयर इंजीनियर ई-बे बेंगलोर, सुपुत्र श्रीमती उर्मिलाजी एवं श्री सोहनलालजी जैन, अलीगढ़-रामपुरा वाले को सेन फ्रांसिस्को (यू.एस.ए.) में Culture Luminary Award से सम्मानित होने के उपलक्ष्य में सप्रेम।

1100/- श्रीमती आयचुकी देवीजी एवं श्री माणक चन्दजी लोढ़ा, नाडसर, होली चौमासी के अवसर पर सप्रेम भेंट।

1100/- श्री भंवरसिंहजी चीपड़, दूदू, सुपुत्री सौ.कां. मीनाक्षीजी का शुभ-विवाह चि. राजदीपजी कोठारी, इडवा के संग 08 मई, 2017 को सुसम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम भेंट।

1100/- श्री सुनीलकुमारजी, अनिलकुमारजी नाहटा, बंगारपेट, श्रीमती वसन्ताबाई जी की सुपौत्री एवं श्री अनिलकुमारजी की सुपुत्री सुश्री अक्षताजी की सगाई का कार्यक्रम सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्रीमती अनिता-अमितजी भण्डारी, जोधपुर अपने सुपुत्र श्री अचित सुपौत्र श्रीमती सुशीला-विरदराजजी भण्डारी द्वारा निरमा विश्वविद्यालय, अहमदाबाद से दो स्वर्णपदक प्राप्त होने के उपलक्ष्य में।

1100/- श्री कान्तिचन्दजी जैन, जोधपुर, श्री सोहनचंद जी गादिया, चेन्नई-जोधपुर, का 2 मई, 2017 को स्वर्गगमन होने पर उनकी पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री मख्तूरमलजी, सुनीलजी, नवीनजी गांग, जोधपुर, सुश्राविका श्रीमती पूनमकंवरजी गांग की 10 जून 2017 को छठी पुण्यतिथि पर।

1100/- प्रो. चन्दनबालाजी, अधिष्ठाता, विधि संकाय, जोधपुर, पिताश्री स्व. श्री जौहरीमलजी संकलेचा की पुण्य स्मृति में।

1100/- श्री नरेन्द्रकुमारजी जैन (सेवानिवृत्त प्राचार्य), हिण्डौनसिटी, पूज्य पिताश्री स्व. श्री प्रभुदयाल जी जैन की 2 जून, 2017 को छठीं पुण्यतिथि की पावन स्मृति में।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल हेतु साभार प्राप्त

500000/- श्री निर्मल कुमारजी, अभिषेकजी, लक्ष्यजी बम्ब, जयपुर, स्व. सिरहमलजी-सम्पतदेवीजी बम्ब की पुण्य स्मृति में सप्रेम।

25000/- श्री सोहनलालजी, बुधमलजी, सम्पतराजजी, राजेन्द्रजी बाघमार, मैसूर, सुपुत्र श्री सम्पतराजजी बाघमार की 25वीं वर्षगाँठ के उपलक्ष्य में सप्रेम।

1100/- श्रीमती विमलाजी-अशोकजी मेहता (दूदू वाले), मदनगंज-किशनगढ़, सुपुत्री सौ. कां. अदितिजी का शुभविवाह चि. अभिनवजी सुपुत्र श्रीमती उषाजी-ऋषभजी चौधरी, जयपुर के संग 23 फरवरी, 2017 को सुसम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

स्वाध्याय संघ, जोधपुर को साभार प्राप्त

5000/- श्री सुमति विजयराजजी, अशोकराजजी, पदमराजजी, गौतमराजजी सिंघवी, पनरूटी (तमिलनाडु) सहयोग हेतु।

1500/- श्री चंचलमलजी गांग, जोधपुर, अपने तथा अपने सुपौत्र राहुल सुपुत्र श्रीमती योगिता-राजेशजी गांग के जन्मोत्सव एवं सुपौत्री सुश्री रूपल का शुभविवाह 24 अप्रेल 2017 को सम्पन्न होने के उपलक्ष्य में।

1176/- श्रीमती चन्द्रकलाजी धर्मपत्नी श्री इन्द्रसिंहजी जैन, जोधपुर, अपने 76 वें वर्ष में प्रवेश करने पर।

1100/- श्री प्रेमचन्दजी जैन (लहसोडा वाले), मानसरोवर-जयपुर, चि. राजकुमारजी जैन का शुभविवाह सौ.कां. प्रियंकाजी के संग सुसम्पन्न होने की खुशी में सप्रेम।

अ.भा.श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर को साभार प्राप्त

47000/- श्री विपुलजी, विमलाजी, प्रमिलाजी, पायल जी, मानजी, विनयजी एवं समस्त ढाबरिया परिवार, सूरत, जीवदया हेतु सहयोग।

7500/- श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, गोटन, संघ सहायतार्थ।

5100/- श्री दलीचन्दजी, किशनलालजी नाहटा, बैंगलुरु, अपनी दौहित्री (मालर में) के यहाँ कुलदीपिका के रूप में पुत्रीरत्ना के जन्मोपलक्ष्य में संघ सहायतार्थ।

5000/- श्री सुमति विजयराजजी, अशोकराजजी, पदमराजजी, गौतमराजजी सिंघवी, पनरूटी (तमिलनाडु), अपनी पूज्या मातुश्री श्रीमती कमलाबाईजी धर्मपत्नी स्व. श्री अजीतराजजी सिंघवी की पावन स्मृति में संघ सहायतार्थ।

2000/- श्री सुनीलकुमारजी, श्रीमती चन्द्रजी पोखरणा, अजमेर, संघ सहायतार्थ।

1155/- श्रीमती चन्द्रकलाजी जैन धर्मपत्नी स्व. श्री इन्द्रसिंहजी जैन, जोधपुर, संघ सहायतार्थ।

1101/- श्रीमती रनिताजी-रविकुमारजी जैन, जोधपुर, अपने सुपुत्र श्री कार्तिक जैन सुपौत्र श्रीमती किरणजी-स्व. श्री जुगराजजी जैन के सीनियर सैकण्डरी परीक्षा में 92 प्रतिशत अंक प्राप्त करने के उपलक्ष्य में जीवदया में सहयोगार्थ।

1100/- श्री महेन्द्रजी लोढ़ा, जयपुर, जीवदया सहयोग।

1100/- श्रीमती उमादेवीजी धर्मपत्नी स्व. डॉ. अचलमलजी सिंघवी, जोधपुर, प्रो. (डॉ.) अशोककुमारजी सिंघवी को मारवाड़ रत्न समारोह में महाराणा हनवन्तसिंह सम्मान से सम्मानित किये जाने के उपलक्ष्य में जीवदया हेतु।

1100/- श्री सुरेशजी, सुशीलाजी, सचिनजी, नमिताजी, हृदयजी खींचा, मुम्बई, स्व. श्री अभिषेकजी खींचा की पुण्य स्मृति में जीवदया हेतु।

1100/- श्री कान्तिचन्दजी जैन, जोधपुर, श्री सोहनचंद जी गादिया, चेन्नई-जोधपुर, का 2 मई, 2017 को स्वर्गगमन होने पर उनकी पुण्य स्मृति में जीवदया हेतु।

अ.भा.श्री जैन रत्न आध्यात्मिक संस्कार केन्द्र हेतु साभार प्राप्त

100000/- मैसर्स दुलीचंद बाघमार एण्ड सन्स, चेन्नई।

गजेन्द्र निधि द्वारा आचार्य हस्ती स्कॉलरशिप फण्ड

(अखिल भारतीय श्री जैन रत्न युवक परिषद् द्वारा क्रियान्वित)

दानदाता एवं दान एकत्रित करने वालों की सूची

60000/- सेठ सम्पतराम बुधमल दुगड़ चेरिटेबल ट्रस्ट, कोलकाता की ओर से भेंट।

12000/- एक सहयोगी, जयपुर।

छात्रवृत्ति-योजना में इच्छुक दानदाता एक छात्र के लिए 12000/- रु. अथवा उनके गुणक में जितनी छात्रवृत्तियाँ देना चाहें तदनुसार दानराशि 'गजेन्द्र निधि आचार्य हस्ती स्कॉलरशिप फण्ड' योजना के नाम चैक या ड्राफ्ट(Donations to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of IncomeTax Act 1961) से निम्नांकित पते पर भेजने का कष्ट करें- *Sh. M. Harish Kawad, No. 5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600056(T.N.) (Mob. 9543068382)*

आगामी पर्व तिथि

आषाढ़ कृष्णा 8, शनिवार	17.06.2017	अष्टमी
आषाढ़ कृष्णा 12, बुधवार	21.06.2017	आर्द्रा नक्षत्र प्रारम्भ
आषाढ़ कृष्णा 14, शुक्रवार	23.06.2017	चतुर्दशी, पक्खी
आषाढ़ शुक्ला 8, शनिवार	01.07.2017	अष्टमी
आषाढ़ शुक्ला 14, शुक्रवार	07.07.2017	चतुर्दशी
आषाढ़ शुक्ला 14 शनिवार	08.07.2017	चतुर्दशी, पक्खी, चातुर्मास प्रारम्भ
श्रावण कृष्णा 8, सोमवार	17.07.2017	अष्टमी
श्रावण कृष्णा 14 शनिवार	22.07.2017	चतुर्दशी
श्रावण कृष्णा 30 रविवार	23.07.2017	पक्खी, आचार्य शोभाचन्द्रजी म.सा. की 91 वीं पुण्य तिथि

स्वाध्याय संघ, जोधपुर के नये निदेशक मनोनीत

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर के निदेशक श्रीमती सुशीला जी बोहरा के अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के कार्याध्यक्ष बनने के पश्चात् रिक्त हुए इस पद पर संघाध्यक्ष श्री पी.एस. सुराणा साहब ने संघ सेवी, समाज सेवी एवं अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के पूर्व महामंत्री वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री जगदीशमल जी कुम्भट, जोधपुर को निदेशक पद पर मनोनीत किया है। -*गोपालराज अबानी, सचिव*

बाल-जिनवाणी

आदर्श श्रावक

श्री सरदारचन्द भण्डारी

(1)

'आदर्श श्रावक' भूख से कम खाता है।
'आदर्श श्रावक' बहुत कम बोलता है।
'आदर्श श्रावक' व्यर्थ में नहीं हँसता।
'आदर्श श्रावक' बड़ों की आज्ञा मानता है।
'आदर्श श्रावक' सदा उद्यमशील रहता है।

(2)

'आदर्श श्रावक' गरीबी से नहीं शर्माता।
'आदर्श श्रावक' धन पर नहीं अकड़ता।
'आदर्श श्रावक' किसी पर नहीं झुंझलाता।
'आदर्श श्रावक' किसी से छल कपट नहीं करता।
'आदर्श श्रावक' सत्य के समर्थन से नहीं डरता।

(3)

'आदर्श श्रावक' हृदय से उदार होता है।
'आदर्श श्रावक' हित-मित-मधुर बोलता है।
'आदर्श श्रावक' संकट सहता हुआ भी हँसता है।
'आदर्श श्रावक' अभ्युदय में भी नम्र रहता है।

(जिनवाणी, जनवरी-फरवरी-मार्च 1970 से गृहीत)

कुसंग का फल

श्री सुधाकर गोस्वामी

रोम का एक चित्रकार एक ऐसे आदमी का चित्र बनाना चाहता था, जिसके मुख से भोलापन, सरलता और दीनता के भाव साफ-साफ झलकते हों। वर्षों की मेहनत के बाद उसे एक ऐसा बालक मिला। चित्रकार ने बालक को बैठाकर उसका चित्र बनाया। उस चित्र की इतनी प्रतियाँ बिकी कि चित्रकार मालामाल हो गया।

दस-पंद्रह साल बीत गये। चित्रकार के मन में एक ऐसा चित्र बनाने की इच्छा हुई, जिससे बदमाशी झलकती हो। वह एक ऐसे व्यक्ति का चित्र बनाना चाहता था, जिसके मुख से धूर्तता, क्रूरता और स्वार्थीपन फूट पड़ता हो। साफ था कि ऐसा व्यक्ति उसे जेल में ही मिल सकता था। वह जेल जा पहुँचा और उसे एक कैदी मिल भी गया।

"मैं तुम्हारा चित्र बनाना चाहता हूँ"- चित्रकार ने कहा।

"मेरा चित्र? क्यों!" कैदी कुछ डर गया।

चित्रकार ने अपना पहला चित्र उसे दिखाया और अपनी बात कही। पहले चित्र को देखकर कैदी फूट-फूट कर रोने लगा, उसने बताया- "अरे यह तो मेरा ही चित्र है।"

"तुम इस दशा में कैसे पहुँच गये?"- चित्रकार ने ताज्जुब से पूछा।

"कुसंग में पड़कर" कैदी ने कहा और वह रोये ही जा रहा था।

(जिनवाणी, जनवरी-फरवरी-मार्च 1970 से गृहीत)

क्रोध चाण्डाल होता है

श्री यशपाल जैन

एक पंडितजी क्रोध न करने पर उपदेश दे रहे थे, कह रहे थे- 'क्रोध चाण्डाल होता है। उससे हमेशा बच कर रहो।'

भीड़ में एक ओर एक जमादार बैठा था, जिसे पंडितजी सड़क पर झाड़ू लगाते हुए देखा करते थे। अपना उपदेश समाप्त करके जब पंडितजी जाने लगे तो वह जमादार भी हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

लोगों की भक्ति-भावना से फूले हुए पंडितजी

भीड़ के बीच में से आगे आ रहे थे। इतने में पीछे से भीड़ का रेला आया और पंडितजी गिरते-गिरते बचे। धक्के में वे जमादार से छू गये। फिर क्या था? उनका पारा चढ़ गया। उन्होंने जमादार को जी भर कर गालियाँ दी। असल में उनको बड़े जोर से भूख लगी थी और वे जल्दी-से-जल्दी यजमान के घर पहुँच जाना चाहते थे।

पास में ही गंगा नदी थी, पंडितजी लाचार होकर उस ओर तेजी से लपके। तभी देखते क्या हैं कि वह जमादार उनसे आगे-आगे चला जा रहा है। पंडितजी ने पूछा- कहाँ जा रहे हो? जमादार ने कहा- ''नदी में नहाने। अभी आपने कहा था न कि क्रोध चाण्डाल होता है। मैं उस चाण्डाल से छू गया हूँ।''

पंडितजी को जैसे काठ मार गया। वे आगे एक शब्द भी न कह सके और जमादार का मुँह ताकते रह गये।

सीखों आध्यात्मिक गिनती

श्री रामनारायण माथुर

सबसे पहले बोलो 'एक'।
तजो बुराई, बन लो नेक।।
दूजे क्रम पर कहना 'दो'।
सोचो, तुम सचमुच क्या हो?
तब संख्या उच्चारो 'तीन'।
मधुर बोल बोलो, ज्यों बीन।।
इसके आगे, कह दो 'चार'।
उत्तम ही रख लो व्यवहार।।
अब कहना है तुमको 'पाँच'।
झूठ छोड़कर धारो साँच।।
फिर उच्चारण करलो 'छः'।
निज को निरखो पुनः पुनः।।
अगला अंक बोलदो 'सात'।
क्यों सोकर खो रहे प्रभात।।
है अब तुम्हें बोलना 'आठ'।
प्रतिपल पढ़ो, पुण्य का पाठ।।
क्यों न बोलते नमकर 'नौ'।
प्रभु से लगी रहे नित लौ।।
अहो, कहो तुम हँसकर 'दस'।
भरो प्रेम का उर में रस।।
गिनो एक से दस तक यों।
तो संकट या क्लेश न हों।।
वाचिक जब हो कर्म इधर।
जानो जीवन-मर्म उधर।।
करे 'ओऽम्-प्रेमी' विनती।
सीखो आध्यात्मिक गिनती।।

(जिनवाणी, अगस्त 1980 से गृहीत)

-चौधरी भवन, लालपुरा, शाजापुर (मध्यप्रदेश)

अच्छी निद्रा के लिए कीजिए 'एक-दो-तीन-चार-पाँच'

डॉ. दिलीप धींग

बच्चों की प्रायः यह शिकायत रहती है कि कभी-कभी उन्हें बुरे सपने आते हैं। निद्रा के दौरान वे अचानक डर जाते हैं, उचटकर बैठ जाते हैं और रोने भी लग जाते हैं।

इसका एक समाधान है कि अच्छी और निर्विघ्न नींद के लिए 'एक-दो-तीन-चार-पाँच' (1-2-3-4-5) की साधना करके शयन करना चाहिए।''

सोने से पहले 'एक-दो-तीन-चार-पाँच की साधना' से अभिप्राय है -

एक : सबसे पहले एक लोगस्स का पाठ कीजिए।

दो : उसके बाद दो नमोत्थुणं दीजिए।

तीन : उसके बाद तिक्खुत्तो के पाठ से तीन बार वन्दना कीजिए। यदि संभव हो तो पूर्व या उत्तर दिशा में वन्दना करें।

चार : चार शरण ग्रहण कीजिए। ये चार शरण हैं-

अरिहन्त, सिद्ध, साधु और केवली भगवान का बताया धर्म। चार शरण ग्रहण करने के लिए मन ही मन गुरु की आज्ञा लेकर श्रद्धा के साथ मंगलपाठ बोलना चाहिए। मंगलपाठ में चार शरण का ग्रहण हो जाता है। चार शरण-सूत्र का मूल पाठ इस प्रकार है - "चत्तारि सरणं पवज्जामि - (1) अरिहंते सरणं पवज्जामि, (2) सिद्धे सरणं पवज्जामि, (3) साहू सरणं पवज्जामि, (4) केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पवज्जामि।" ये चार शरण मंगल और उत्तम हैं यानी शुभ और श्रेष्ठ हैं।

पाँच : पंच परमेष्ठी का पाँच बार सुमिरन करके सो जाना चाहिए। ये पाँच नमस्कार ही जैन धर्म में महामंत्र नवकार के रूप में प्रसिद्ध है।

श्रद्धा के साथ ऊपर बताई विधि से 'एक-दो-तीन-चार-पाँच' की साधना करके सोने पर नींद अच्छी आती है, बुरे सपने नहीं आते हैं। अगली सुबह अधिक तरोताजा हो जाती है। यह साधना आप अपने परिवार के साथ भी कर सकते हैं।

-निदेशक : अंतरराष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन व शोध केन्द्र, सुगन हाउस, 18, रामानुजा अय्यर स्ट्रीट, साहुकारपेट, चेन्नई-600001 (तमिलनाडु)

वीर प्रभु से करें प्रार्थना, जीवन का उत्थान हो

श्री मोहन कोठारी 'विनर'

वीर प्रभु से करें प्रार्थना, जीवन का उत्थान हो,
दूर करो अज्ञान अंधेरा, जन-जन में सद्ज्ञान हो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना.....।।टेर।।
कभी न भटकें हम राहों से, सद्बुद्धि, सद्ध्यान दो,
मात-पिता का नाम करें हम, ऐसी नव पहचान दो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना.....।।1।।
नव शक्ति दो, नई दिशा दो, मन में दृढ़ विश्वास दो,
सत्कृतियों से भरो ज़िंदगी, शांति का पैगाम दो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना.....।।2।।
मर्यादामय रहे आचरण और विनय हो जीवन में,
जैनी बन कर जीएं ज़िंदगी, ऐसा बस वरदान दो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना.....।।3।।
प्रेम अहिंसामय हो जीवन, नहीं किसी से वैर हो,
मानव जीवन बने सार्थक, सत्य का सम्मान हो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना.....।।4।।
भाईचारा हो दुनिया में, हर हृदय में प्यार हो।
वीर संदेशा गूंजे घर-घर, जन-जन का कल्याण हो।
वीर प्रभु से करें प्रार्थना.....।।5।।

-जनता साड़ी सेण्टर, स्टेशन रोड़, दुर्ग-491001 (छत्तीसगढ़)

The Seven Wonders

Anna was a 9 year old girl from the small village. She finished attending elementary school till 4th grade at her village. For the 5th grade onwards she will have to get on admission in a school at a city nearby. She got very happy knowing that she was accepted in a very reputed school in a city. Tody was the first day of her school and she was waiting for her school bus. Once the bus came and she got in it quickly. She was very excited.

As soon as The bus reached to her school, all students started going to their classes. Anna also entered into her classroom after asking fellow students for direction. Upon seeing her simple clothing and knowing she is from a small village, other students started making far of her. The teacher soon arrived and she asked everyone to keep quiet. She introduced Anna to the class and told that she will be studying with them only from today.

Then the teacher told the students to be ready for the surprise test now! She told everyone to write down the seven wonders of the world. Everyone started

writing the answer quickly. Anna started to write the answer slowly.

When everyone except Anna had submitted their answer paper, the teacher came and asked Anna. What happened dear? Don't worry. Just write what you know as other students have learned about it just a couple of days back.

Anna replied-"I was thinking that there are so many things, which seven I can pick to write." And then she handed her answer paper to the teacher. The teacher started reading everyone answer and the majority had answered them correctly such as the Great wall of China. Colosseum, Stone hedges, Great Pyramid of Gizo, Leaning tower of Pisa, Tajmahal, Hanging Gardens of Babylon etc.

The teacher was happy as students had remembered what she had taught them. At last the teacher piked up Anna's answer paper and started reading.

The seven wonders are- To be able to see, to be able to hear, to be able to feel, to laugh, to think, to be kind, to love.

The teacher stood stunned and the whole class was speechless. Today a girl from the small village reminded them about the precious gifts of nature, which are truly a wonder.

Moral-Value what you have, use properly what you have and trust on what you have.

मम्मी-पापा के साथ कैसे रहना?

माता-पिता को प्रणाम करना।

उनकी बात मानना।

उनके सामने नहीं बोलना।

उनको दुःख नहीं देना।

उनकी सेवा-भक्ति करना।

Alphabet से सीखें

संकलन :श्री हितांश मेहता

A B C D E F G, अरिहन्त मेरे Jinvar Ji.

H I J K L M N, हम बनेंगे Gentleman.

O P Q R S T, हम रखेंगे Honesty.

U V W X Y Z, महावीर स्वामी सबके Head.

-सुपुत्र श्री कमलेश मेहता, जोधपुर-342001 (राज.)

The Pressure of Anxiety, Jealousy, Competition on Children

Miss Anjita Bhandari

In this competitive world, where competition is never stable, children become prey to anxiety and jealousy.

In this increasing competitive era, children are jealous of their own brothers and sisters, they want to beat every competitor and become successful.

Here, competition is playing a negative role in the children's life. Competition has become a part of people's life, whether it be in the field of fashion or in the field of education. Everyone every where faces competition which results in jealousy and anxiety.

Competition plays a positive role too in a child's life. By seeing his competitor studying hard, he focuses on studies (which is a positive impact) and works hard to get good marks. Competition brings motivation among children and provides them a mindset to succeed by working hard and not by defeating his fellow person.

Because of jealousy, children become impatient, rude and behave in a very impolite way. Depression takes over his mind and makes him react in a very unpleasant way.

Therefore, children should be taught to handle competition in a positive way and walk towards success.

-17 E 24, C.H.B. Jodhpur-342008 (Raj.)

वर्ग-पहेली

संकलित

1. पाप कार्य करने को ना कहते हैं, कौन?
   पोते, बेटे, नाती, धन क्या है?
2. दूध फटने से बना क्या?
   खुले आम चोरी करने वाले कहलाते हैं।
3. वीतराग भगवान का फरमाया धर्म
   धर्म का मूल क्या?
4. 'सफेद हंस' कथा का प्रतिपाद्य
   श्रेष्ठ गति
5. स्थानक में पालने योग्य नियम
   सामायिक से प्राप्त होने वाला एक लाभ
6. आजाद बनो पर क्या नहीं बनो?
   विविध रोगों और पापों की जड़
7. महापरिग्रही के जाने का स्थान
   किसान सफेद हंस खोजने सबसे पहले कहाँ गया?
8. आसक्ति का एक अर्थ
   किसके सुरक्षित होने पर खुशहाली मिलती है?
9. अजितनाथजी के पिता
   दाह ज्वर की पीड़ा शान्त होने से इनका नाम रखा गया।
10. जीवन का श्रेष्ठ दिन
   एक अभिगम

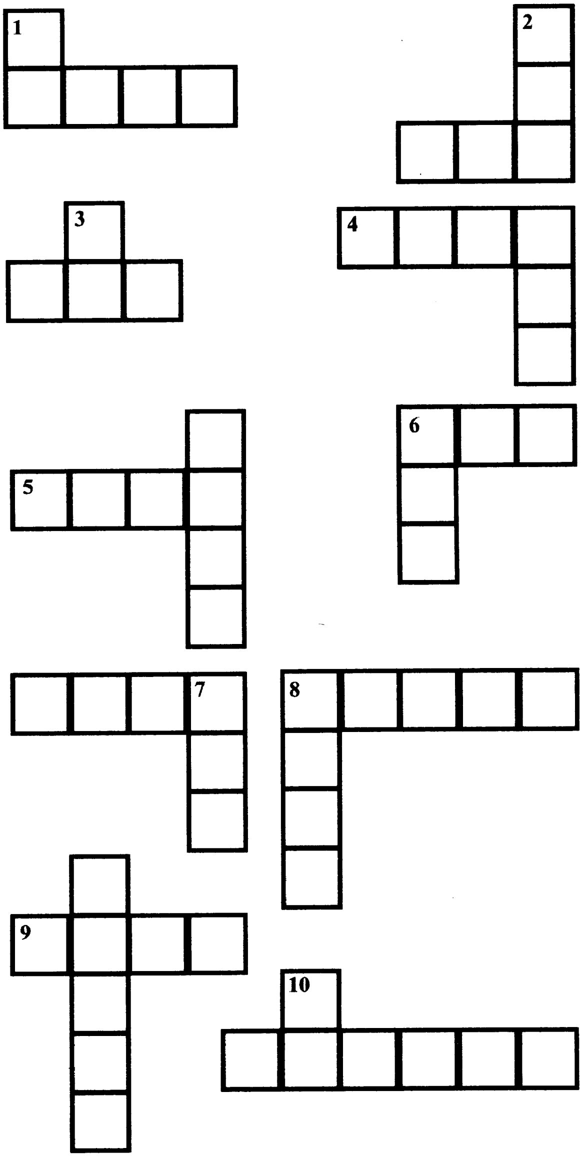

बाल-स्तम्भ

बाल्यकाल : एक स्वर्णिम अवसर

श्रीमती कमला हणवन्तमल सुराणा

बाल-स्तम्भ के अन्तर्गत प्रकाशित इस रचना को पढ़कर अन्त में दिए गए प्रश्नों के उत्तर 20 वर्ष की आयु तक के पाठक 15 जुलाई 2017 तक **जिनवाणी संपादकीय कार्यालय, सामायिक-स्वाध्याय भवन, कुम्हार छात्रावास के सामने, प्लॉट नं. 2, नेहरू पार्क, जोधपुर-342003 (राज.)** के पते पर प्रेषित करें। **उत्तर के साथ अपनी आयु तथा पूर्ण पते का भी उल्लेख करें।** श्रेष्ठ उत्तरदाताओं को श्री महावीरचन्द जी बाफना, जोधपुर द्वारा अपनी धर्मपत्नी एवं श्रीमती अरुणा जी, श्री मनोजकुमार जी, श्री कमलेश कुमार जी बाफना की माताश्री स्व. श्रीमती मोहिनीदेवी जी बाफना की पुण्य-स्मृति में पुरस्कृत किया जा रहा है। पुरस्कारों की राशि इस प्रकार है- प्रथम पुरस्कार-500 रुपये, द्वितीय पुरस्कार-300 रुपये, तृतीय पुरस्कार- 200 रुपये तथा 150 रुपये के पाँच सान्त्वना पुरस्कार। पुरस्कार राशि सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल,जयपुर द्वारा भिजवाई जाती है।

मनुष्य जीवन बड़ा अमूल्य है। यह तो पुनीत कर्मों का उपहार है। बचपन उसका स्वर्णिम काल है। सोने से भिन्न-भिन्न प्रकार के आभूषण बनवाकर मनुष्य अपनी देह को सजाता है। ठीक उसी प्रकार सोने की तरह बचपन को अनेक प्रकार से संवारना, प्रबुद्ध और सुन्दर बनाना चाहिए। सोना तो खोने पर पुनः खरीदा जा सकता है। बचपन तो 'गया तो गया'। समय की गति तीव्र है। उसके हर क्षण का स्वागत कर स्वयं को उसमें ढालना है। आगे बढ़ने के लिए लक्ष्य निर्धारित कर समय का पूर्ण सदुपयोग कर सफलता प्राप्त की जा सकती है। यदि बचपन में संस्कारों के बीज नहीं डाले जाते हैं तो जीवन सूखा, बंजर बनकर रह जाता है। जैसे- मौसम के अनुसार खेत में बीज बो दिए, पर समय पर खाद और पानी नहीं दिया तो भूखा रह कर सूख जाएगा। उसी प्रकार बचपन को संस्कार, सद्गुण रूपी भोजन देकर तृप्त नहीं किया तो वह सूख जाएगा। पूरा जीवन झंझावातों का झमेला बनकर रह जाएगा। बाल्य-काल ही तो ज्ञान प्राप्त करने का, नया कुछ सीखने का स्वर्णिम काल है, उसको तरह-तरह की क्रिया-कलापों से भरना है।

बच्चे को परिश्रमी बना दिया तो उसका भविष्य निश्चित रूप से उज्ज्वल होगा, फिर तो सफलताएँ उसके कदम चूमेंगी। कुछ ऐसे ही आदर्श पुरुषों के उदाहरण प्रस्तुत कर रही हूँ जो साधारण से परिवार में जन्मे और असाधारण बन गए।

श्री लालबहादुर शास्त्री आदर्श व्यक्तित्व के धनी थे। निर्धन परिवार में जन्मे भारत के प्रधानमंत्री बन गए और 'भारत रत्न' की उपाधि से विभूषित हुए।

उनका बाल्य-काल बड़ी कठिन परिस्थितियों में गुजरा। गाँव से स्कूल पहुँचने के बीच में नदी पड़ती थी उसे पार करना पड़ता था। नदी पार करने के लिए नाव चलती थी। लेकिन शास्त्रीजी के पास नाव से नदी पार करने के पैसे नहीं होते थे, वे तैर कर उसे पार कर समय पर स्कूल पहुँच जाते थे। परिश्रम और पढ़ने की ललक ने उन्हें महान् व्यक्ति बना दिया। प्रधानमंत्री बनने के पश्चात् भी वे सादा और मितव्ययी जीवन ही बिताते थे। उन्होंने हमें अमूल्य नारा भी दिया- 'जय जवान जय किसान'। यह नारा हमेशा जीवित और सार्थक रहेगा।

ए.पी.जे. अब्दुल कलाम मुस्लिम मध्यम परिवार में जन्मे थे। ये नौ भाई-बहिन थे। कमाने वाले केवल पिता ही थे। घर का खर्च मुश्किल से

चलता था। कलाम साहब समाचार पत्र बेचते थे और जितना भी कमाते वह राशि अपने पिताजी को देते थे। पढ़ने में साधारण थे, लेकिन लगन और पुरुषार्थ ऐसा रंग लाए कि वे बहुत बड़े वैज्ञानिक बन गए। पहला परमाणु विस्फोट 'पोकरण' राजस्थान में हुआ। वह उनके सतत प्रयत्नों से हुआ, पूरे विश्व को विस्मित कर दिया। आपको 'मिसाइल मैन' के नाम से भी जाना जाता था। आपश्री अनेक उपलब्धियों से अलंकृत थे और 'भारत-रत्न' के विरुद से विभूषित हुए। आपने भारत के राष्ट्रपति के पद को भी गौरवान्वित किया।

वर्तमान में भारत के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्रजी मोदी ने निर्धन परिवार में जन्म लिया। वे चाय की थड़ी पर चाय बेचने का कार्य करते थे। दिन में कमाने का काम करना और रात को पढ़ाई करना। पढ़ाई के लिए किसी प्रकार के संसाधन नहीं थे, लेकिन लगन, उमंग और श्रम ने ऐसा आगे बढ़ाया जिसकी कल्पना करना भी अशक्य है। पन्द्रह वर्ष तक आप गुजरात के मुख्यमंत्री के पद पर रहे और गुजरात को चमन कर दिया। इस समय तो वे बहुत चर्चा में हैं, निडर होकर देश को आगे बढ़ाने में निःसंकोच कार्य कर रहे हैं।

बाल्यकाल के सुअवसर को स्वर्णिम बनाने हेतु कुछ बातेंः-

1. बच्चों में जिज्ञासा प्रवृत्ति अधिक होती है। अतः कभी सन्तोषजनक उत्तर न मिलने पर खिन्न न होकर उत्तर ढूँढने का प्रयास करना चाहिए। निराश नहीं होना चाहिए।
2. कर्म-निष्ठ बनना चाहिए। काम को देखकर डरना एवं घबराना नहीं चाहिए। पीछे नहीं हटना चाहिए, यह निश्चय कर आगे बढ़ना चाहिए।
3. अपने कार्यों में रुचि लेकर अपनी क्षमता के अनुरूप श्रेष्ठतम तरीके से कार्य करना चाहिए।
4. कभी-कभी अनिच्छित कार्य मिल जाता है फिर भी कर्त्तव्य समझकर उसे पूरा कर लेना चाहिए और सोचना चाहिए कि यह मेरे लिए हितकर है।
5. नया काम अपनी सामर्थ्य के अनुसार चुनना चाहिए उसमें सफलता की सम्भावना अधिक रहती है।
6. हार जीत की परवाह न करके गतिशील बने रहना चाहिए।
7. रचनात्मक कार्य करने से आगे बढ़ने के लिए कई नए रास्ते खुल जाते हैं।
8. जीवन में निराशा को स्थान नहीं देना चाहिए। निराशा जीवन को पीछे धकेलती है। लगन से कार्य करते रहना चाहिए। लगन ऐसा गुण है जो व्यक्ति को उच्च श्रेणी तक पहुँचा देता है।
9. दब्बू नहीं रहना चाहिए। दब्बू काम करने में हिचकिचाते हैं और उनका विकास रुक जाता है।
10. निर्णय शक्ति प्रबल रखनी चाहिए। छोटी-मोटी समस्याएँ स्वयं सुलझा सकें तो आत्मविश्वास बढ़ जाता है, स्वावलम्बी बन जाते हैं।
11. सदा सकारात्मक सोच रखनी चाहिए, जिससे खुशी और शक्ति प्राप्त होती है। झुँझलाहटे कोसों दूर रहती है।
12. अहिंसावादी बनें। गाली-गलोच-झगड़ों को जीवन में नहीं आने देना चाहिए, ये प्रगति के शत्रु हैं। किसी को भी अंडबंड जबाब न देकर, आपको विनम्र बनना चाहिए। भगवान महावीर ने 'जीओ और जीने दो' का मार्ग बताया। उसे आचरण में लाना चाहिए।
13. झूठ बोलना चोरी करना मानव जीवन के विरुद्ध है। भूले-भटके भी ऐसी बातों को जीवन में नहीं आने देना चाहिए।
14. अल्पभाषी, मृदुभाषी बनना चाहिए। अनुशासन तो मानव जीवन की प्रथम सीढ़ी है। घर में बड़ों

का आदर करना चाहिए और स्कूल में अध्यापकों को सम्मान की दृष्टि से देखना चाहिए।

15. क्षमा करना और क्षमा मांगना दोनों बड़प्पन के गुण हैं इन्हें अपनाना चाहिए। क्षमा मांगने से अहं भाव छूट जाता है, सरल भावों की उत्पत्ति होती है।
16. हाथ-खर्ची मिलती है तो उन पैसों का सदुपयोग करना चाहिए। उन पैसों से अच्छी शिक्षाप्रद पुस्तकें खरीदनी चाहिए, जिसमें महापुरुषों की जीवनियाँ हों, उपयोगी किस्से आदि हों। प्रतिदिन समाचार-पत्र-पत्रिकाएँ पढ़ने की आदत डालनी चाहिए, जिससे पढ़ने-लिखने की अभिव्यक्ति में निखार आएगा। आपको पैसों का महत्त्व समझना चाहिए, पैसों का अपव्यय नहीं होना चाहिए। पैसा बचाकर दान में दे सकते हैं, जिससे दूसरों का उपकार होगा।
17. प्रायः बच्चे देर से सोते हैं और देर से उठते हैं इस आदत को बदलना चाहिए। यह आदत स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है, क्योंकि शरीर में 'मेलाटोनिन रसायन' बनता है वह सूर्योदय तक ही रहता है। इस रसायन से मस्ती और प्रसन्नता मिलती है।
18. कुव्यसनों से दूर रहना चाहिए। कुव्यसनों से घर, समाज और देश सबको हानि है। श्रद्धेय आचार्यप्रवर श्री हीराचन्द्रजी म.सा. की प्रेरणा से एक संदेश सर्वत्र गूँजता-'गुरु हीरा का यह संदेश, व्यसन मुक्त हो सारा देश'।
20. दीन-दुःखियों पर दया रखना। उनकी तन-मन-धन से सेवा करने की भावना रखना। प्रेम की भाषा का प्रयोग करना और सभी के साथ मधुर व्यवहार करके पूजनीय, वन्दनीय बनना।

उपर्युक्त बातें जीवन में उतार कर जीवन को हरा-भरा लहलहाना है।

प्रश्नः-

1. सोने जैसा क्या है?
2. बच्चे कैसे सफल होते हैं?
3. ए.पी.जे.अब्दुल कलाम का पूरा नाम लिखिए?
4. बाल्यकाल को संवारने के लिए क्या करना चाहिए?
5. इस लेख की पाँच प्रेरक सूक्तियाँ बताइये।
6. आप अपने किसी आदर्श व्यक्तित्व के बारे में संक्षिप्त में लिखिए।

-ई-123, नेहरुपार्क, जोधपुर-342003 (राज.)

बाल-स्तम्भ [अप्रेल-2017] का परिणाम

जिनवाणी के अप्रेल-2017 के अंक में बाल-स्तम्भ के अंतर्गत 'सफेद हंस' के प्रश्नों के उत्तर 37 बालक-बालिकाओं से प्राप्त हुए। पूर्णांक 30 हैं।

पुरस्कार एवं राशि	नाम	अंक
प्रथम पुरस्कार-500/-	अभिषेक पालरेचा-जोधपुर (राज.)	28
द्वितीय पुरस्कार-300/-	ऋषभ चौपड़ा-जोधपुर (राज.)	27.5
तृतीय पुरस्कार- 200/-	अनिकेत जैन-सवाईमाधोपुर(राज.)	27
सान्त्वना पुरस्कार- 150/-	निकिता जैन-मसूदा, जिला-अजमेर (राज.)	26.5
	प्रतीक जैन-महवा, जिला-दौसा (राज.)	26
	नमिता जैन-मसूदा, जिला-अजमेर (राज.)	26
	लक्की कांकरिया-दौड़बालापुर (कर्नाटक)	25
	श्रेणिक राजेन्द्र जैन-भुसावल (महा.)	25

पर्युषण पर्वाराधना हेतु स्वाध्यायी आमन्त्रित कीजिए

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर विगत 71 से भी अधिक वर्षों से सन्त-सतियों के चातुर्मासों से वंचित गाँव/शहरों में 'पर्वाधिराज पर्युषण पर्व' के पावन अवसर पर धर्माराधन हेतु योग्य, अनुभवी एवं विद्वान् स्वाध्यायियों को बाहर क्षेत्र में भेजकर जिनशासन एवं समाज की महती सेवा करता आ रहा है। इस वर्ष भी उन क्षेत्रों में जहाँ जैन सन्त-सतियों के चातुर्मास नहीं हैं, स्वाध्यायी बन्धुओं को भेजने की व्यवस्था है। इस वर्ष **पर्युषण पर्व 19 अगस्त से 26 अगस्त 2017** तक रहेंगे। अत: देश-विदेश के इच्छुक संघ के अध्यक्ष/मंत्री निम्नांकित बिन्दुओं की जानकारी के साथ अपना आवेदन पत्र दिनांक **15 जुलाई 2017** तक इस कार्यालय को अवश्य प्रेषित करने का श्रम करावें। पहले प्राप्त आवेदन पत्रों को प्राथमिकता दी जायेगी।

1. गांव/शहर का नाम...............................जिला.........................प्रान्त.................
2. श्री संघ का नाम व पूरा पता...
3. संघाध्यक्ष का नाम, पता मय फोन नं...
   ....
4. संघ मंत्री का नाम, पता मय फोन नं...
   ....
5. संबंधित जगह पहुंचने के विभिन्न साधन...
   ....
6. समस्त जैन घरों की संख्या..
7. क्या आपके यहाँ धार्मिक पाठशाला चलती है?..
8. क्या आपके यहाँ स्वाध्याय का कार्यक्रम नियमित चलता है?.......................................
9. पर्युषण सेवा संबंधी आवश्यक सुझाव...
10. अन्य विशेष विवरण...

आवेदन करने का पता–संयोजक/सचिव, श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, प्रधान कार्यालय-घोड़ों का चौक, जोधपुर- 342001 (राज.) फोन नं. 0291-2624891, 94141-26279(कार्यालय), फैक्स-2636763, मो.-9461522309 (संयोजक), 09422775692 (सह-संयोजक), 8003615215(सचिव), 9462543360 (का. प्रभारी), ईमेल-**swadhyaysanghjodhpur@gmail. com**

विशेष– दक्षिण भारत के संघ अपनी मांग श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ शाखा चेन्नई 24/25, **Basin Water Works Street,Sowcarpet, Chennai-600079** के पते पर भी भेज सकते हैं। सम्पर्क सूत्र- श्री प्रकाशचन्द मुथा (संयोजक)-09884554801, श्री सुधीर सुराणा (पूर्व संयोजक)-09381540004

जय गुरु हस्ती ||GURUDEV|| जय गुरु हीरा-मान

गुरु हस्ती के दो फरमान
सामायिक स्वाध्याय महान

गुरु हीरा का यह सन्देश
व्यसन मुक्त हो देश विदेश

UDAY GROUP

UDAY INDUSTRIES CHENNAI PVT. LTD.
IMPORT & EXPORT AND DEALERS OF IRON & STEEL
LONG & FLAT PRODUCTS

UDAY CONSULTS LLP
OVERSEAS AND DOMESTIC MANPOWER RECRUITMENT
AND
FACILITY MANAGEMENT
CONNECTING BRIGHT TALENT WITH THE RIGHT COMPANY

STEEL | LOGISTICS | MANPOWER

WITH BEST COMPLIMENTS from:
G R SURANA & RAJESH SURANA
No.10&11, Jawaharlal Nehru Road,
Koyambedu, Chennai - 600 107.
Mobile No: 9940566666, Contact No: 044-24797675
Website: www.udaygroup.net
Mail Id: industries@udaygroup.net

भण्डारी हॉस्पिटल एण्ड रिसर्च सेन्टर

Since 1986

(आपके स्वास्थ्य के साथ हमेशा)

Certificate No. H-2012-0136

राजस्थान व पड़ौसी राज्यों में लेजर, लैप्रोस्कोपी एवं लिथोट्रिप्सी का सर्वश्रेष्ठ एवं विश्वसनीय सेन्टर

~ अस्पताल की विशेषताएं ~

दूरबीन पद्धति से पेट, अपेन्डिक्स, हर्निया, प्रोस्टेट, पाइल्स आदि की शल्य चिकित्सा की सुविधा।

शरीर में किसी भी स्थान पर होने वाली पथरी के ईलाज का सर्वश्रेष्ठ संस्थान।

स्त्री रोग, नॉर्मल, सिजेरियन व हाई रिस्क डिलेवरी का अग्रणीय संस्थान।

विशेषज्ञों की सेवायें

- मूत्र व पथरी रोग
- पेट, लीवर व आंत रोग
- जनरल व मोटापा निवारण सर्जरी
- स्त्री रोग
- जनरल फिजिशियन
- प्लास्टिक व कॉस्मेटिक सर्जरी
- बाल रोग एवं बाल शल्य चिकित्सा
- न्यूरो सर्जरी
- दन्त रोग
- नाक, कान व गला रोग
- चर्म रोग

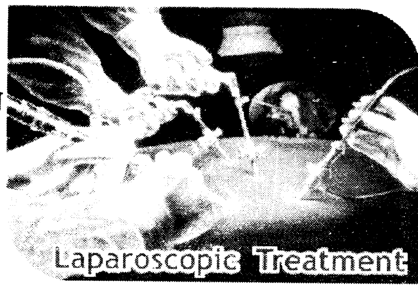

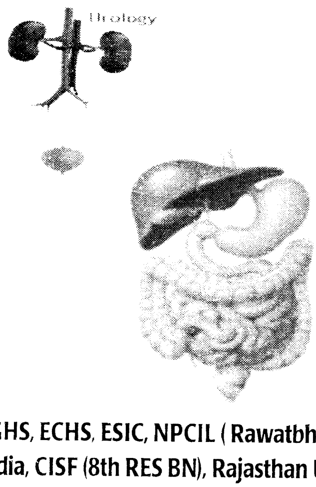

सुविधायें

- 30 वर्ष का अनुभव
- 4 लाख से अधिक रोगियों का सफल ईलाज
- 2 लाख से अधिक रोगियों का शल्य क्रिया द्वारा उपचार।
- 50,000 से अधिक पथरी रोगियों का उपचार।
- NABH & NABL से मान्यता प्राप्त।
- MLC (Medico Legal Case) की सुविधा
- 24x7 ICU, Emergency Facilty

CGHS, ECHS, ESIC, NPCIL (Rawatbhata), BSNL, BHEL, GAIL, IOCL, CWC, FCI, NFL, MNIT, CIPET, CSWRI, HCL, AAI, Coal India, CISF (8th RES BN), Rajasthan University, केन्द्र व राजस्थान सरकार के सभी कर्मचारी व पेंशनर्स एवं सभी प्रमुख TPA व इंश्योरेंस कंपनीयों से ईलाज हेतु अधिकृत

138-ए, वसुन्धरा कॉलोनी, गोपालपुरा बाईपास, टोंक रोड़, जयपुर - 302018
फोन: 0141-2703851-52 (मो.) 9660006228, 9829770055

जयगुरु हस्ती जयगुरु हीरा जयगुरु मान

साधना के मार्ग में प्रगतिशील वही बन सकता है,
जिसमें संकल्प की दृढ़ता हो।

– आचार्य श्री हस्ती

C/o CHANANMUL UMEDRAJ
BAGHMAR MOTOR FINANCE
S. SAMPATRAJ FINANCIERS
S. RAJAN FINANCIERS

 # 218, Ashoka Road, Lashkar Mohalla,
Mysore-570001 (Karanataka)

With Best Compliments from :

C. Sohanlal Budhmal Sampathraj Rajan
Abhishek, Rohith, Saurabh, Akhilesh Baghmar

Tel. : 821-4265431, 2446407 (O)
Mo. : 9845126407 (B), 9845580407 (S), 9845113334 (R)

Gurudev

SURANA™

yes, the best TMT RE-BARS

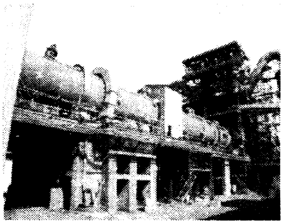

DRI Plant

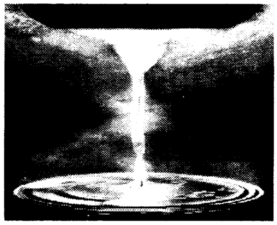

Electric Arc Furnace

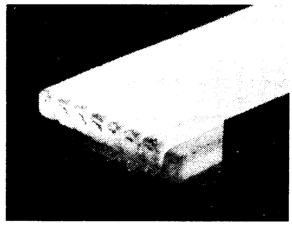

Billets

Rolling Mill

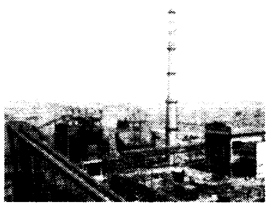

Captive Power Plant

Windmill

With best wishes from

ISO 9001-2008

SURANA INDUSTRIES LIMITED

INTEGRATED STEEL PLANT

MANUFACTURE OF TMT BARS AND ALL KIND OF ALLOY STEEL

 # 29, Whites Road, II Floor, Royapettah, Chennai 600 014/ Ph : 044-28525127 (3 lines) 28525596. Fax: 044-28521143

Email: steelmktg@suranaind.com / www.surana.org.in

STEEL I POWER I MINING

।। श्री महावीराय नमः ।।

हस्ती-हीरा जय जय ! हीरा-मान जय जय !

छोटा सा नियम धोवन का ।
लाभ बड़ा इसके पालन का ।।

अखण्ड बाल ब्रह्मचारी चारित्र चूड़ामणि, भक्तों के भगवान् 1008
श्री हस्तीमल जी म.सा. के चरणों में हृदय की असीम आस्था से समर्पण
उनके अनमोल खजाने के हीरे-मोती जन-जन के तारणहार
पूज्य आचार्य प्रवर 1008 श्री हीराचन्द्र जी म.सा.,
पण्डित रत्न उपाध्याय प्रवर श्री मानचन्द्रजी म.सा.
एवं समस्त

रत्नाधिक साधु साध्वी मण्डल

के चरण कमलों में भावभरा कोटिशः वन्दन एवं समर्पण...

OUR HUMBLE SALUTATIONS TO THE MOST NOBLE SOULS

PRITHVIRAJ PREM KUMAR KAVAD
690, Trunk Road, Poonamallee, Chennai - 600 056
Ph. 044-26272196 Mob. : 93810-07273

MANGILAL HARISH KUMAR KAVAD
GURU HASTI THANGA MAALIGAI
(JEWELLERS & BANKERS)
5, Car Street, Poonamallee, Chennai-600 056
Ph. : 044-26272609 Mob. : 95-00-11-44-55

गजेन्द्र निधि द्वारा संचालित

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम.......

अखिल भारतीय श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ

आदरणीय रत्नबंधुवर,

छात्रवृत्ति योजना की निरन्तर गतिशीलता के लिए सदस्यता अभियान से जुड़िये। सदस्यता अभियान का प्रारूप इस प्रकार है –

आचार्य हस्ती मेधावी छात्रवृत्ति योजना

उज्ज्वल भविष्य की ओर एक कदम.......

सदस्यता अभियान

हीरक स्तम्भ सदस्य (5 लाख रुपये प्रति वर्ष)	स्वर्ण स्तम्भ सदस्य (1 लाख रुपये प्रति वर्ष)

नोट-सदस्यता को ग्रहण करने वाले सभी सदस्यों का नाम जिनवाणी पत्रिका में प्रति माह प्रकाशित किया जायेगा।

Acharya Hasti Scholarship Fund

Ujjawal Bhavishya Ki Aur Ek Kadam...........

Your Contribution Towards This Noble Cause Will Go A Long Way In Lighting The Lamp Of Knowledge To Deserving and Intelligent Students, Hence We Kindly Request You To Contribute For This Noble Cause.

Note-The Fund Acknowledges Donation From Rs.3000/- Onwards. The Bank A/c Details is as follows -

A/c Name- Gajendra Nidhi Acharya Hasti Scholarship Fund
A/c No. 168010100120722
Bank Name & Address - AXIS BANK LTD. Anna Salai, Chennai(TN) IFSC Code - UTIB0000168
PAN No. - AAATG1995J
Note- Donation to Gajendra Nidhi are exempted u/s 80G of Income Tax Act 1961.

- For Scholarship Fund Details Please Contact M.Harish Kavad, Chennai (+91 95001 14455)

छात्रवृत्ति योजना में सदस्यता अभियान के सदस्य बनकर योजना की निरन्तरता को बनायें रखने में अपना अमूल्य योगदान कर पुण्यार्जन किया, ऐसे संघनिष्ठ, श्रेष्ठीवर्यों के नामों की सूची –

हीरक स्तम्भ सदस्य (5 लाख रुपये प्रति वर्ष)	स्वर्ण स्तम्भ सदस्य (1 लाख रुपये प्रति वर्ष)
श्रीमान् मोफतराज जी मुणोत, मुम्बई।	श्रीमान् दूलीचंद बाघमार एण्ड संस, चैन्नई।
युवारत्न श्री हरीश जी कवाड़, चैन्नई।	श्रीमान् दलीचंद जी सुरेश जी कवाड़, पून्नामल्लई।
श्रीमान् राजीव जी नीता जी डागा, ह्यूस्टन	श्रीमान् राजेश जी विमल जी पवन जी बोहरा, चैन्नई।
श्रीमान् रिखबचंद सा सुखानी, रायचूर (कर्नाटक)	श्रीमान् गणपत जी हेमन्त जी बाघमार, चैन्नई।
	श्रीमान् प्रेम जी कवाड़, चैन्नई।
	गुप्त सहयोगी, चैन्नई।
	श्रीमान् अम्बालाल जी बसंतीदेवी जी कर्नावट, चैन्नई।
	श्रीमान् सम्पतराज जी राजकंवर जी भंडारी, ट्रिपलीकेन–चैन्नई।
	गुप्त सहयोगी, चैन्नई।

सहयोग के लिए चैक या ड्राफ्ट कार्यालय के इस पते पर भेजें–

M. Harish Kumar Kavad - 5, Car Street, Poonamallee, **CHENNAI-600056** (TN)

छात्रवृत्ति योजना से संबंधित जानकारी के लिए सम्र्पक करें– मनीष जैन, चैन्नई **(Mob. +91 95430 68382)**

‘छोटा सा चिन्तन परिग्रह को हल्का करने का, लाभ बड़ा गुरु भाइयों को शिक्षा में सहयोग करने का’

Jai Guru Heera Jai Guru Hasti Jai Guru Maan

।। जैनं जयति शासनम्।।

With Best Compliments from:

Dharamchand Paraschand Exports
Paras Chand Hirawat
CC 3011-3012, Bandra Kurla Complex, Bandra (E),
Mumbai-400 098 (MH)
Tel. : +91 22 4018 5000
Email : dpe90@hotmail.com

KANTILAL SHANTILAL RAJENDRA LUNKER
PACHPADRA-PALI-ERODE
K.L. ASSOCIATES
'Sanskar', 177-B, Adarsh Nagar, Pali-306401 (Raj.)
Mobile : 094141-22757
135, N.M.S. Compound, ERODE-638001 (T.N.)
Tel. : 3205500 (O), Mobile : 093600-25001

BHANSALI GROUP
Dhanpatraj V. Bhansali
BHANSALI DEVELOPERS
Sharda Bhawan, 2nd Floor, Nandapatkar Road, Vile Parle (E),
Mumbai-400057 (MH) Tel. : 26185801, 32940462 (O),
E-mail : bhansalidevelopers@yahoo.com

S.D. GEMS & SURBHI DIAMONDS
Prakash Chand Daga
Virendra Kumar Daga (Sonu Daga)
FC51, Bharat-Diamond Bourse,
Bandra Kurla Complex,
Bandra (E), Mumbai-400098 (MH)
Ph. : 022-23684091, 23666799 (o), 022-28724429
Fax : 22-40042015, Mobile : 098200-30872
E-mail : sdgems@hotmail.com

Basant Jain & Associates, C.A.
BKJ & Associates, C.A.
BKJ Consulting Pvt. Ltd.,
Megha Properties Pvt. Ltd.
Ambition Properties Pvt.Ltd.
बसंत के जैन
अध्यक्षः श्री जैन रत्न युवक परिषद, मुम्बई
ट्रस्टी : गजेन्द्र निधि ट्रस्ट
601, Dalamal Chambers, New Marine Lines,
Mumbai - 400020 (MH)
Ph. : 022-22018793, 22018794 (o), 022-28810702

NARENDRA HIRAWAT & CO.
Launches
N.H. Studios **N.H. Jewells**
A-1502, Floor-15th, Plot-FP616(PT), Naman Midtown, Senapati Bapat Marg,
Near Indiabulls, Elphinstone (W), Mumbai-400013 (MH)
Web. www.nhstudioz.tv, Tel. : 022-24370713

!!Jai Guru Heera!! !!Jai Guru Hasti!! !!Jai Guru Man!!

LIFE
SHOULD NOT ONLY BE LIVED, IT SHOULD BE CELEBRATED!

ACHARYA SRI KAILASSAGARSURI GYANMANDIR
SRI MAHAVIR ... KENDRA
Koba, Gandhinagar-382 009
Phone : (079) 23276252, 23276204-0

With best compliments from:

C. R. Kothari & Sons Group of Companies

Stock Broking - DP-CDSIL-NBFC-Solar Power

Mumbai - Baroda - Jaipur - Ajmer

Pradeep Kothari
Sanjay Kothari

Hemant Kothari
Alok Kothari

स्वामी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के लिए प्रकाशक, मुद्रक - विनय चन्द डागा द्वारा दी डायमण्ड प्रिंटिंग प्रेस, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जौहरी बाजार, जयपुर राजस्थान से मुद्रित एवं सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, शॉप नं. 182 के ऊपर, बापू बाजार, जयपुर-3 राजस्थान से प्रकाशित। सम्पादक-डॉ. धर्मचन्द जैन